GUPTA CLASSES

UPPCS/Other State PCS Exam

सामान्य अध्ययन

(पर्यावरण)

Part-2

भौतिक साधनों से:- वर्तमान में, उपभोक्तावादी प्रवृत्ति के चलते मानव ने विभिन्न भौतिक वस्तुओं का सृजन किया और इनका बड़े पैमाने पर प्रयोग भी हो रहा है। इन भौतिक संसाधनों के अन्तर्गत फ्रीज, एयर कंडीशनर आदि आते हैं। इनमें प्रशीतक के रूप में क्लोरोफ्लोरो कार्बन का प्रयोग होता है। क्लोरोफ्लोरो कार्बन ओजोन क्षरण के लिए उत्तरदायी है।

विलायकों का प्रयोग:- फर्नीचरों की पॉलिस, स्प्रे पेन्ट आदि में कार्बनिक विलायकों का उपयोग होता है। ये कम ताप पर वाष्पित होने वाले द्रव हाइड्रोकार्बन होते हैं। उपयोग के समय भी ये वाष्पित होकर वायु में मिलकर उसे प्रदूषित करते हैं।

कृषि कार्यों द्वारा:- कृषि कार्यों में कीटनाशक रसायनों का प्रयोग लगातार बढ़ता जा रहा है। उत्पादकता वृद्धि के लिए आजकल कीटनाशक बहुत बारीक फुहारों से छिड़के जाते हैं। डीडीटी, बीएचसी आदि पाउडर भी छिड़के जाते हैं। ये सभी हानिकारक पदार्थ वायु में मिलकर वायु को जहरीला बना रहे हैं।

आण्विक विस्फोटों से:- द्वितीय विश्वयुद्ध के समय नाभिकीय हथियार ने एक ऐसे महादानव को जन्म दिया; जिसने आण्विक हथियारों की प्राप्ति के लिए अप्रत्याशित दौड़ प्रारम्भ कर दी। इस तकनीकि को हासिल करने के लिए विश्व के कई देशों ने हजारों परमाणु परीक्षण किये। परमाणु विस्फोटकों से वायु में हानिकारक रसायन व धूलकण नि:सृत होकर मिल जाते हैं।

वायु-विलय (Aerosol)

वायु-विलय ऐसे कण हैं, जो व्यास में एक सेंटीमीटर का एक करोड़वाँ हिस्सा हैं, जिसमें सल्फेट, कार्बन, जैव कार्बन तथा खनिज कण होते हैं जो प्राकृतिक रूप से तथा मानव क्रियाकलापों से पैदा हो सकते हैं। सामान्य तौर पर, लटकते पदार्थ या "सस्पेन्डेड मैटर" कहे जाने वाले वायु विलय की परिभाषा हवा में तैरने वाले सूक्ष्म तरल या ठोस कण के रूप में दी जाती है। 90 प्रतिशत वायुजनित विलय प्राकृतिक रूप से पैदा होने वाले कण; जैसे- धूलकण तथा ज्वालामुखी एवं समुद्री बौछार से निकले कण ही होते हैं। समग्र रूप से 10 प्रतिशत वायु-विलय के लिए मनुष्य जिम्मेदार हैं, मुख्यत: वाहनों से निकलने वाला धुएँ तथा औद्योगिक एवं बायोमास के जलने से ऐसा होता है।

वायु-विलय के स्रोत दो प्रकार के होते हैं:-

प्रथम-मुख्य वायुविलय:- छोटे-छोटे कणों के रूप में सीधे निकलते हैं, जैसे कि झाड़ी या जंगल में लगी आग से निकलता धुआँ, उद्योगों, वाहनों, ट्रेनों, हवाई जहाजों में जलने वाले जीवाश्म ईंधन से पैदा होने वाला कार्बन, वायु जनित धूलकण, समुद्री जल के सूखने पर लवण कण आदि।

द्वितीय-गौण वायुविलय:- वायु में होने वाली रासायनिक प्रतिक्रिया मुख्य गैसीय प्रदूषकों; जैसे- सल्फर डाईऑक्साइड तथा नाइट्रस ऑक्साइड को गैसों में परिवर्तित करती है जो कम वाष्पशील होते हैं। परिणामत: ये कणों के रूप में संघनित हो जाते हैं। उदाहरण के तौर पर, पावर संयंत्रों या अन्य उद्योगों से निकलने वाला सल्फर डाईऑक्साइड प्रदूषण, सल्फेट कणों के रूप में परिवर्तित हो जाता है। वन तथा समुद्री जीवों के उत्सर्जन से भी वायुमंडल में गौण वायु विलय पैदा होते हैं। इस तरह पैदा होने वाले उत्पाद नये कणों के रूप में परिवर्तित होते हैं या मौजूदा कणों पर संघनित होते हैं। ये छोटे कण 0.01 माइक्रोमीटर से लेकर सैंकड़ों माइक्रोमीटर तक हो सकते हैं। उदाहरण के तौर पर, सिगरेट के धुएँ से निकले कण मध्यम आकार के होते हैं जबकि बादल की बूँदों का व्यास 10 या उससे अधिक माइक्रोमीटर का होता है। सामान्य परिस्थितियों में अधिकांश वायु-विलय (एरोसोल) निचले वायुमंडल में हल्की धुन्ध की तरह छाए रहते हैं जो लगभग एक सप्ताह में बारिश में घुल जाते हैं। दूसरी तरफ, ज्वालामुखी के भयंकर विस्फोट से ऊपरी वायुमंडल में भारी मात्रा में वायु-विलय फैल जाते हैं। चूंकि यह बारिश के रूप में नहीं बरसते हैं, अत: ये वायु विलय वहाँ पर महीनों रह जाते हैं।

वायु-विलय के स्रोत

औद्योगिक धूलकण

परिवहन, कोयले के जलने, सीमेन्ट उत्पादन, धातुकर्मीय तथा अपूर्ण भस्मीकरण औद्योगिक धूलकण के स्रोत हैं।

धूलकण

उपोष्ण तथा उष्णकटिबंधीय क्षेत्रों में वायु विलय के स्रोत के रूप में धूलकण होते हैं। 50 प्रतिशत वायु-विलय अस्त-व्यस्त मृदा सतहों से उत्पन्न होते हैं।

कार्बन जनित वायु-विलय

कार्बन यौगिक जिसमें मुख्य रूप से जैव वस्तुएँ तथा कार्बन के विभिन्न रूप शामिल होते हैं, वायुमंडलीय वायु-विलय का एक बड़ा अंश होता है। बायोमास तथा जीवाश्म ईंधन के जलने से ऐसे वायु-विलय का एक बड़ा अंग होता है। बायोमास तथा जीवाश्म ईंधन के

जलने से ऐसे वायु-विलय उत्पन्न होते हैं जो सबमाइक्रॉन आकार में होते हैं। अपूर्ण दहन प्रक्रिया से कार्बन वायु-विलय बनते हैं। जैविक वायु-विलय तब पैदा होते हैं, जब वायुमंडल में बायोजेनिक हाइड्रोकार्बन की प्रतिक्रिया ऑक्सीजन के साथ होती है।

समुद्री लवण

समुद्री क्षेत्रों में तेज तूफान के कारण उड़े समुद्री लवण वायु-विलय मुख्य रूप से हल्के बिखराव (विसरण) व बादल बनने के लिए उत्तरदायी होते हैं।

प्राथमिक बायोजेनिक वायु-विलय

इसमें पादप अवशेष तथा सूक्ष्म जीवों के कण; जैसे- बैक्टीरिया वायरस, एल्गी तथा परागकण शामिल होते हैं।

सल्फेट:- ये वायु-विलय सल्फर डाईऑक्साइड जैसी गैसों की रासायनिक प्रतिक्रिया से पैदा होते हैं, एन्थ्रोपोजेनिक स्रोतों जैसे-विभिन्न माध्यमों से जीवाश्म ईंधनों का जलना, ज्वालामुखी से वातावरण में प्रविष्ट होते है।

नाइट्रेट्स:- कुछ समय पूर्व तक नाइट्रेट को वायु-विलय के रूप में नहीं लिया जाता था; परन्तु इसकी गंभीरता वर्तमान समय में काफी बढ़ गयी है क्योंकि सल्फर डाइ ऑक्साइड उत्सर्जन में कमी के बावजूद नाइट्रोजन के ऑक्साइडों के उत्सर्जन में तिगुनी वृद्धि का अनुमान है।

वायु-विलय (एरोसोल) का प्रभाव

वैश्विक ऊष्मन की भांति बढ़ता वायु विलय या एरोसोल एक वैश्विक समस्या है। वायु-विलय के प्रभावों को निम्नलिखित रूप में देख सकते हैं-

- 2.5 माइक्रोमीटर तक के छोटे कणों को अब मानव स्वास्थ्य के लिए अत्यधिक हानिकारक समझा जाता है क्योंकि ये छनन तंत्रों (Purifier system) से निकलकर फेफड़े तक पहुँच सकते हैं। इससे फेफड़े के ऊतक सीधे संक्रमित हो सकते हैं और ये फेफड़े की आंतरिक सतह पर फैल जाते हैं जो इसकी कार्यक्षमता कम कर देते हैं।
- वायुमंडल में हाइड्रॉक्सिल रैडिकल, जो निचले वायुमण्डल में मौजूद एक प्रमुख ऑक्सिडाइजिंग रसायन है, की मात्रा कम करके वायु विलय वायुमंडल को स्वच्छ रखने की दक्षता को प्रभावित करते हैं।
- कम हानिकारक प्रदूषणों में अधिक समय तक रहने से फेफड़ों की स्क्रीनिंग क्षमता प्रभावित होती है तथा श्वसन प्रक्रिया पंगु हो सकती है। उदाहरण के तौर पर, सूक्ष्म कण फेफड़े में पहुँचकर एल्व्योली (Alveoli) को नुकसान पहुँचाते हैं जिससे हानिकारक साइटोकिनेस निकलता है जो रक्त को गाढ़ा बना देता है। इसके परिणामस्वरूप वयस्कों, युवाओं तथा हृदयरोगियों में दमा हो सकता है या हृदय आघात की भी संभावना होती है।

वायु प्रदूषण (Air Pollution)

वायु प्रदूषण के अनेक स्रोत बताए गए हैं:- कार्बन डाईऑक्साइड, कार्बन मोनोऑक्साइड, सल्फर डाईऑक्साइड, नाइट्रोजन के ऑक्साइड, सस्पेंडेड पार्टिक्यूलेट मैटर, हाइड्रोकार्बन और धातु तत्व तथा खनिज ईंधन; जैसे- कोयले के जलने से उत्पन्न होते हैं। इसके अतिरिक्त रासायनिक खाद बनाने से यूरिया की धूल, पेट्रोल दहन से सीसा, एल्युमिनियम उत्पादनों से फ्लोराईड्स, आणविक ऊर्जा संयंत्रों से रेडियोधर्मिता आदि उत्पन्न होते हैं।

कार्बन मोनोऑक्साइड

कार्बन मोनोऑक्साइड कोयले के दहन एवं गैसोलिन इंजनों से निकलता है। वास्तव में कार्बन मोनोऑक्साइड की बड़ी मात्रा नगरीय क्षेत्रों में चलने वाले लाखों ऑटोमोबाईल वाहनों के आन्तरिक दहन के द्वारा वायुमंडल में छोड़ी जाती है। यह तापीय विद्युत संयंत्रों में कोयले के दहन के परिणामस्वरूप बड़ी मात्रा में उत्पन्न होती है।

- कार्बन मोनोऑक्साइड रक्त की ऑक्सीजन धारण क्षमता को कम कर देती है।
- यह मानव रक्त में हीमोग्लोबिन के साथ संलग्न होकर कार्बोक्सी हीमोग्लोबिन बनाता है, जो कि ऑक्सीजन के परिवहन को नुकसान पहुँचाता है।
- रक्त में 2-5 प्रतिशत कार्बोक्सी हीमोग्लोबिन की उपस्थिति भी शरीर के तंत्रिका तंत्र की सामान्य क्रियाविधि को प्रभावित कर देती है और ऐसा सिर्फ 30ppm कार्बन मोनोऑक्साइड युक्त हवा को श्वास में लेने के पश्चात् ही होने लगता है।

सल्फर डाईऑक्साइड

कोयला तथा जीवाश्म ईंधनों के दहन से बड़ी मात्रा में सल्फर डाईऑक्साइड नि:सृत होती है। सल्फर डाईऑक्साइड सूर्य के प्रकाश के साथ क्रिया करके सल्फर ट्राइऑक्साइड (SO_3) का निर्माण करती है। फिर सल्फर ट्राइऑक्साइड नमी के साथ क्रिया करके सल्फ्यूरिक अम्ल (H_2SO_4) का निर्माण करती है, जो धातुओं के क्षरण, यहाँ तक कि संगमरमर के क्षरण के लिए जाना जाता है। सल्फ्यूरिक अम्ल वर्षा जल के साथ घुलकर उसे और अम्लीय बना देता है।

Note

सल्फर डाईऑक्साइड एक रंगहीन गैस है, जिसकी एक उत्तेजक गंध होती है। इसका अधिकांश भाग सल्फर-युक्त कोयले के पावर प्लांटों में उत्पादन से तथा तेल रिफाइनरी एवं सल्फाइड अयस्क के पिघलने से प्राप्त होता है।

- अम्लीय वर्षा वनस्पतियों के लिए अत्यंत घातक है। इससे नदियां और झीलें अम्लीय हो जाती हैं, जिनके परिणामस्वरूप उनमें निवास करने वाले जीव नष्ट हो जाते हैं।
- सल्फर डाईऑक्साइड गले और आँखों में उत्तेजना, सीने में जकड़न, सिर दर्द, उल्टी एवं मृत्यु का कारण बनता है।
- सल्फर डाईऑक्साइड कृषि, विशेषकर बागानी फसलों को भारी क्षति पहुँचाती है।

नाइट्रोजन डाईऑक्साइड

विभिन्न जीवाश्म ईंधनों के दहन से गैसीय नाइट्रोजन (N_2), ऑक्सीजन (O_2) के साथ अभिक्रिया करके नाइट्रिक ऑक्साइड (NO) बनाता है, जो शीघ्र ही एक भूरे रंग की एक गैस, नाइट्रोजन डाईऑक्साइड में परिवर्तित हो जाता है।

नाइट्रोजन के ऑक्साइडों का प्रमुख स्रोत वाहनों से निकलने वाला धुआँ, कोयले का दहन और अम्ल निर्माण है। इसके अतिरिक्त नाइड्रोजन डाईऑक्साइड (N_2O) उर्वरकों व मवेशियों के अपशिष्ट से भी निकलती है।

- नाइट्रोजन के ऑक्साइड रोमक क्रियाओं (Cilia Action) को रोकते हैं, जिससे धूल एवं कालिख फेफड़ों को प्रभावित करते हैं और श्वास नली-शोथ (Bronchitis) एवं अन्य श्वास संबंधी बीमारियाँ उत्पन्न हो जाती हैं।
- नाइट्रोजन ऑक्साइड आँखों, नाक, गला और फेफड़े में उत्तेजना पैदा करता है तथा अस्थमा के लिए उत्तरदायी होता है।
- नाइड्रोजन ऑक्साइड नाइट्रिक अम्ल एवं नाइट्रेट लवण में बदलने पर पादप वृद्धि को भी अवरूद्ध करता है।
- यह अम्लीय एवं आर्द्र दशाओं में स्मॉग के निर्माण में भी महत्त्वपूर्ण भूमिका निभाता है।

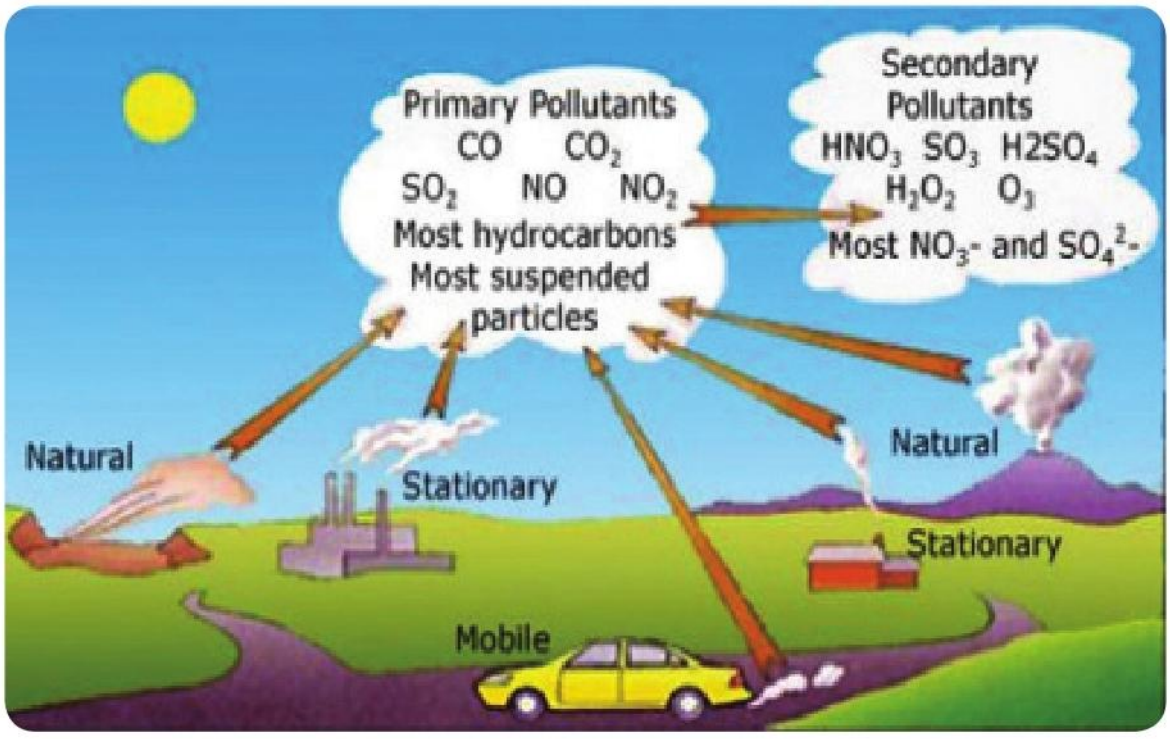

हाइड्रोकार्बन्स

जीवाश्म ईंधनों के अपूर्ण दहन से अनेक प्रकार के हाइड्रोकार्बन उत्सर्जित होते हैं। कुछ हाइड्रोकार्बन फोटोकेमिकल स्मॉग के निर्माण में महत्त्वपूर्ण भूमिका निभाते हैं जबकि उनमें से कुछ अन्य कैंसर जनित भी माने जाते हैं।

फोटोकेमिकल ऑक्सीडेन्ट्स

वायु में उपर्युक्त प्राथमिक प्रदूषकों की सूर्य के प्रकाश की उपस्थिति में प्रतिक्रिया के फलस्वरूप कुछ गौण प्रदूषकों की उत्पत्ति होती है। इन प्रतिक्रियाओं का सबसे महत्त्वपूर्ण परिणाम प्रकाश रासायनिक स्मॉग (Photochemical Smog) है। जब नाइट्रोजन के ऑक्साइड्स और हाइड्रोकार्बन सूर्य की उपस्थिति में क्रिया करते हैं, तो ये दो गौण प्रदूषकों का निर्माण करते हैं। कोहरा युक्त दिनों में ये रसायन वायुमंडल में उपस्थिति रहते हैं और विविक्त पदार्थों द्वारा अवशोषित हो जाते है। इनके द्वारा जीवों पर विपरीत प्रभाव पड़ता है।

संयुक्त राष्ट्र पर्यावरण सभा का चौथा सत्र-2019

हाल ही में संयुक्त राष्ट्र पर्यावरण सभा के चौथे सत्र की बैठक 11 से 15 मार्च के मध्य केन्या के नैरोबी में आयोजित की गई। इस सम्मेलन की थीम "पर्यावरणीय चुनौतियों तथा सतत् उपभोग व उत्पादन हेतु अभिनव समाधान" (Innovative Solution for Environmental Challenges and Sustainable Consumption and Production)।

- भारत ने 'सतत् नाइट्रोजन प्रबंधन' से संबंधित महत्त्वपूर्ण संकल्प की अगुवाई की।

सतत् नाइट्रोजन प्रबंधन

बैठक के दौरान संयुक्त राष्ट्र पर्यावरण सभा (UNEA-4) ने 'सतत् नाइट्रोजन प्रबंधन' से जुड़ा एक प्रस्ताव पारित किया।

भारत के नेतृत्व में पहली बार प्रस्तावित किया गया यह संकल्प विभिन्न हितधारकों को यह भरोसा दिलाने में सफल रहा कि कार्बन की तरह ही नाइट्रोजन के लिए भी एक अन्तर्राष्ट्रीय समन्वय स्थापित किया जा सकता है।

यह संकल्प स्थलीय, जलीय और समुद्री वातावरण पर प्रतिक्रियाशील नाइट्रोजन के मानवीय उत्सर्जन के कारण उत्पन्न प्रदूषण के खतरों की पहचान करता है। हालांकि इसने खाद्य और ऊर्जा उत्पादन के लिए नाइट्रोजन के उपयोग के लाभों को भी रेखांकित किया।

स्मरणीय है कि प्रतिक्रियाशील नाइट्रोजन (Reactive Nitrogen) का वैश्विक उपयोग बेहद अकुशल है क्योंकि उपयोग किए गए सभी नाइट्रोजन का 80% भाग पयार्वरण में अवशोषित हो जाता है जिससे मानव स्वास्थ्य को प्रभावित करने वाले प्रदूषण से लेकर ग्रीन हाउस गैस उत्सर्जन जैसे प्रभावों का सामना करना पड़ता है।

वायु प्रदूषण के प्रभाव

अन्य प्रदूषण की अपेक्षा वायु प्रदूषण सर्वाधिक दुष्प्रभावकारी होता है क्योंकि वायु प्रदूषण वायु के साथ दूर-दूर तक आसानी से फैलता है। इससे मानव स्वास्थ्य, वनस्पति, अन्य जीव-जन्तुओं, पर्यावरण सभी पर विपरीत प्रभाव पड़ता है। वायु प्रदूषण से पड़ने वाले प्रभावों को हम निम्नलिखित रूप में देख सकते हैं-

वनस्पतियों पर प्रभाव

कुछ गैसीय प्रदूषक जब पत्तों के छिद्रों में पहुँचते हैं तो फसली पौधों के पत्तों को हानि पहुँचाते हैं। वायु प्रदूषकों से पत्तों का लम्बा संपर्क उनकी उस चिकनी सतह को नष्ट कर सकता है, जो पानी की अत्यधिक हानि को रोकने में सहायक है और इसके कारण रोगों, कीड़ों, सूखे और पाले से पत्तों को नुकसान हो सकता है। वायु प्रदूषकों से लगातार संपर्क प्रकाश-संश्लेषण और पौधों की वृद्धि में बाधा डालता है, पोषक तत्वों की ग्रहण क्षमता कम करता है और पत्तों को पीला या भूरा बना देता है या फिर वे एकदम से गिर पड़ते हैं। इनके छिद्र हाइड्रोकार्बन, तेल से अवरूद्ध हो जाते हैं जिससे प्रकाश-संश्लेषण व वाष्पोत्सर्जन दोनों क्रियाओं पर प्रभाव पड़ता है। अधिक वाहनों वाले स्थानों या शहरों में सड़क के किनारे स्थित पेड़ों की पत्तियाँ काली परत से ढँक जाती हैं जिससे उनकी कार्बन डाईऑक्साइड के अवशोषण की क्षमता पर नकारात्मक प्रभाव पड़ता है।

मानव स्वास्थ्य पर प्रभाव

वायु प्रदूषण का मानव स्वास्थ्य से प्रत्यक्ष संबंध है क्योंकि मानव द्वारा श्वसन क्रिया के दौरान जो वायु ग्रहण की जाती है, यदि वह दूषित हो, तो इसका सीधा प्रभाव स्वास्थ्य पर होता है। यदि वायु में कार्बन-मोनोऑक्साइड उपस्थित है, तो वह रक्त के हीमोग्लोबिन के साथ मिलकर कार्बोक्सी हीमोग्लोबिन बनाती है।

कार्बन-मोनोऑक्साइड (CO), ऑक्सीजन (O_2) की तुलना में, 200 गुना अधिकता से हीमोग्लोबिन के साथ क्रिया करती है। अत: कार्बन मोनोऑक्साइड की थोड़ी सी मात्रा भी, रक्त को खराब करने के लिए काफी है। यदि शरीर में इसकी अधिकता हो जाए तो व्यक्ति की मृत्यु भी हो जाती है।

सल्फर डाईऑक्साइड, नाइट्रोजन के ऑक्साइड, खासकर नाइट्रोजन ऑक्साइड (NO) तथा वायु में निलंबित कण हमारी श्वासनली में अवरोध उत्पन्न करते हैं जिससे ब्रोंकाइटिस या दमा होता है। इन कणों से लम्बा संपर्क फेफड़ों के ऊतकों को हानि पहुँचाता है तथा सांस की असाध्य बीमारियों और कैंसर को जन्म देता है।

अनेक वाष्पशील कार्बनिक यौगिक (जैसे:- बेंजीन और फार्मेल्डिहाइड) और विषैले कण (जैसे:- सीसा और कैडमियम) विकारों, प्रजनन संबंधी समस्याओं को जन्म दे सकते हैं। ओजोन, जो प्रकाश-रासायनिक धूम कुहरे (Photochemical Smog) का एक घटक है, यदि बार-बार सांस में जाए, तो खांसी, छाती में दर्द, सांस में तकलीफ और आँखों, नाक और गले में जलन जैसी शिकायतें पैदा हो सकती हैं।

अर्बन हीट

भारत वैसे तो आज भी गाँवों का देश कहलाता है। देश की करीब 60 प्रतिशत आबादी गाँव-देहात में ही रहती है। लेकिन रोजगार और विकास की तेज रफ्तार की माँग के चलते देश में शहरों की संख्या और आकाश भी तेजी से बढ़ रहा है। गाँव-कस्बों के मुकाबले बेहतर इंफ्रास्ट्रक्चर, शानदार जनसुविधाओं और रोजगार व अवसरों के केन्द्र के रूप में शहर बसाए और बनाए ही इस उद्देश्य से जाते हैं कि वहाँ रहने व बसने वाले लोगों को एक अच्छी जीवनशैली के साथ जीने का मौका मिले। पर अब शहर ही दुनिया के लिए मुसीबत बनते जा रहे हैं।

इस शहरी लू पर एक नजर पिछले वर्ष 2018 में तब गई थी, जब यूएस जर्नल 'प्रोसीडिंग्स ऑफ द नेशनल अकेडमी ऑफ साइंसेज' ने दुनिया के 44 शहरों के बढ़ते तापमान पर एक रिपोर्ट प्रकाशित की थी। इस शोध रिपोर्ट में दक्षिण एशिया के 6 महानगरों में पैदा होने वाली शहरी लू (अर्बन हीट) पर फोकस करते हुए बताया गया था कि वर्ष 1979 से 2005 के बीच जिस कोलकाता शहर में सालाना 16 दिन भयंकर लू चलती थी, अब वहाँ ऐसे दिनों की संख्या बढ़कर 44 तक हो गई है। इसी शोध में दावा किया गया था कि दिल्ली-मुंबई-कोलकाता जैसे महानगरों की करोड़ों की आबादी के सामने आने वाले वक्त में शहरी लू झेलने का खतरा चार गुना तक बढ़ गया है। इसमें एक चेतावनी भी दी गयी थी कि अब शहर वासियों को इस अर्बन हीट के साथ रहने और लगातार उसके खतरे को सहन करना सीखना होगा। सवाल यह है कि आखिर बड़े शहरों या महानगरों में ऐसा क्या है, जो वहाँ प्राकृतिक रूप से पैदा होने वाली गर्मी या लू के मुकाबले कई गुना ज्यादा गर्मी पैदा हो रही है। गंभीर बात यह भी है कि इस शहरी लू के लिए मई-जून का मौसम ही जरूरी नहीं रह गया है, बल्कि यह घोर सर्दी में भी अपना असर दिखा सकती है।

शहरी लू का एक अहसास वर्ष 2018 की शुरूआत में भी तब हुआ था, जब सर्दियों के दौरान देश की राजधानी दिल्ली समेत उत्तर भारत के कई शहरों में कोहरे का प्रकोप कम रहा है। वैज्ञानिकों ने इसकी वजह जानने की कोशिश की कि आखिर हर सर्दियों में छाए रहने वाले प्राकृतिक कोहरे का असर बड़े शहरों पर कम क्यों हुआ, जबकि वाहनों से निकलने वाले धुएँ (स्मॉग) की मात्रा इस दौरान बढ़ गई। इस बारे में अमेरिकन जियोफिजिकल यूनियन के जियोफिजिकल रिसर्च लेटर जर्नल में एक रिसर्च पेपर 'अर्बन हीट आईलैंड ओवर दिल्ली पंचेज होल्स इन वाइडस्प्रेडफॉग इन द इंडो-गैंगेटिक प्लेन्स' शीर्षक से प्रकाशित हुआ। इसमें बताया गया था कि देश की राजधानी दिल्ली में पिछले 17 सालों के मुकाबले प्राकृतिक कोहरे का सबसे कम असर इसलिए हुआ क्योंकि यहाँ पैदा हुए प्रदूषण और गर्मी ने कोहरे में छेद कर दिए थे। सिर्फ दिल्ली ही नहीं, दुनिया भर के शहरों में शहरी प्रदूषण के कारण सर्दियों में कोहरे की सघनता में भारी कमी देखी गई। आईआईटी, मुम्बई और देहरादून ने अमेरिकी स्पेस एजेंसी नासा के 17 सालों के उपग्रह डाटा का विश्लेषण कर कोहरा छांटने की प्रक्रिया को 'फॉग होल' की संज्ञा देते हुए बताया था कि दिल्ली में जनवरी, 2018 में 90 से ज्याद फॉग होल हो गए थे। शोधकर्त्ताओं ने कहा था कि शहरों की गर्मी कोहरे को जला रही है जिसकी वजह से ग्रामीण इलाके के मुकाबले शहरों का तापमान 4 से 5 डिग्री ज्यादा हो जाता है। इस शहरी लू के पीछे जिम्मेदार कारकों का भी पता लगाया गया। बताया गया कि शहरों में तेजी से हो रहे आवासीय विस्तार तथा औद्योगीकरण से हरित पट्टी (ग्रीन लेयर) में तेजी से गिरावट आयी है।

शहरों की गर्मी का एक आंकलन 2017 में पुणे स्थित भारतीय मौसम विभाग की इकाई और इंडियन इंस्टीट्यूट ऑफ ट्रॉपिकल मेटरोलॉजी ने भी हीट इंडेक्स के रूप में किया था। इस इंडेक्स में तापमान में होने वाली घट-बढ़ के कारण इंसानों पर पड़ने वाले असर दर्शाए गए थे। इस आंकलन में कहा गया था कि देश के ज्यादातर शहरों में मानसूनी वर्षा से लेकर गर्मी और नमी की अतिरंजनाएँ दिखने लगी हैं जो पूरे पारिस्थितिकी तंत्र को प्रभावित कर रही हैं। इस आंकलन का सबसे अहम इशारा यह था कि शहरी गर्मी या शहरी लू के कारण ये शहर ऐसे द्वीपों में बदल गए हैं, जहाँ मौसम के अतिरेक लोगों के रहन-सहन को प्रभावित करने की स्थिति में आ गए हैं।

ओजोन पर प्रभाव

इसके अतिरिक्त वायुमंडल में क्लोरोफ्लोरो कार्बन की अधिकता के कारण ओजोन परत का क्षरण हो रहा है, जिसके कारण पराबैंगनी किरणों के बढ़ने पर त्वचा का जलना, मोतियाबिन्द व त्वचा कैंसर जैसे रोग उत्पन्न हो जाते हैं।

जलवायु पर प्रभाव

प्रदूषण से होने वाले वायुमंडलीय परिवर्तन विश्वव्यापी उष्णता के लिए उत्तरदायी हैं। यह ऐसी परिघटना है जो कार्बन डाईऑक्साइड , नाइट्रोजन ऑक्साइडों, मीथेन और क्लोरोफ्लोरो कार्बन जैसी कुछ गैसों का संकेन्द्रण बढ़ने से उत्पन्न होती है। पृथ्वी पर किए गए अनुसंधानों के रूप से पता चलता है कि वायुमंडल के जलवाष्प, कार्बन डाईऑक्साइड, मीथेन, नाइट्रोजन ऑक्साइड और क्लोरोफ्लोरोकार्बन जैसे घटक पृथ्वीतल के निकट अवरक्त (Infrared) विकिरण के रूप में गर्मी सोखते हैं।

हीट-ट्रैपिंग ग्रीनहाउस

अमेरिकन मेट्रोलॉजिकल सोसाइटी द्वारा तैयार रिपोर्ट वैसे तो और भी बहुत कुछ कहती है, पर इसमें सबसे ज्यादा उल्लेखनीय संकेत शहरीकरण के रूप में की जा रही मानव गतिविधियों का है जो मौसम और आम जनजीवन के उलटफेर के नतीजे के रूप में सामने आती हैं। आज की सच्चाई यही है कि दिल्ली-मुम्बई समेत देश के 23 शहरों की करीब 12 करोड़ आबादी की जरूरतों के मद्देनजर शहरीकरण और उसकी जरूरतों ने शहरों को हीट-ट्रैपिंग ग्रीनहाउस, आसान शब्दों में कहें, तो ऐसे हीट और गैस चैंबरों में बदल डाला है जो मौसम की अतियों का कारण बन रहे हैं। ये शहर क्यों ऐसे बन गए हैं, इसकी कुछ स्पष्ट वजहें हैं। जैसे- कम जगह में ऊँची इमारतों का अधिक संख्या में बनना और उन्हें ठण्डा, जगमगाता व साफ-सुथरा रखने के लिए बिजली का अंधाधुंध इस्तेमाल करना। घरों-दफ्तरों की इमारतों को अंदर से वातानुकूलित रखने वाले एयरकंडीशनर और खाने-पीने की चीजों को ठण्डा रखने वाले रेफ्रीजरेटर कितनी ज्यादा गर्मी अपने आस-पास के इलाके में फेंकते हैं, इसका अंदाजा इनके पास खड़े रहने से हो जाता है। अगर किसी शहर में एक वक्त में लाखों-करोड़ों एयर कंडीशनर-रेफ्रिजरेटर (एसी-फ्रिज) चल रहे हों, पेट्रोल-डीजल से चलने वाली लाखों कारें ग्रीनहाउस धुएं के साथ गर्मी भी वातावरण में घोल रही हों, तो शहरों में नकली रूप से पैदा होने वाली इस लू की संहार क्षमता का अंदाजा लगाया जा सकता है।

विश्व स्वास्थ्य संगठन (डब्ल्यूएचओ) और यूएन-हैबिटेट द्वारा संयुक्त रूप से किए गए एक अध्ययन की रिपोर्ट में बताया गया है कि शहरों की इमारतों व घरों को रोशन करने, उन्हें ठण्डा रखने व पानी को शीतल करने के उपकरणों (एयरकंडीशनर, रेफ्रिजरेटर, वॉटर कूलर आदि) के इस्तेमाल और कारों के प्रयोग की वजह से शहरी इलाकों के औसत तापमान में 1 से 3 डिग्री सेल्सियस की बढ़ोत्तरी हो जाती है। ये उपकरण अपने आस-पास के माहौल में बेतहाशा गर्मी झोंकते हैं जो मई-जून जैसे गर्म महीनों में शहरों को और ज्यादा गर्म कर देते हैं।

अम्ल वर्षा

अम्ल वर्षा प्राकृतिक तथा मानव निर्मित दोनों स्रोतों से होने वाली परिघटना है। अम्ल वर्षा का निर्माण तब होता है जब कुछ वायुमंडलीय गैसें, जैसे कि कार्बन डाईऑक्साइड, वातावरण में या धरातल पर पानी के साथ संबद्ध होती हैं। बारिश में घुलने वाली कार्बन-डाईऑक्साइड (CO_2) को कमजोर एसिड (कार्बोनिक एसिड) में परिवर्तित किया जाता है, जबकि सल्फर और नाइट्रोजन के ऑक्साइड सुदृढ़ एसिड (Solid Acid) सल्फ्यूरिक और नाइट्रिक एसिड होते हैं। अम्ल (Acid) के दो स्रोत महत्त्वपूर्ण हैं, जो इस प्रकार हैं- प्रथम, प्राकृतिक प्रक्रियाएं, ज्वालामुखियों और जैविक प्रक्रियाओं से भूमि पर, आकाश और महासागरों में होने वाले उत्सर्जन। ऐसे उत्सर्जन मात्रा में अपेक्षाकृत छोटे होते हैं और प्रकृति उन्हें अवशोषित कर सकती है।

द्वितीय, मानव गतिविधियाँ औद्योगिक और ऊर्जा उत्पादन संयंत्रों तथा परिवहन वाहनों से उत्सर्जन। वास्तव में कोयले, तेल और (कुछ हद तक) प्राकृतिक गैस के जलने से सल्फर, नाइट्रस ऑक्साइड तथा सॉलिड एसिड जैसी गैसों का उत्पादन होता है। मानव जनित विभिन्न स्रोतों से सल्फर तथा कार्बन जैसे तत्वों की मात्रा लगातार बढ़ रही है।

हाल के दशकों में न केवल यह एक गंभीर समस्या बनकर उभरी, अपितु इसने एक वैश्विक रूप भी धारण किया है। अम्लीय अवसाद के हानिकारक प्रभाव होते हैं, खासकर जब भू-स्थलीय प्राणियों के लिए pH 5.5 से नीचे गिर जाए। इससे मनुष्यों को ब्रोंकाइटिस और अस्थमा जैसे रोग हो सकते हैं।

वायु प्रदूषण स्वास्थ्य के लिए तीसरा सबसे बड़ा खतरा बन गया है। अमेरिका स्थित हेल्थ इफेक्ट इंस्टीट्यूट (एचईआई) और इंस्टीट्यूट ऑफ हेल्थ मेट्रिक्स एण्ड इवेल्यूएशंस (आईएचएमई) की ओर से जारी स्टेट ऑफ ग्लोबल एयर, 2019 रिपोर्ट के अनुसार,

दूषित वायु धूम्रपान से भी ज्यादा मौतों का कारण बन रही है। वायु प्रदूषण के कारण 2017 में दुनियाभर में 49 लाख मौतें हुई हैं। कुल मौतों में 8.7 प्रतिशत योगदान वायु प्रदूषण का रहा।

भारत में वायु प्रदूषण के कारण 2017 में 12 लाख लोगों ने जान गंवाई है। यह आउटडोर (बाहरी), हाउसहोल्ड (घरेलू) वायु और ओजोन प्रदूषण का मिलाजुला नतीजा है। इन 12 लाख मौतों में से 6,73,100 मौतें आउटडोर पीएम-2.5 की वजह से हुईं, जबकि 4,81,700 मौतें घरेलू वायु प्रदूषण के चलते हुईं। भारत के अलावा चीन में 12 लाख, पाकिस्तान में एक लाख 28 हजार, इंडोनेशिया में एक लाख 24 हजार, बांग्लादेश में एक लाख 28 हजार, नाइजीरिया में एक लाख 14 हजार, अमेरिका में एक लाख आठ हजार, रूस में 99 हजार, ब्राजील में 66 हजार और फिलीपींस में 64 हजार मौतों की वजह दूषित वायु बनी है। वायु प्रदूषण दुनियाभर में बीमार लोगों की संख्या में बेतहाशा वृद्धि कर रहा है।

ओजोन प्रदूषण पिछले एक दशक में बड़ा खतरा बनकर उभरा है। साल 2017 में ओजोन प्रदूषण के कारण दुनियाभर में करीब पाँच लाख लोगों की समय से पूर्व मौत हुई। 1990 के बाद इसमें 20 प्रतिशत इजाफा हुआ है और ज्यादातर इजाफा पिछले दशक के दौरान हुआ है।

महत्त्वपूर्ण तथ्य

- आनुवांशिक इंजीनियरी का उपयोग जैवोपचारण के लिए, विशेषत: अभिकल्पित सूक्ष्म जीवों को सृजित करने के लिए किया जाता है।
- मानवीय या प्राकृतिक कारणों से वायुमंडल में उपस्थित गैसों के निश्चित अनुपात में अवांछनीय परिवर्तन को वायु प्रदूषण कहते हैं।
- फ्लाई ऐश एक सूक्ष्म पाउडर होता है जो वायु के साथ दूर तक उड़ा करता है। इसमें सीसा, आर्सेनिक, कॉपर जैसी जहरीली, भारी धातुओं के कण भी होते हैं।
- ऑयलजैपर तेलीय पंक तथा बिखरे हुए तेल के उपचार हेतु पारिस्थितिकी के अनुकूल विकसित प्रौद्योगिकी है।
- सल्फर डाईऑक्साइड को क्रैकिंग गैस भी कहते हैं क्योंकि यह लगातार पत्थर पर प्रवाहित की जाए, तो पत्थर क्षत-विक्षत हो जाता है।
- भारत में बढ़ते वायु प्रदूषण को देखते हुए भारत सरकार ने (BS-IV) नियम से सीधे (BS-VI) मानक को लागू करने का विचार किया है।
- धूम्र कोहरा (Smog) धुएं और कोहरे का मिश्रण होता है इसमें मुख्य तत्त्व ओजोन होता है।
- भोपाल गैस त्रासदी (3 दिसंबर, 1984) मिथाइल आइसोसाइनेट गैस लीक होने के कारण घटित हुई।
- कैडमियम प्रदूषक से इटाई-इटाई रोग तथा हडिड्यों एवं जोड़ों में तीव्र दर्द होता है, यकृत एवं फेफड़े का कैंसर भी हो जाता है।
- नाइड्रोजन ऑक्साइड प्रकाश-रासायनिक धूम्र कोहरे के बनने के समय उत्पन्न होता है।
- पेरॉक्सिल मूलक या तो ऑक्सीजन के अणुओं या ओजोन (O_3) तथा नाइट्रोजन डाईऑक्साइड (NO_2) से मिलकर पेरॉक्सीएसीटिल नाइट्रेट का निर्माण करते हैं।
- पेरॉक्सीएसीटिल नाइट्रेट मनुष्यों की आँखों में बहुत ज्यादा जलन या उत्तेजना पैदा करने वाला पदार्थ है।
- जल में जैविक तथा अजैविक दोनों प्रकार के पोषक तत्त्वों की वृद्धि होने की घटना को सुपोषण कहते हैं।
- एक्वाहॉलिक में एक कैंसर जनक पदार्थ 'कारसिनोजेन' होता है जो यकृत कैंसर उत्पन्न करता है।
- अंतर्राष्ट्रीय अम्ल वर्षा सूचना केंद्र मैनचेस्टर में स्थापित किया गया है।
- 'नॉक-नी संलक्षण' फ्लुओराइड के प्रदूषण द्वारा उत्पन्न होता है।
- रेडॉन एक रंगहीन, गंधहीन रेडियोएक्टिव अक्रिय गैस है।
- सिगरेट के धुएं से 'कार्बन मोनोऑक्साइड' व बेन्जीन उत्सर्जित होते हैं।
- विश्व स्वास्थ्य संगठन के अनुसार, ध्वनि की उच्चता का स्तर दिन एवं रात्रि में 45 dB, 35 dB निश्चित किया है।
- पेयजल में फ्लुओराइड अधिक होने के कारण दाँत एवं हड्डियां कमजोर हो जाती हैं।
- एनीमिया, सिर दर्द, माँसपेशियों की कमजोरी एवं मसूड़ों में नीलापन आदि सीसायुक्त जल के सेवन के कारण होता है।
- नवजात शिशुओं में ब्लू बेबी सिंड्रोम (मिथेमोग्लोबीनेमिया) पेयजल में नाइट्रेट की अधिकता होने के कारण होता है।
- जलीय तंत्र में DO (Dissolved Oxygen) की मात्रा 4.0 mg/L से कम हो जाने से, जलीय पारिस्थितिकी तंत्र पर प्रतिकूल प्रभाव पड़ता है तथा जैव विविधता का ह्रास होता है।

रिपोर्ट के अनुसार, भारत में वायु प्रदूषण के कारण लोग समय से पूर्व मर रहे हैं और उनकी आयु 2.6 साल कम हुई है। आउटडोर पीएम के कारण जहाँ 18 महीने जीवन प्रत्याशा कम हुई, वहीं घरेलू प्रदूषण के चलते इसमें 14 महीने की कमी आई। यह कम जीवन प्रत्याशा के वैश्विक औसत (20 महीने) से बहुत अधिक है।

वायु प्रदूषण से होने वाली एक चौथाई मौतें भारत में होती हैं।

भारत में समय से पूर्व मृत्यु सांस की बीमारियों, हृदय की बीमारियों, हृदयाघात, फेफड़ों के कैंसर और मधुमेह से जुड़ी हैं और यह सीधे तौर पर वायु प्रदूषण से प्रभावित हैं। ओजोन प्रदूषण फेफड़ों की बीमारियों को बढ़ाता है। वायु प्रदूषण से होने वाली मौतों में 49 प्रतिशत फेफड़ों की बीमारियों का 33 प्रतिशत, फेफड़ों के कैंसर, मधुमेह और हृदय की बीमारियों का 22 प्रतिशत और हृदयाघात का योगदान 15 प्रतिशत रहा।

अध्ययन में पहली बार वायु प्रदूषण को टाइप-2 मधुमेह से जोड़ा गया है। भारत के लिए यह बेहद चिंता की बात है क्योंकि यह महामारी का रूप ले चुका है। रिपोर्ट में कहा गया है कि 2015 में मधुमेह की आर्थिक लागत वैश्विक अर्थव्यवस्था की 1.8 प्रतिशत थी और यह सभी देशों के स्वास्थ्य तंत्र के लिए तेजी से बढ़ती चुनौती है। अध्ययनकर्त्ता काफी विचार-विमर्श और अनुसंधान के बाद इस नतीजे पर पहुँचे हैं कि पीएम 2.5 टाइप-2 मधुमेह के मामलों और मृत्यु को बढ़ाता है।

ग्लोबल बर्डन डिजीज-2017 के विश्लेषण में भी पीएम-2.5 को उच्च रक्तचाप और अत्यधिक मोटापे के बाद टाइप-2 मधुमेह से होने वाली मौतों के लिए तीसरा सबसे बड़ा खतरा बताया गया था। पीएम-2.5 से होने वाले टाइप-2 मधुमेह से दुनियाभर में वर्ष 2017 में 2,76,000 मौतें हुईं। भारत में यह खतरा बहुत बड़ा है। यहाँ पीएम-2.5 के कारण 55,000 मौतें हुई हैं। बीमारियों और खासकर टाइप-2 मधुमेह का खतरा कम करने के लिए व्यापक रणनीतियाँ बनानी होंगी।

विश्लेषण बताता है कि दुनिया की अधिकांश आबादी अस्वस्थ परिस्थितियों में जी रही है। 90 प्रतिशत से अधिक आबादी विश्व स्वास्थ्य संगठन (डब्ल्यूएचओ) द्वारा निर्धारित हवा के मानकों के अनुसार हवा में सांस नहीं ले रही है।

वायु प्रदूषण नियंत्रण के उपाय

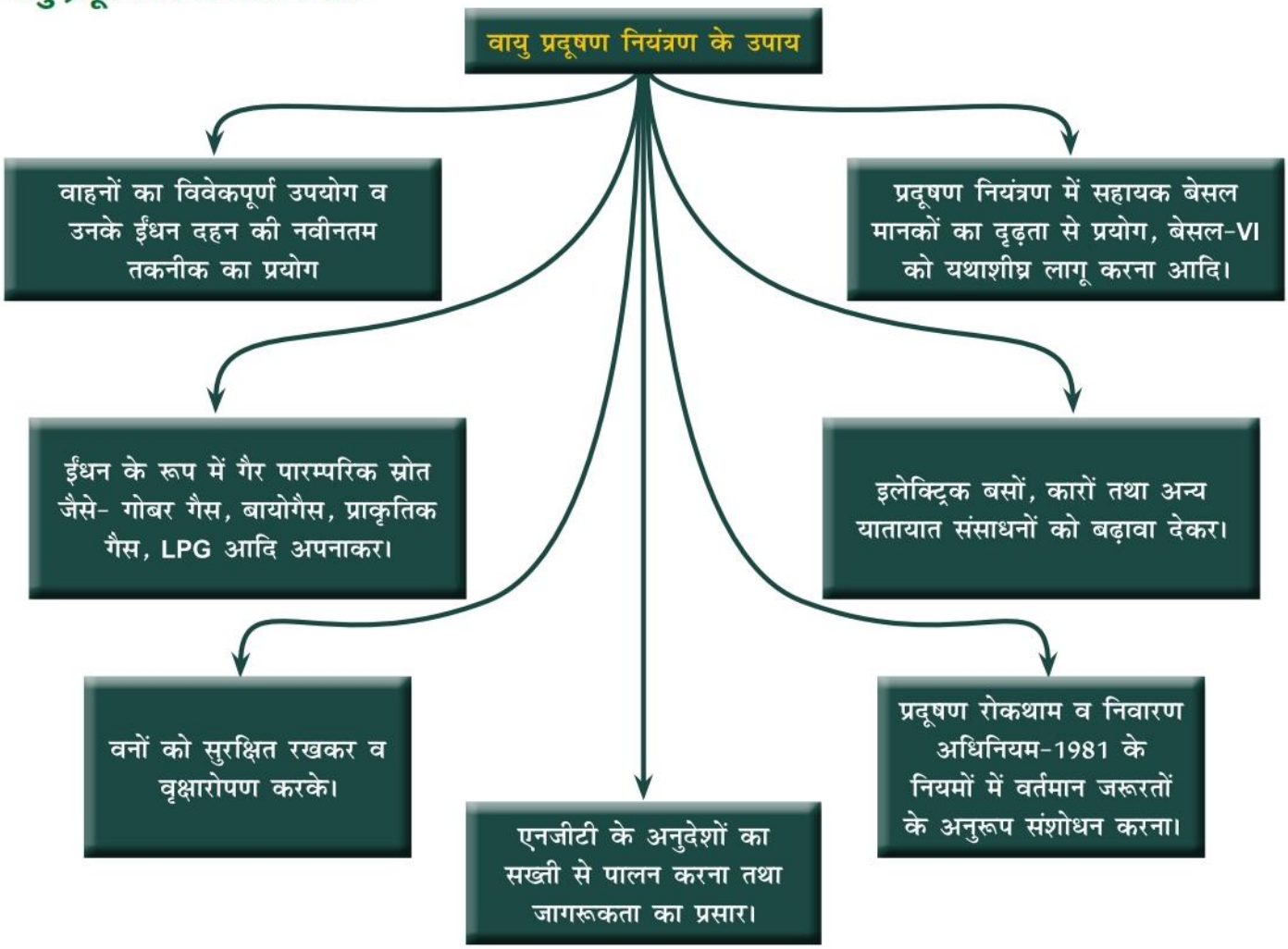

वायु प्रदूषण का नियंत्रण दो अन्तर्सम्बंधित स्तरों वैधानिक और प्रौद्योगिकीय पर किया जा सकता है। वैधानिक उपागम के अन्तर्गत वायु की गुणवत्ता संबंधित मानकों का निर्धारण किया जाता है। भारत में भारत मानक ब्यूरो (The Bureau of India Standards), जो पूर्व में इंडियन स्टैंडर्ड इंस्टीट्यूट (ISI) के नाम से जाना जाता था, इस प्रकार के मानकों का निर्धारण करता है। इस मानक का निर्धारण क्षेत्र विस्तृत एवं समावेशी विकास की आवश्यकता के अनुरूप ही होना चाहिए।

भारतीय वायु गुणवत्ता के मानक

भारतीय वायु गुणवत्ता मानकों को तीन वर्गों में विभाजित किया जाता है:-

निवारक उपाय (Preventive Measures):- निवारक उपायों द्वारा वायु प्रदूषण की मात्रा को नियंत्रित करने हेतु अनेक उपाय किए जाते हैं, जैसे- तेजी से सड़कों पर बढ़ते वाहनों की संख्या को नियंत्रित करना, ऊर्जा का प्रयोग घटाकर, ऊर्जा का अधिक दक्षतापूर्ण प्रयोग करके और ऊर्जा के गैर-दहन स्रोतों पर अधिकाधिक आश्रित होकर (जैसे-सौर एवं पवन ऊर्जा), कुछ विशेष क्षेत्रों में किसी उद्योग की स्थापना को प्रतिबंधित करके अथवा कुछ सुरक्षा उपायों के अनुपालन के साथ स्थापित करके, क्षेत्र के उद्योगों के चारों ओर कुछ विशिष्ट प्रदूषण सहय एवं कणों को फिल्टर करने वाली पादप प्रजातियों सहित हरित पेटी के रूप में रोपण करके तथा सड़कों की देख-रेख, उन पर नियंत्रित एवं योजना बद्ध ट्रैफिक चलाकर तथा उनसे अनावश्यक चेक-पोस्टों व अवरोधों को हटाकर आदि।

Note

वाहनों द्वारा कार्बन उत्सर्जन शहरी प्रदूषण का सबसे बड़ा कारण है। वर्ष 2018 की एक रिपोर्ट के अनुसार दिल्ली (NCR) के कुल वायु प्रदूषण में मोटर वाहनों का लगभग 40% योगदान है।

उपचारी उपाय (Remedial Measures):- वायु प्रदूषण को उत्सर्जक गैसों से घातक पदार्थों को दूर करके तथा उत्सर्जन गैसों में से घातक प्रदूषकों को हानि रहित बनाकर या कम घातक पदार्थों में परिवर्तित करके भी घटाया जा सकता है। इनमें से प्रथम उपागम अर्थात् उत्सर्जन स्रोत से हानिकारक पदार्थों को दूर करने की विधि स्थैतिक दहन स्रोतों (Station Combustion Sources) के लिए और दूसरी विधि अर्थात् हानिकारक पदार्थों को कम हानिकारक पदार्थों में परिवर्तित कर देने की विधि गतिशील दहन स्रोतों के लिए उपयोगी है।

प्राकृतिक उपाय (Natural Measures):-

- वर्षा व हिमपात भी वायु प्रदूषण को स्वच्छ करने में प्रभावी भूमिका निभाते हैं।
- प्रबल पवनें प्रदूषकों को दूर हटा देती हैं या उन्हें स्वच्छ हवा के साथ मिश्रित कर प्रदूषकों को कम कर देती हैं।
- महासागरों द्वारा लवणीय जल स्प्रे द्वारा भी हवा में लटके विविक्तों एवं जल में घुलित प्रदूषकों को दूर कर दिया जाता है।

वायु प्रदूषण से निपटने के लिए सरकार की पहल

- हाल ही में सरकार ने राष्ट्रीय इलेक्ट्रिक मोबिलिटी मिशन प्लान (NEMMP) की घोषणा की है। इसके तहत पर्यावरण हितैषी एवं उच्च क्षमता वाले हाईब्रिड और इलेक्ट्रिक वाहनों का निर्माण करना है जिससे 2020 तक 1.5 प्रतिशत CO_2 उत्सर्जन में कमी की जा सके।
- शहरों में बढ़ते वायु प्रदूषण को देखते हुए सरकार ने जून, 2019 में राष्ट्रीय स्वच्छ वायु कार्यक्रम घोषणा की। इसके अंतर्गत भारत 2024 तक बीएस-IV ईंधन मानक को प्रतिस्थापित कर बीएस-VI मानक को अपना लेगा।
- राष्ट्रीय स्वच्छ वायु कार्यक्रम एक पंचवर्षीय कार्य योजना है जिसका लक्ष्य 102 शहरों में पीएम 2.5 और पीएम 10 की मात्रा को 20-30 प्रतिशत घटाना है। यह निर्णय लिया गया है कि प्रत्येक राज्य प्रदूषण नियंत्रण बोर्ड, अपने राज्य के अग्रणी अकादमी संस्थान से सहयोग करेंगे। यह संस्थान कार्यक्रम के लिए राज्य स्तर पर तकनीकी साझेदार होंगे।

वायु गुणवत्ता सूचकांक

वायुमंडल के प्रमुख प्रदूषक कार्बन मोनो ऑक्साइड (CO), सल्फर डाईऑक्साइड (SO_2), अमोनिया (NH_3), लेड (Pb), नाइट्रोजन डाइ ऑक्साइड (NO_2) एवं कण पदार्थ (Particulate Matter-PM) हैं। स्वच्छ भारत अभियान के तहत 17 अक्टूबर, 2017 को पर्यावरण, वन एवं जलवायु परिवर्तन राज्यमंत्री (स्वतंत्र प्रभार) प्रकाश जावड़ेकर ने 'वायु गुणवत्ता सूचकांक' (Air Quality Index- AQI) जारी किया। वायु गुणवत्ता सूचकांक (AQI) की प्रमुख विशेषताएं इस प्रकार हैं-

- इस सूचकांक में आठ प्रदूषकों को शामिल किया गया है। ये प्रदूषक PM10, PM2.5, NO_2, SO_2, CO, O_3, NH_3 और Pb हैं।
- PM 10 का तात्पर्य है, ऐसे कार्बनिक पदार्थ, जिनका व्यास 10 माइक्रोमीटर या उससे कम हो।
- PM 2.5 का तात्पर्य है, ऐसे कण पदार्थ जिनका व्यास 2.5 माइक्रोमीटर या उससे कम हो।

- वायु गुणवत्ता सूचकांक के अंतर्गत 6 वर्ग रखे गए हैं। प्रत्येक वर्ग का अलग-अलग कलर कोड (Colour Code) है।
- 'केन्द्रीय प्रदूषण नियंत्रक बोर्ड' (Central Pollution Contro Board) और 'राज्य प्रदूषण नियंत्रक बोर्ड' (State Pollution Control Board) मिलकर भारत के 240 शहरों में 'राष्ट्रीय वायु निगरानी कार्यक्रम' (National Air Monitoring Programme-NAMP) चला रहे हैं।
- परंपरागत तौर पर वायु गुणवत्ता संबंधी रिपोर्ट भारी-भरकम आंकड़ों के रूप में प्रस्तुत होती थी। नवीन 'वायु गुणवत्ता सूचकांक' (AQI) में रंगों के माध्यम से प्रस्तुतीकरण का प्रयोजन इस सूचकांक को लोगों तक सरल रूप में पहुँचाना है।
- वायु गुणवत्ता सूचकांक के अंतर्गत बनाए गए सभी 6 वर्गों के साथ उनका संभावित स्वास्थ्य प्रभाव भी दिया गया है, जिससे यह सूचकांक जनोन्मुखी हो सके।

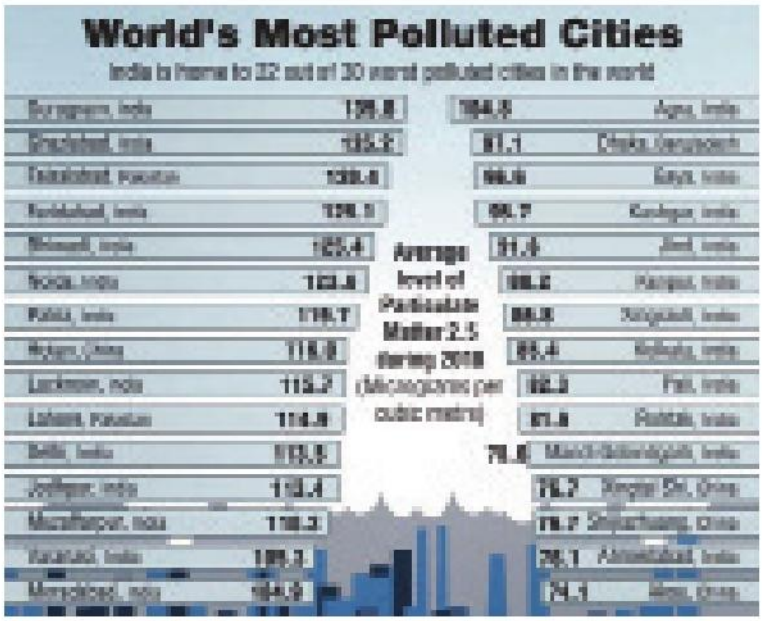

वर्ग	AQI सीमा	कलर कोड
अच्छा (Good)	0-50	हरा
संतोषजनक (Satisfactory)	51-100	धानी
सामान्य प्रदूषित (Moderately Polluted)	101-200	पीला
खराब (Poor)	201-300	नारंगी
अति खराब (Very Poor)	301-400	लाल

AQI वर्ग	स्वास्थ्य प्रभाव
1. अच्छा (0.50)	न्यूनतम प्रभाव
2. संतोषजनक (51-100)	संवेदनशील लोगों को सामान्य श्वास संबंधी परेशानी हो सकती है।
3. सामान्य प्रदूषित (101-200)	जिन लोगों को फेफड़े संबंधी बीमारी (जैसे-अस्थमा) है, उन्हें श्वास संबंधी परेशानी हो सकती है। हृदय संबंधी बीमारी वाले लोगों को परेशानी हो सकती है। बच्चों और बूढ़ों को सामान्य परेशानी हो सकती है।
4. खराब (201-300)	लम्बे समय तक संपर्क में रहने से श्वास संबंधी परेशानियाँ हो सकती हैं। हृदय संबंधी बीमारी वाले लोगों को परेशानी हो सकती है।
5. अति खराब (301-400)	लम्बे समय तक संपर्क में रहने से श्वसन संबंधी रोग हो सकता है। फेफड़े व हृदय संबंधी बीमारी वाले लोगों पर गंभीर प्रभाव पड़ सकता है।
6. गंभीर (401-500)	स्वस्थ लोगों में भी श्वसन परेशानियाँ हो सकती हैं। फेफड़े व हृदय संबंधी बीमारी वाले लोगों पर गंभीर प्रभाव पड़ सकता है। हल्की शारीरिक मेहनत के दौरान भी स्वास्थ्य पर कुप्रभाव पड़ सकता है।

राष्ट्रीय स्वच्छ वायु कार्यक्रम-भारत

जून, 1972 में स्टॉकहोम में आयोजित 'संयुक्त राष्ट्र मानव पर्यावरण सम्मेलन' (United Nations Conference on Human Environment) में लिए गए निर्णयों के कार्यान्वयन के लिए सरकार द्वारा संविधान के अनुच्छेद-253 के तहत 'वायु (प्रदूषण रोकथाम एवं नियंत्रण) अधिनियम, 1981' [Air (Prevention and Control of Pollution) Act, 1981] को लागू किया गया।

दिल्ली: वायु गुणवत्ता पूर्व चेतावनी प्रणाली: वर्तमान परिदृश्य में 15 अक्टूबर, 2018 को केन्द्र सरकार द्वारा दिल्ली के लिए वायु प्रदूषण भविष्यवाणी प्रणाली शुरू की गई। इस प्रणाली को 'वायु गुणवत्ता पूर्व चेतावनी प्रणाली' (Air Quality Early Warning System) कहा जाता है। पूर्व सूचना के आधार पर अब वायु प्रदूषण का मुकाबला करने में मदद् मिलेगी।

ध्वनि प्रदूषण (Noise Pollution)

विकास के क्रम में मानव ने ऐसी परिस्थितियां उत्पन्न की हैं, जो आज उसके ही जीवन को संकट में डाल रही हैं। वायु प्रदूषण, जल प्रदूषण आदि की तरह भले ही ध्वनि प्रदूषण की भयावहता स्पष्ट नजर न आती हो, परन्तु इसका प्रभाव किसी आपदा से कम नहीं है। वस्तुत: वह प्रक्रिया जिसमें अति तीव्र ध्वनियाँ बार-बार व लगातार सुनाई दें, ध्वनि प्रदूषण कहलाता है।

ध्वनि प्रदूषण औद्योगीकरण, आधुनिक तकनीकीकरण व यातायात के साधनों के विकास से उत्पन्न समस्या है। निरंतर बढ़ते नगरीय ध्वनि प्रदूषण की भयावहता को देखते हुए 1972 में संयुक्त राष्ट्र संघ द्वारा ध्वनि को प्रदूषण के एक अंग के रूप में परिभाषित किया गया। साधारण शब्दों में कहें, तो एक सामान्य व्यक्ति के लिए 50-60 डेसिबल तीव्रता की ध्वनि का श्रवण उपयुक्त होता है। इससे अधिक तीव्रता की ध्वनि स्वास्थ्य के लिए अहितकर होती है।

ध्वनि प्रदूषण के स्रोत

उद्भव के आधार पर ध्वनि प्रदूषण को दो श्रेणियों में वर्गीकृत किया गया है-

प्राकृतिक स्रोत

बहुत सी प्राकृतिक क्रियाएं भी ध्वनि प्रदूषण के लिए उत्तरदायी होती हैं। जैसे- ज्वालामुखी विस्फोट, बादलों का गरजना, बिजली का कड़कना, भूकम्प व तीव्र चक्रवात आदि। हालांकि ये कारक स्थानीय होते हैं तथा इनका प्रभाव भी अल्पावधिक होता है।

मानव जनित या कृत्रिम स्रोत

मानव सभ्यता के उद्भव के साथ-साथ ऐसे उपागमों का सृजन होता गया, जो एक तरफ जीवन को सरल और सुविधाजनक बनाने के साथ-साथ गंभीर संकट भी उत्पन्न कर रहे हैं। औद्योगिक और यातायात साधनों का निरंतर विकास, इलेक्ट्रॉनिक उपकरणों द्वारा ध्वनि विस्तार, विभिन्न प्रकार के श्रव्य उपकरणों का विकास तथा अनेक मानवीय क्रियाओं से उत्पन्न आवाजें ध्वनि प्रदूषण का कारण बन जाती हैं। ध्वनि प्रदूषण के स्रोतों को निम्नलिखित रूपों में विभक्त करके देखा जा सकता है:-

- **यातायात के साधनों द्वारा:-** शहरी क्षेत्रों में यातायात के साधनों का निरंतर विकास हो रहा है और वाहनों की संख्या तीव्र गति से आगे बढ़ रही है। स्थलीय परिवहन के विभिन्न साधन; जैसे- कारें, बस, ट्रक, मोटर बाइक, पुलिस तथा एम्बुलेंस सायरन आदि ध्वनि प्रदूषण के प्रमुख स्रोत हैं।

- **औद्योगिक इकाईयों व मशीनों द्वारा:-** ध्वनि प्रदूषण का एक प्रमुख कारण औद्योगिक इकाईयों व मशीनों के चलने से उत्पन्न शोर है। उद्योगों से होने वाली ध्वनि का सर्वाधिक प्रभाव वहाँ कार्य करने वाले मजदूरों व कर्मचारियों पर पड़ता है क्योंकि उन्हें ऐसे वातावरण में कार्य करना पड़ता है।
- **अवसंरचना निर्माण के दौरान:-** जिन शहरों या स्थानों पर निर्माण (भवन, ओवर ब्रिज, मेट्रो, सड़कें आदि) कार्य हो रहा होता है, वहाँ ध्वनि प्रदूषण अपने चरम स्तर पर दर्ज किया जाता है।
- **मनोरंजन के साधनों व सांस्कृतिक क्रियाकलाप द्वारा:-** ध्वनि प्रदूषण का एक प्रमुख कारक मनोरंजन के विभिन्न साधनों तथा सांस्कृतिक क्रियाकलापों द्वारा उत्पन्न शोर है। भारत में प्राय: चुनाव के दौरान, विवाह समारोहों, धार्मिक उपलक्ष्यों, जन्मदिवस आदि के समय लाउड स्पीकरों, डीजे व अन्य ध्वनि यंत्रों द्वारा बड़े पैमाने पर ध्वनि प्रदूषण होता है।

ध्वनि प्रदूषण का प्रभाव

90 डेसिबल से अधिक ध्वनि वाला वातावरण बहरापन, मानसिक तनाव, चिड़चिड़ापन, हृदय रोग में वृद्धि एवं सृजनात्मक क्षमता को प्रभावित करता है।

डेसिबल (dB) एवं पर्यावरणीय दशा (Environmental Condition)

0-श्रवणशक्ति की अवसीमा

10	→	पत्तों की सरसराहट
20	→	प्रसारण स्टूडियो
30	→	रात में शयनकक्ष
40	→	पुस्तकालय
50	→	शांत कार्यालय
60	→	बातचीत (एक मीटर की दूरी पर)
70	→	औसत रेडियो
74	→	हल्के यातायात का शोर
90	→	सबवे ट्रेन
100	→	सिंफनी ऑर्केस्ट्रा
110	→	रॉक संगीत का बैंड
120	→	हवाई जहाज का प्रस्थान (Take off)
146	→	कष्ट की अवसीमा

ध्वनि प्रदूषण का परिवेशी मानक (डेसिबल में)

क्षेत्र	dB दिन के समय	dB रात्रि के समय
शांत क्षेत्र	50	40
आवासीय क्षेत्र	55	45
व्यावसायिक क्षेत्र	65	55
औद्योगिक क्षेत्र	75	70

- ध्वनि प्रदूषण का सर्वाधिक दुष्प्रभाव पक्षियों, जीव-जन्तुओं पर पड़ता है। तीव्र ध्वनि से जन्तुओं के हृदय, मस्तिष्क एवं यकृत को भी हानि पहुँचती है। शहरी क्षेत्रों से अनेक पक्षियों के विलोपन का प्रमुख कारण ध्वनि प्रदूषण को माना जा रहा है।
- ध्वनि प्रदूषण से नवजात शिशुओं के जन्म पर भी प्रभाव पड़ता है। गर्भ में पल रहे शिशु भी ध्वनि के कुप्रभाव से ग्रसित होते हैं। गर्भस्थ शिशु के हृदय की धड़कन ध्वनि के कारण असामान्य गति से बढ़ जाती है। यह स्थिति नवजात शिशु की

श्रवण शक्ति पर प्रतिकूल प्रभाव डालती है। इसका अंदाजा इस बात से लगाया जा सकता है कि भारत में प्रतिवर्ष लगभग 1 लाख से अधिक बच्चे जन्मजात बधिर होते हैं। हाल ही में अमेरिका में सवा दो लाख नवजात शिशुओं का परीक्षण करने के पश्चात् यह निष्कर्ष निकाला गया कि शांत स्थानों में रहने वाली महिलाओं की तुलना में ध्वनि के लगातार सम्पर्क में रहने वाली महिलाओं के शिशुओं में जन्मजात विकृतियां अधिक थीं।

Note

मनुष्य 20 हर्ट्ज से 20,000 हर्ट्ज तक सुन सकता है, यह मनुष्य का 'श्रव्य परास' (Audible Range) कहलाता है, जबकि श्रव्य परास से अधिक आवृत्ति की तरंगों को 'पराश्रव्य तरंग' (Ultrasonic) कहा जाता है।

- अधिक ध्वनि वाले परिवेश में रहने से नींद न आने की आम समस्या देखी गयी है। नींद न आने तथा मानसिक विकृति के फलस्वरूप पागलपन का दौरा भी देखा जा सकता है।
- मानव मस्तिष्क की वाह्य नसों में से एक नम श्रवण तंत्र की होती है, इसे 'स्वर तंत्रिका' भी कहते हैं। स्वर तंत्रिका पर तेज ध्वनि का परिणाम कभी-कभी इतना घातक होता है कि इससे सुनने की शक्ति थोड़ी या पूरी तरह समाप्त हो सकती है।

Note

एक अध्ययन के अनुसार, 70dB से कम का ध्वनि स्तर मानव स्वास्थ्य के लिए खतरनाक नहीं माना गया है, किन्तु 85dB से अधिक के ध्वनि स्तर में लगातार 8 घण्टे रहने पर वह बहरेपन का शिकार हो सकता है।

- विभिन्न शोधों में तथ्य सामने आया है कि भारत के मेट्रोपॉलिटन नगरों में औसत ध्वनि अंतर्राष्ट्रीय रूप से मान्य सीमा से काफी अधिक है। मुम्बई, नई दिल्ली एवं कोलकाता की सड़कों पर सामान्यतया ध्वनि का स्तर 95dB से अधिक पाया जाता है।

वास्तविक समय निरंतर परिवेश ध्वनि निगरानी (Real time Continuous Ambient Noise Monitoring) द्वारा 9 भारतीय शहरों (नई दिल्ली, मुम्बई, नवी मुम्बई, थाणे, चेन्नई, कोलकाता, लखनऊ, बंगलूरू, हैदराबाद) के 35 स्थानों पर ध्वनि प्रदूषण का मापन किया जा रहा है।

ध्वनि प्रदूषण पर नियंत्रण के उपाय

वर्तमान में ध्वनि प्रदूषण एक जटिल प्रश्न बनकर उभरा है। हालांकि इसकी प्रभाविता तात्कालिक रूप से भले न ज्ञात हो, किन्तु इसका दूरगामी प्रभाव अवश्य होता है। फिर भी ध्वनि प्रदूषण ऐसी समस्या नहीं है कि इसको नियंत्रित न किया जा सके, अपितु कुछ साधारण उपाय, कुछ तकनीकी परिवर्तन और कुछ सामान्य व्यवहार में परिवर्तन कर एक सीमा तक ध्वनि प्रदूषण को नियंत्रित किया जा सकता है।

ध्वनि प्रदूषण के नियंत्रण के संदर्भ में निम्नलिखित उपाय किए जा सकते हैं-

स्रोत पर नियंत्रण

- वे उद्योग, जिनसे अत्यधिक ध्वनि उत्पन्न होती हो, उन्हें आवासीय क्षेत्रों से इतना दूर स्थापित करना चाहिए कि उसका प्रभाव लोगों पर न पड़े।
- औद्योगिक संरचना का निर्माण करते समय उच्च तकनीकि की मशीनों का उपयोग व साउन्ड प्रूफ दीवारों का निर्माण करना। इसके साथ ही साथ मशीनों का उचित रखरखाव करना चाहिए।
- नगरों के बाहर रिंग रोड (Ring Road) का निर्माण करना चाहिए तथा भारी वाहनों का नगर के भीतर प्रवेश सीमित करना चाहिए।

- तीव्र हॉर्न वाले वाहन तथा पुराने जीर्ण-शीर्ण वाहन, जो अत्यधिक ध्वनि उत्पन्न करते हैं, उनके सड़कों पर चलने पर रोक लगानी चाहिए।
- यातायात के नवीन सार्वजनिक संसाधनों; जैसे- मेट्रो, इलेक्ट्रिक बस व हाइपरलूप ट्रेन आदि का विकास किया जाना चाहिए।
- शहरों में आवासीय क्षेत्रों के पास स्थित हवाई अड्डे ध्वनि प्रदूषण की एक जटिल समस्या हैं। फलतः जेट इंजन की ध्वनि को नियंत्रित करने हेतु उनके टर्बोजेट पर ध्वनिशोषक के प्रयोग को और बढ़ावा दिया जाना चाहिए।
- मनोरंजन के ऐसे साधनों अथवा यंत्रों को नियंत्रित किया जाना चाहिए, जो 70 डेसिबल से अधिक ध्वनि उत्पन्न करते हों। इसके साथ ही सार्वजनिक मंचों पर एवं समारोहों में तेज ध्वनि यन्त्रों के प्रयोग पर नियंत्रण लगाना चाहिए।

तात्कालिक उपाय

ध्वनि प्रदूषण से प्रभावित क्षेत्रों में जागरूकता का संचार करना तथा इसके दुष्प्रभावों व बचाव के प्रति सचेत करना। ध्वनि प्रदूषण रोधी उपायों/उपकरणों/ साउन्ड प्रूफ हेलमेट, साउन्ड प्रूफ दरवाजे व खिड़कियों तथा ईयरबड्स आदि का प्रयोग करना।

लाउड स्पीकरों, डीजे तथा मोटर वाहनों में प्रयुक्त तीव्र हॉर्नों को प्रतिबंधित करना।

दीर्घकालिक उपाय

- सड़कों, हाइवे, रेल कोरिडोरों आदि के किनारे बड़े पैमाने पर वृक्षारोपण करना।
- शहरों व आबादी वाले क्षेत्रों में भारी वाहनों के प्रवेश को निषिद्ध करना।
- ध्वनि प्रदूषण को नियंत्रित करने के लिए नियंत्रक कानूनों को कठोर व प्रभावी बनाना।
- यातायात के सार्वजनिक संसाधनों को बढ़ावा देना।
- ध्वनि प्रदूषण रोधी उन्नत तकनीकी का प्रयोग आदि।

ध्वनि प्रदूषण नियंत्रक कानून (Laws to Control Noise Pollution)

विश्व के अनेक देशों में ध्वनि प्रदूषण नियंत्रक कानून बने हैं। इनमें पश्चिमी देश और जापान आदि अग्रणी हैं। भारत में इस दिशा में सीमित कानून हैं। सामान्य रूप में देखें, तो भारत में ध्वनि प्रदूषण के नियंत्रण हेतु कोई पृथक कानूनी प्रावधान नहीं है। हालांकि वायु प्रदूषण (नियंत्रण व निवारक) अधिनियम-1981 में संशोधन करते हुए सन् 1987 ई. में 'ध्वनि प्रदूषण' को भी 'वायु प्रदूषकों' की परिभाषा के अंतर्गत शामिल किया गया।

पर्यावरण संरक्षण अधिनियम-1986 की धारा-6 के अधीन ध्वनि प्रदूषण (विनियमन एवं नियंत्रक) नियम, 2000 पारित किया गया। इसके अंतर्गत विभिन्न उत्सवों तथा धार्मिक सांस्कृतिक कार्यक्रमों के दौरान उत्पन्न होने वाले ध्वनि प्रदूषण का मापन करना तथा नियंत्रण हेतु दिशा-निर्देश जारी करना आदि शामिल हैं।

जल प्रदूषण (Water Pollution)

जल के प्राकृतिक स्वरूप में बाह्य तत्वों (मानव जनित तथा प्राकृतिक दोनों) के मिश्रित हो जाने से जब विकृति आ जाती है तो वह जीवजगत के लिए हानिकारक हो जाता है, यह स्थिति जल प्रदूषण कहलाती है। दूसरे शब्दों में, "जल की रासायनिक, भौतिक और जैविक विशिष्टताओं में मुख्यत: मानवीय क्रियाओं से जो अवनति आती है, उसे ही जल प्रदूषण कहा जाता है।

प्रदूषक पदार्थों की प्रकृति के आधार पर जल प्रदूषण को भौतिक, रासायनिक और जैव श्रेणियों में विभक्त किया जाता है। भौतिक जल प्रदूषण से जल का रंग, गन्ध, स्वाद, तापक्रम प्रभावित होता है जबकि रासायनिक जल प्रदूषण के अन्तर्गत अनेक हानिकारक रसायनों का जल में सम्मिश्रण हो जाता है। जैव जल प्रदूषण में बैक्टीरिया या सूक्ष्म जीवाणु जल में मिल जाते हैं। ये सभी सामूहिक रूप से पर्यावरण पर प्रतिकूल प्रभाव डालते हैं, किन्तु प्रभाव का परिणाम भिन्न-भिन्न होता है।

जल प्रदूषण के स्रोत

जल प्रदूषण किसी एक प्रदूषक के द्वारा उत्पन्न नहीं होता, अपितु इसके लिए अनेक कारक उत्तरदायी हैं। यद्यपि कहीं एक स्रोत या कारण प्रमुख हो जाता है, तो कहीं एक से अधिक। अधिकांशत: जल प्रदूषण का कारण मानव द्वारा विभिन्न पदार्थों का जल में निस्तारण है, किन्तु कुछ प्राकृतिक स्रोत भी जल प्रदूषण के कारक होते हैं। जल प्रदूषण के स्रोत निम्नलिखित हैं-

प्राकृतिक स्रोत (Natural Sources of Water Pollution)

विभिन्न प्राकृतिक अन्तर्क्रियाओं द्वारा भी जल प्रदूषण होता है। जैसे- बाढ़, सुनामी तथा भूकंप आदि द्वारा बड़े पैमाने पर जल प्रदूषण होता है। यह प्रदूषण मंद और कभी-कभी सामयिक होता है। जैसे- वर्षा काल में नदियों, तालाबों का जल मृदा के कणों के मिश्रण से अत्यधिक मटमैला हो जाता है जो कुछ समय पश्चात् स्वत: ठीक हो जाता है। जल में प्राकृतिक रूप से शुद्ध होने की क्रिया होती रहती है।

मानवीय स्रोत (Human Sources of Water Pollution)

- घरेलू बहि:स्राव (Domestic Effluent)
- वाहित मल (Sewage)
- औद्योगिक बहि:स्राव (Industrial Effluent)

- शहरी बहि:स्राव तथा अपशिष्ट (Urbon Effluent and Wastes)
- रेडियोधर्मी अपशिष्ट (Radioactive Wastes)
- कृषि बहि:स्राव (Agricultural Effluent)
- तापीय प्रदूषण (Thermal Effluent)
- तेल अधिप्लाव (Oil Spills)

घरेलू बहि:स्राव (Domestic Effluent)

जनसंख्या वृद्धि तथा बढ़ते शहरीकरण जैसे कारकों ने घरेलू बहि:स्राव तथा अपशिष्ट के समुचित निस्तारण हेतु गंभीर चुनौती उत्पन्न की है। उचित प्रबंधन के अभाव में घरेलू बहि:स्राव सीधे नदियों तथा अन्य जलाशयों में जाता है जिससे व्यापक स्तर पर जल प्रदूषण की समस्या उत्पन्न होती है। सामान्यतया यह माना गया है कि शहरी क्षेत्रों में प्रतिदिन प्रति व्यक्ति द्वारा 135 लीटर जल प्रयोग में लाया जाता है। मानव द्वारा प्रयोग किए गए इस जल का 75 से 80 प्रतिशत भाग विविध उपयोग के पश्चात् बहा दिया जाता है। यह जल घर की नालियों में, मोहल्ले और तत्पश्चात् नगर की सीवर लाइनों में बहता हुआ अनेक प्रकार की अशुद्धियों से युक्त होता है। एक ओर इसमें कूड़ा-करकट, घर की गन्दगी का मिश्रण होता है, तो दूसरी ओर साबुन या अन्य सफाई के प्रयोग में लाए गए पदार्थों का। इसमें कागज, कपड़ा, राख, सड़े-गले पदार्थ और रोगी के उपचार में प्रयोग किए गए कपड़े, रूई, बची हुई दवाईयाँ मृत जीव व कीटनाशक आदि भी शामिल होते हैं।

वाहित मल (Sewage)

जल प्रदूषण का एक प्रमुख कारण वाहित मल है। जनसंख्या में वृद्धि, ग्रामों का कस्बों, नगरों तथा महानगरों में परिवर्तित होना इस समस्या को और अधिक गंभीर बना रहा है। मानव की यह प्रकृति है कि वह मल-मूत्र एवं अन्य गन्दगी को बाहर बहा देता है जो नालियों में बहकर अन्त में नदी अथवा अन्य जल स्रोत में पहुँच जाता है। यही नहीं, यदि यह भूमि में भी समा जाता है तो इसका कुछ भाग भूमिगत जल में मिश्रित होकर उसे भी प्रदूषित कर देता है।

औद्योगिक बहि:स्राव (Industrial Effluent)

औद्यौगिक उत्पादन गतिविधियों में वृहद् पैमाने पर जल का उपयोग किया जाता है। यह जल उत्पादन प्रक्रिया से चलता हुआ अन्त में औद्योगिक बहि:स्राव के रूप में निकलता है। इस जल में अनेक कार्बनिक एवं अकार्बनिक तत्व मिले होते हैं, जिनमें से अनेक हानिकारक होते हैं। उद्योगों से निकला हुआ यह जल नदियों, झीलों या वृहद् तालाबों में या समुद्र में प्रवाहित कर दिया जाता है।

वर्तमान युग में रासायनिक उद्योगों एवं इनसे संबंधित उद्योगों का विकास तीव्र गति से हो रहा है। लगभग 9000 संश्लेषित रासायनिक यौगिक, व्यापारिक गतिविधियों में प्रयुक्त हो रहे हैं। इनमें प्रतिवर्ष 300 से 500 नए जुड़ते जाते हैं। इनसे प्लास्टिक, प्रसाधन, पेन्ट, मेडिकल अपशिष्ट, डिटर्जेंट और अनेक उपभोक्ता वस्तुओं का निर्माण हो रहा है। इसी प्रकार लुग्दी एवं कागज उद्योग, चमड़ा उद्योग, चीनी उद्योग आदि से रसायन मिश्रित जल बाहर निकलता है जिसे विभिन्न जलाशयों में डाल दिया जाता है। इससे न केवल जल की गुणवत्ता में कमी आती है, अपितु वह जहरीला भी हो जाता है जिससे जलीय जीवों तथा मानव स्वास्थ्य पर घातक परिणाम परिलक्षित होते हैं।

इनमें कार्बन पदार्थ भी होते हैं जिनका बैक्टीरिया द्वारा निम्नीकरण मंद गति से होता है। इसी प्रकार अकार्बनिक पदार्थों में सोडियम, पोटेशियम, कैल्शियम, अमोनियम, क्लोराइड, नाइट्रेट, सल्फेट आदि के आयन जल को प्रदूषित बनाते हैं।

जल प्रदूषण के सन्दर्भ में पारा प्रदूषण का उल्लेख आवश्यक है। पारा द्रव अवस्था में पाई जाने वाली धातु है जो अधिक तापमान पर वाष्पीकृत होकर विषैली वाष्प उत्पन्न करता है। पारा यौगिक अत्यधिक विषैले होते हैं। विश्व में प्रतिवर्ष लगभग 10 हजार टन पारा निकाला जाता है, इसमें से लगभग आधा किसी न किसी रूप में पर्यावरण में प्रविष्ट हो जाता है। इस सन्दर्भ में जापान तट के निकट स्थित मिनिमाटा खाड़ी (Minimata) दुर्घटना का उल्लेख आवश्यक है, जो जल में पारा प्रदूषण के फलस्वरूप हजारों लोगों की मृत्यु के लिए जाना जाता है।

कृषि बहिःस्राव (Agriculture Effluent)

कृषि उत्पादन में वृद्धि के लिए आज रासायनिक उर्वरकों; जैसे- नाइट्रेट्स, फॉस्फेट, यूरिया आदि का प्रयोग अधिक किया जाने लगा है। ये रसायन जल के साथ बहकर जल को दूषित करते हैं। इनमें शैवाल (एल्गी) में भी वृद्धि हो जाती है जो प्रदूषण का कारण बनती है। अधिकांश कीटनाशक दवाओं में विषैले पदार्थ; जैसे- पारा, क्लोरीन, फ्लोरीन, सल्फर, फॉस्फोरस आदि मिले रहते हैं जो जल में मिश्रित हो जाने पर मनुष्य एवं अन्य जीवों पर विपरीत प्रभाव डालते हैं। डी.डी.टी. (D.D.T) अर्थात् डाइक्लोरो डाइफिनाइल ट्राइक्लोरो ईथेन का प्रयोग सम्पूर्ण विश्व में कीटनाशक के रूप में किया जा रहा है।

रेडियोधर्मी अपशिष्ट द्वारा जल प्रदूषण (Radioactive Wastes)

वर्तमान समय में ऊर्जा प्राप्त करने में एवं हथियारों के निर्माण में रेडियोधर्मी पदार्थों का उपयोग हो रहा है। एक ओर न्यूक्लियर हथियारों का निर्माण हो रहा है, तो दूसरी ओर न्यूक्लियर ऊर्जा हेतु परमाणु रिएक्टरों के निर्माण को बढ़ावा दिया जा रहा है। रेडियोएक्टिव पदार्थ सदैव विखण्डन की प्रक्रिया से गुजरते हैं तथा इनके अपशिष्ट पदार्थ भी कम या अधिक रेडियोएक्टिव होते हैं। ये पदार्थ शीघ्र समाप्त न होकर सैकड़ों से हजारों वर्षों तक बने रहते हैं। यदि वे किसी प्रकार मानव शरीर में प्रवेश कर जाते हैं तो अत्यधिक हानि का कारण बनते हैं।

तापीय प्रदूषण

ऊर्जा संयंत्रों में बड़ी मात्रा में अत्यधिक गर्म जल निःसृत होता है जो बहता हुआ विभिन्न जलाशयों में जाता है। इससे सम्पूर्ण जलीय पारितंत्र के नष्ट होने का खतरा उत्पन्न हो जाता है। इसी प्रकार समुद्र में न्यूक्लियर परीक्षण के दौरान उस जलीय क्षेत्र का तापमान अत्यधिक गर्म हो जाता है जिसके परिणामस्वरूप बड़ी मात्रा में मछलियाँ, कोरल आदि नष्ट हो जाते हैं।

तेल रिसाव (Oil Spills):- समुद्री जल प्रदूषण में तेल रिसाव अथवा तेल अधिप्लाव का अत्यधिक योगदान है। विश्व भर में तेल की भारी मात्रा का परिवहन समुद्री मार्ग से होता है। भारत में कच्चे तेल की मात्रा का 70 प्रतिशत समुद्री मार्ग से आयात हो रहा है। समुद्री मार्गों में तेल टैंकरों के दुर्घटनाग्रस्त होने से तेल रिसाव के कारण तथा तेल उत्खनन के कारण वृहद् पैमाने पर जल प्रदूषण होता है। इससे समुद्री मछलियाँ, समुद्री प्लैंकटन व समुद्री जीवों की भारी क्षति होती है। हाल ही में इंडोनेशिया के बोर्नियो द्वीप के पास हुए तेल रिसाव के कारण वहाँ की सरकार ने आस-पास के क्षेत्रों में आपातकाल की घोषणा की थी।

तेल रिसाव का स्थानीय पर्यटन उद्योग, मत्स्य उद्योग तथा समुद्री व्यापार पर नकारात्मक प्रभाव पड़ता है। इससे जलीय पारितंत्र को सबसे अधिक क्षति पहुँचती है।

जल प्रदूषण का नियंत्रण (Control of Water Pollution)

बढ़ते जल प्रदूषण की समस्या के समाधान के लिए अनेक उपायों की चर्चा की जा सकती है। इसके नियंत्रण हेतु विकसित देश उन्नत तकनीकि का प्रयोग करने लगे हैं और एक सीमा तक उन्होंने जल प्रदूषण पर नियंत्रण भी स्थापित कर लिया है। किन्तु विकासशील देश इस अत्यंत महंगी तकनीक के प्रयोग हेतु असमर्थ दिखाई देते हैं। विश्व के अधिकांश देशों ने जल प्रदूषण के नियंत्रण हेतु कानून बनाए हैं, परन्तु इस समस्या का समाधान सिर्फ कानून निर्मित करने से नहीं होगा, अपितु इसके लिए आम जनता को सचेत होना होगा तथा प्रकृति व प्राकृतिक संसाधनों के प्रति अपने व्यवहार का शुद्धीकरण करना होगा। तभी हम किसी ठोस निष्कर्ष पर पहुँच सकते हैं।

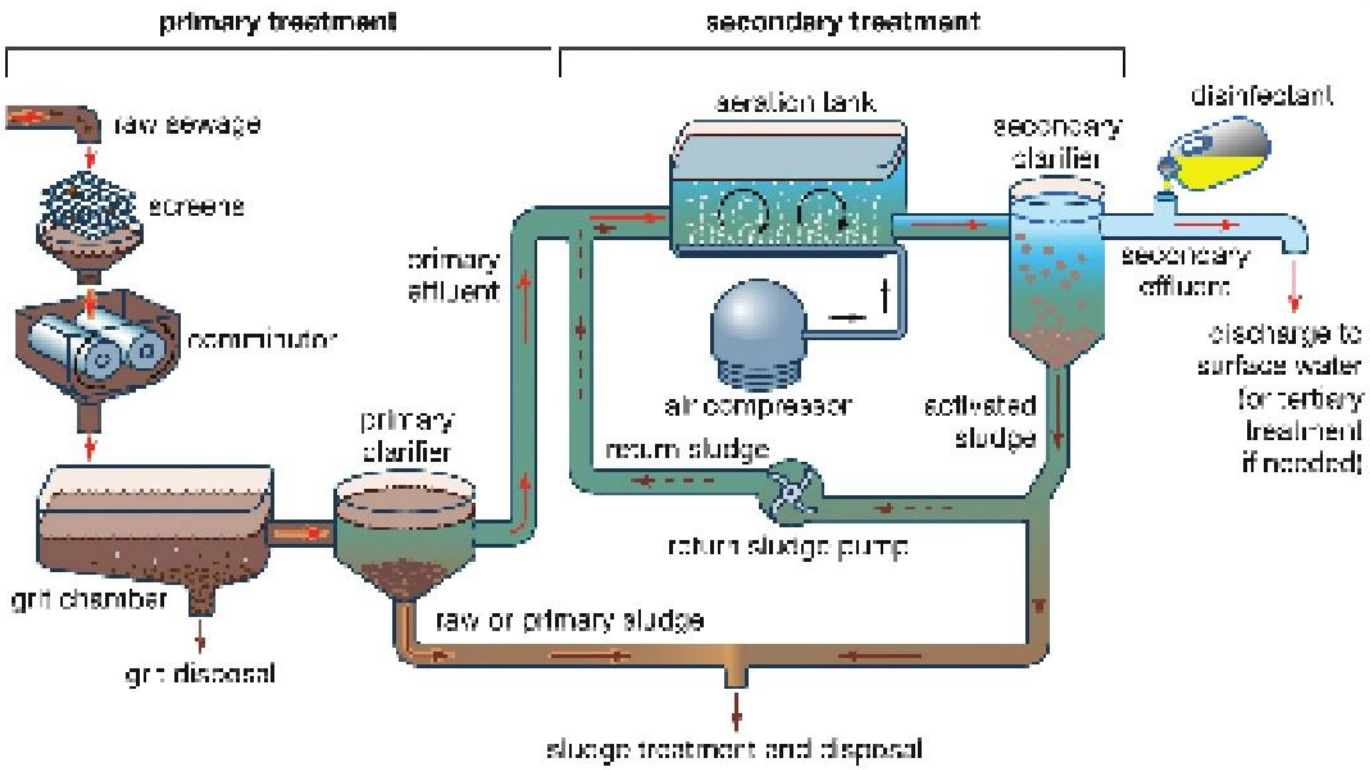

प्रदूषण के नियंत्रण हेतु निम्नलिखित उपाय अपनाए जा सकते हैं:-

जल प्रदूषण का नियंत्रण

घरेलू सीवेज तथा वाहित मल को उपचारित करने के पश्चात् ही किसी जल स्रोत में डाला जाय क्योंकि घरेलू सीवेज में **99.9%** जल एवं **0.1** प्रदूषक होते हैं। अत: इसे एकीकृत सीवेज प्लांटों द्वारा हटाया जा सकता है।

औद्योगिक वाहित प्रदूषित जल को जल स्रोतों में डालने पर रोक का कठोरता से पालन किया जाए। जो उद्योग प्रदूषित जल को जल स्रोतों में डालते हैं उनके लिए जल-उपचार संयंत्र लगाया जाना अनिवार्य किया जाए।

कृषि में कीटनाशकों, रासायनिक उर्वरकों आदि के प्रयोग को सीमित करना तथा दूषित कृषि अपशिष्टों को जल स्रोतों में जाने से रोकना।

पेयजल स्रोतों में समय-समय पर पोटैशियम परमैग्नेट जैसी उपचारी दवाओं का प्रयोग कर उन्हें सामान्य जीवाणुओं से मुक्त किया जा सकता है।

कृषि उत्पादन में रसायनों व कीटनाशकों के उपयोग को नियंत्रित किया जाना चाहिए तथा कृषि अपशिष्टों को जल स्रोतों में डालने से पूर्व परिशोधित करना चाहिए।

अनेक जल-जीव, बैक्टीरिया आदि जल को शुद्ध करने में सहायक होते हैं। ऐसे में उनका संरक्षण सुनिश्चित किया जाना चाहिए।

सरकारी स्तर पर जल के प्रदूषण की नियमित जाँच होनी चाहिए। उसके स्वास्थ्य एवं पर्यावरण पर पड़ने वाले प्रभाव का अध्ययन किया जाना चाहिए। साथ ही समक्ष निगरानी तंत्र के माध्यम से उल्लंघन की स्थिति में दण्डात्मक कार्यवाही करनी चाहिए।

इन सबसे महत्त्वपूर्ण है इस दिशा में जन जागरूकता का प्रसार करना, स्वयंसेवी संस्थाओं, औद्योगिक प्रतिनिधियों आदि के माध्यम से स्थायी समाधान निकालना।

मृदा प्रदूषण (Soil Pollution)

मृदा खनिजों, वायु, जल, कार्बनिक पदार्थों तथा विभिन्न जीवित संघटनाओं से बनी होती है। यह पादपों को यांत्रिक स्थिरक स्थान देने के साथ-साथ उनके लिए पोषकों और जल भंडारण का कार्य भी करती है। मृदा में विभिन्न प्रकार के लवण, खनिज तत्व, कार्बनिक पदार्थ, गैसें एवं जल एक निश्चित अनुपात में होते हैं। मिट्टी में उपर्युक्त पदार्थों की मात्रा एवं अनुपात में विभिन्न कारणों द्वारा उत्पन्न परिवर्तन, मृदा प्रदूषण कहलाता है।

शहरीकरण, औद्योगीकरण, जनसंख्या वृद्धि तथा वैज्ञानिक या आधुनिक कृषि उत्पादन प्रणाली आदि ने भूमि पर व्यापक पैमाने में अपशिष्ट निःसृत किया है। एक लम्बे अरसे से यह प्रक्रिया चलती आ रही है और अपशिष्ट निस्तारण के प्रति गंभीरता तथा उत्साह उतना नहीं देखने को मिलता, जितने की आवश्यकता है। फलतः इस कुप्रबंधित अपशिष्ट द्वारा मृदा का एक बड़ा भाग प्रदूषित हो चुका है।

यह प्रदूषित मृदा न केवल विभिन्न मूल्यवान तथा उपयोगी वनस्पतियों के विलुप्त होने का एक कारक बनी है, अपितु इससे मानव तथा विभिन्न जीव-जन्तुओं के लिए भी संकट उत्पन्न हुआ है।

मृदा प्रदूषण के कारण

विभिन्न वनस्पतियों की वृद्धि के लिए 16 खनिज तत्वों की आवश्यकता होती है, एक स्वस्थ मृदा में लगभग 13 तत्व पाए जाते हैं। इन तत्वों में से किसी एक की भी सान्द्रता में कमी या वृद्धि हो, तो मृदा प्रदूषित कहलाती है। मृदा प्रदूषण के लिए निम्नलिखित कारक उत्तरदायी हैं-

- **नगरीय अपशिष्ट** (Urban Waste) बढ़ते शहरीकरण ने कूड़ा प्रबंधन की एक गंभीर समस्या उत्पन्न की है। यदि वर्तमान स्थिति पर दृष्टिपात करें, तो ज्ञात होता है कि विश्व में, विशेषकर विकासशील देशों में शहरी अपशिष्ट प्रबंधन का सर्वथा अभाव है। इन देशों में खुले मैदान में कूड़ा-करकट निस्तारित कर दिया जाता है। इससे अपशिष्ट में मौजूद प्लास्टिक थैले व बोतल, कांच, फाइबर गुड्स, नायलॉन, धातु आदि मृदा में मिलकर उसे प्रदूषित कर देते हैं।
- **औद्योगिक अपशिष्ट** (Industrial Waste) यह मृदा प्रदूषण का एक बहुत बड़ा कारण है। उद्योगों से निकलने वाले अपशिष्टों में धातुएँ, धातु ऑक्साइड, क्षार, अम्ल, रंजक पदार्थ, कीटनाशक, रसायन आदि भूमि पर बहा दिये जाते हैं। इनसे मृदा की गुणवत्ता प्रभावित होती है।
- **कृषि उत्पादन बढ़ाने** के लिए उर्वरकों, कीटनाशकों तथा रासायनिक पदार्थों का प्रयोग निरंतर बढ़ता जा रहा है। इनके अत्यधिक प्रयोग के कारण मृदा के रासायनिक तथा भौतिक स्वरूप में भारी परिवर्तन होता जा रहा है। उर्वरकों तथा रसायनों का अत्यधिक प्रयोग बैक्टीरिया सहित सूक्ष्म जीवों को भारी नुकसान पहुँचाता है।

- **मृदा अपरदन (Soil Erosion)** भी मृदा प्रदूषण का एक प्रमुख कारक है। मृदा कणों का वायु, जल आदि माध्यमों से स्थानांतरित हो जाना, मृदा अपरदन कहलाता है। मृदा अपरदन से विशेषकर पहाड़ी क्षेत्रों में कृषि भूमि में कमी आती है, बाढ़ व सुनामी आदि से भूमि की उर्वरता प्रभावित होती है।
- **अम्ल वर्षा (Acid Rain)** मृदा प्रदूषण का सबसे प्रभावी कारक है। अम्ल वर्षा के फलस्वरूप मृदा में अम्ल की अधिकता हो जाती है तथा उसका pH मान कम हो जाता है। यदि मृदा का pH मान ७ से नीचे है, तो मृदा बहुत अम्लीय मानी जाती है। अम्ल वर्षा मृदा की उपजता को प्रभावित करती है। कनाडा, नॉर्वे व स्वीडन आदि देश अम्ल वर्षा से सर्वाधिक प्रभावित देश है। अम्ल वर्षा के कारण यहाँ पर बागानी फसलों को काफी क्षति पहुँची है।
- खनन उद्योग द्वारा कृषि भूमि पर बड़ी मात्रा में अपशिष्ट निस्तारित किया जाता है। खनन अपशिष्ट, वर्षा जल के सम्पर्क में आकर मृदा को व्यापक पैमाने पर प्रदूषित करता है।
- **लवणीय जल (Saline Water)** प. राजस्थान, तटीय गुजरात आदि क्षेत्रों में मृदा प्रदूषण का महत्त्वपूर्ण घटक है। लवणयुक्त जल से सिंचाई करने पर मृदा की ऊपरी परत धीरे-धीरे अनुपजाऊ हो जाती है।
- इसके अतिरिक्त विषैले पदार्थों का लीकेज, ठोस अपशिष्टों की डंपिंग, तेल रिसाव आदि भी मृदा प्रदूषण के उत्तरदायी कारक हैं।

मृदा प्रदूषण का प्रभाव (Effect of Soil Pollution)

मृदा प्रदूषण के विभिन्न प्रभाव दृष्टिगोचर होते हैं, जो इस प्रकार हैं-

- प्रदूषित मृदा में उपजायी जाने वाली फसलें तथा फल, सब्जियाँ आदि भी प्रदूषित होती है। फलतः इनका उपयोग करने पर गंभीर स्वास्थ्य समस्याएँ उत्पन्न हो जाती हैं। मृदा प्रदूषण के चलते खाद्य वस्तुओं में कैंसरकारी तत्व 'कार्सिनोजेन' पाया जाता है।
- कीटाणुनाशक, शाकनाशक तथा कवकनाशक विषैली दवाएँ भूमि की प्राकृतिक उर्वरता को कम कर, मृदा को टॉक्सिक बना देती हैं।
- मृदा प्रदूषण के कारण मृदा में निहित सूक्ष्म जीव, बैक्टीरिया आदि नष्ट हो जाते हैं। जिससे न केवल मृदा की उर्वरता प्रभावित होती है, अपितु खाद्य चक्र भी प्रभावित होता है।
- मृदा प्रदूषण के फलस्वरूप मृदा क्षारीयता, मृदा अम्लीयता, मृदा उर्वरता व मृदा की जल धारण क्षमता प्रभावित होती है।
- मृदा प्रदूषण फसल उत्पादकता पर नकारात्मक प्रभाव उत्पन्न करता है। विश्व की लगभग 30 प्रतिशत भूमि लवणीकरण की समस्या से ग्रस्त है।

मृदा प्रदूषण को नियंत्रित करने के उपाय

- शहरी तथा औद्योगिक अपशिष्टों का समुचित प्रबंधन
- रासायनिक उर्वरकों, कीटनाशकों, पेस्टीसाइड्स आदि का सीमित उपयोग तथा इनके विकल्प के रूप में जैविक कृषि को प्रोत्साहन देना।
- मृदा प्रदूषण रोकने के लिए आधुनिक वैज्ञानिक प्रौद्योगिकी का उपयोग किया जाना चाहिए।
- 3R's (Reduce, Reuse and Recycle) तथा 4 R's (Reduce, Reuse, Recycle, Recover) तकनीकि का प्रयोग करना।
- वृक्षारोपण जैसी पारंपरिक विधियों को बढ़ावा दिया जाना चाहिए।
- लवणयुक्त जल से सिंचाई को प्रतिबंधित कर ड्रिप सिंचाई जैसी नवीन पद्धतियों का प्रयोग किया जाना चाहिए।

ठोस अपशिष्ट (Solid Waste)

ठोस अपशिष्ट का अभिप्राय घरों एवं व्यावसायिक प्रतिष्ठानों से निकलने वाले कचरे से है, जो कि प्लास्टिक की बोतलों, पॉलीथिन, कपड़ों, खाद्य पदार्थों के डिब्बों तथा पेपर आदि के रूप में निस्तारित किया जाता है। ठोस अपशिष्ट, विशेषकर शहरों में उत्पन्न एक अत्यंत गंभीर तथा जटिल समस्या है। वर्तमान भारत में कुल लगभग 45 करोड़ जनसंख्या शहरों में निवास कर रही है। भारत की शहरी आबादी हर दिन लगभग 1 लाख मीट्रिक टन ठोस कचरा पैदा करती है। ठोस कचरे की यह मात्रा सालाना 80 लाख टन नाइट्रोजन, फॉस्फेट व पोटेशियम उत्पन्न कर सकती है।

आज ठोस कचरे के निस्तारण की समस्या भारत सहित सम्पूर्ण विश्व के सम्मुख विकराल रूप धारण किए हुए है। बढ़ते शहरीकरण को देखते हुए, यदि इस समस्या का जल्द ठोस प्रबंध नहीं किया गया, तो स्थिति और भी भयावह हो सकती है।

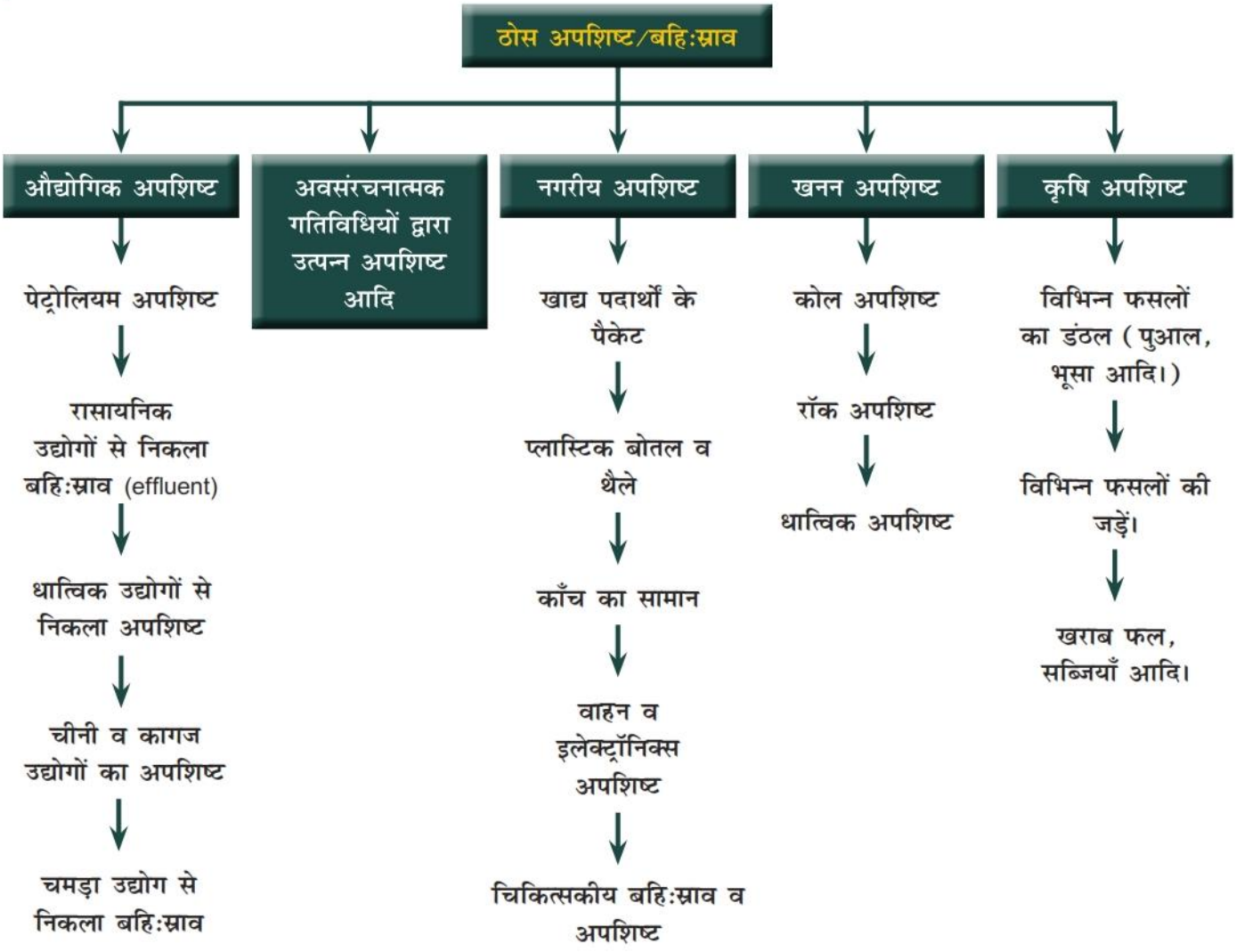

ठोस अपशिष्ट समस्या के कारक

जीवन पद्धति

- पर्यावरणीय उत्तरदायित्व का बोध न होना अथवा गैर-जिम्मेदारी।
- प्रयोग करो और फेंको संस्कृति (use and throw culture)।
- खान-पान की पद्धति में बदलाव।
- क्रय शक्ति में वृद्धि।

तीव्र नगरीकरण

- औद्योगिक विकास।
- ग्रामीण क्षेत्रों में पर्याप्त रोजगार का अभाव।
- नये नगरों का विकास।
- जनसंख्या वृद्धि।

अपर्याप्त सरकारी नीतियां

- नियमन प्रक्रिया में एकरूपता का अभाव।
- लागू करने के स्तर पर कमी।
- व्यापक कानून व नियामक का न होना।

सार्वजनिक उदासीनता

- अपशिष्ट प्रबंधन को लेकर उदासीनता का होना।
- आम जनता की यह धारणा कि इसकी सारी जिम्मेदारी सरकार की है।
- कचरा अधिक उत्पन्न करने की प्रवृत्ति।
- खुले में कचरा फेंकने की प्रवृत्ति, आदि।

ठोस अपशिष्ट का प्रभाव (Effect of Solid waste)

ठोस अपशिष्ट का प्रभाव

पर्यावरण पर प्रभाव

ठोस अपशिष्ट मीथेन गैस के उत्सर्जन का एक बड़ा स्रोत है।

↓

मीथेन ग्रीन हाउस गैस है जो कि वैश्विक ऊष्मन के लिए उत्तरदायी मानी जाती है।

↓

ठोस अपशिष्ट खुले में सड़कर आस-पास की वायु गुणवत्ता पर प्रतिकूल प्रभाव डालता है।

↓

यह जल प्रदूषण के लिए भी उत्तरदायी है।

जलीय पारितंत्र पर प्रभाव

ठोस अपशिष्ट नदियों, झीलों, तालाबों तथा समुद्र आदि के आंतरिक व बाह्य दोनों पारितंत्र पर घातक प्रभाव डालता है।

↓

जलीय जीव ठोस अपशिष्ट के छोटे कणों को खाद्य सामग्री समझकर ग्रहण कर लेते हैं। इससे उनका जीवन संकट में पड़ जाता है।

↓

ठोस अपशिष्ट जलीय जीवों के श्वसन तंत्र पर भी प्रतिकूल प्रभाव डालता है।

मानव तथा जीव-जन्तुओं पर प्रभाव

प्राय: खतरनाक अपशिष्ट साइट के आस-पास रहने वालों में मधुमेह रोग की समस्या देखी गयी है।

↓

श्वसन क्रिया तथा हृदय रोग।

↓

आर्सेनिक, यूरेनियम, लेड व पारा आदि ठोस अपशिष्ट के माध्यम से जल में घुलकर मानव तथा जीवों पर घातक प्रभाव डालते हैं।

↓

ये कैंसर, मस्तिष्क संबंधी तथा जन्मजात विकृतियों के लिए भी उत्तरदायी होते हैं।

ठोस अपशिष्ट का उपचार (Treatment of Solid Waste)

ठोस कचरे के प्रबंधन को लेकर वर्तमान में समग्र तथा प्रभावी दृष्टिकोण का अभाव देखने को मिलता है। यही कारण है कि इसका प्रबंधन दिन-प्रतिदिन और जटिल होता जा रहा है। भारत सहित विश्व के अनेक देशों में ठोस अपशिष्ट के उपचार के लिए निम्नलिखित प्रक्रियाएं व्यवहार में लायी जा रही हैं-

कचरे का पृथक्करण (Waste Segregration)

कचरा प्रबंधन की प्रथम स्टेज कचरे का पृथक्करण है जिसके अंतर्गत दो विधियाँ प्रचलित हैं- प्रथम, घरेलू स्तर पर सूखा कचरा तथा गीला कचरा और द्वितीय, जहाँ वृहद् स्तर पर कचरा विस्तारित किया जाता है वहाँ से कचरे का पृथक्करण। इन प्रक्रियाओं के द्वारा न केवल कचरे से रिसाइकल (Recycle) योग्य तत्वों को एकत्रित किया जाता है, अपितु कचरे की एक बड़ी मात्रा पुनर्प्रयोज्य हो जाती है।

इसके अतिरिक्त कचरे का भार व आयतन कम करने के लिए कचरे का प्रक्रमण (Processing) किया जाता है।

ठोस कचरे का निपटान (Solid Waste Disposal)

जलाना (Incineration)

यह कचरे के निपटान की सबसे पुरानी विधि है। हालांकि यह अपशिष्ट निस्तारण की सबसे प्रचलित तथा आसान विधि है, परन्तु जहाँ एक तरफ यह ठोस अपशिष्ट के निस्तारण का साधन है, तो वहीं दूसरी तरफ वायु प्रदूषण का एक बड़ा कारक भी।

भूमि भराव (Landfills)

यह भी एक प्रचलित प्रक्रिया है जिसके अंतर्गत कचरे को एक बड़े भूभाग पर खुदाई करके डंप कर दिया जाता है। इसके तहत कचरे को रेत या मिट्टी के नीचे दबाया जाता है ताकि जमीन में मिल सके क्योंकि आगे चलकर ऐसे स्थलों पर भवन आदि निर्माण कार्य किए जाते हैं।

इलेक्ट्रॉनिक या ई-अपशिष्ट

वर्तमान वैज्ञानिक युग में कम्प्यूटर आधारित प्रौद्योगिकी का तेजी से विकास हो रहा है। इस प्रक्रिया में कम्प्यूटर, मॉनिटर, की-बोर्ड, माउस, मदरबोर्ड, अडैप्टर, पेन ड्राइव, यूपीएस, वाई-फाई राउटर, प्रिंटर आदि अनेक उपकरण प्रयुक्त हो रहे हैं। यही नहीं, मनोरंजन के साधन के रूप में इस्तेमाल होने वाले टेलीविजन, रेडियो व सीडी प्लेयर तथा वाशिंग मशीन, रेफ्रिजरेटर, इलेक्ट्रिक आयरन, ट्यूबलाईट व माइक्रोवेव ओवन जैसे घरेलू उपयोग की वस्तुएं बड़े पैमाने पर चलन में हैं। जब ये प्रयोग अथवा चलन से बाहर हो जाते हैं, तो ऐसे अपशिष्ट को इलेक्ट्रॉनिक कचरा या ई-अपशिष्ट कहा जाता है।

विश्व के अधिकांश देशों में ई-वेस्ट की समस्या तेजी से उभरी है। ई-अपशिष्ट में अनेक भारी धातुओं तथा खतरनाक रसायन, जैसे- सीसा, बेरिलियम, कैडमियम, क्रोमियम, पारा, ब्रोमिनेट आदि का सम्मिश्रण होता है।

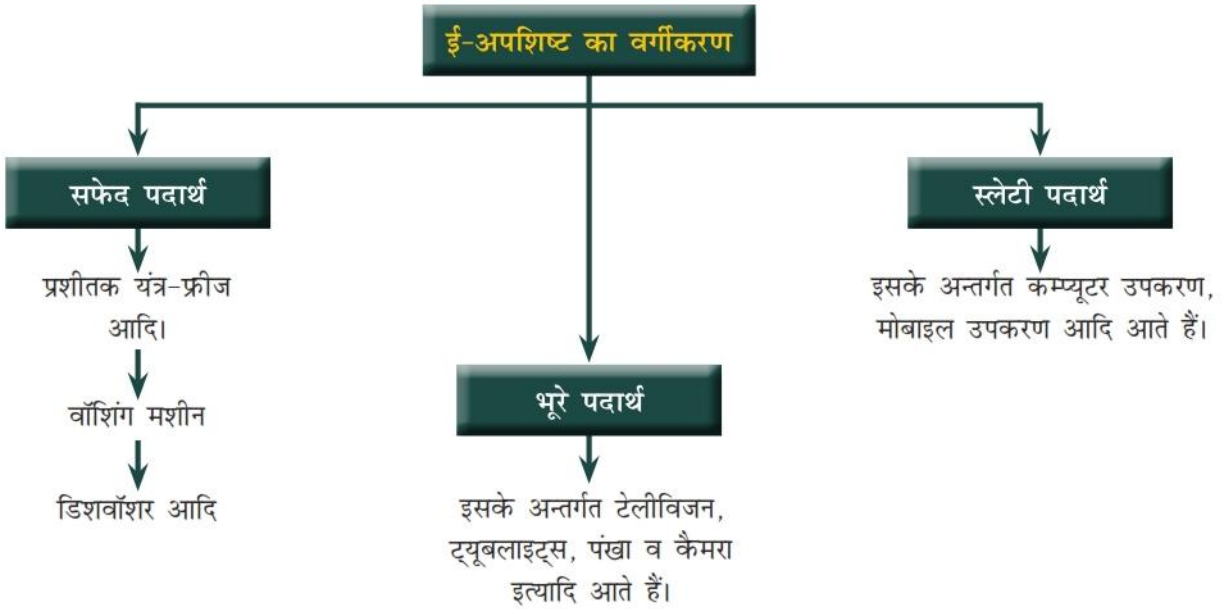

वैश्विक परिदृश्य (Global Scenario)

हाल के वर्षों में संयुक्त राष्ट्र संघ द्वारा कराए गए एक सर्वेक्षण के अनुसार सम्पूर्ण विश्व में 20 से 50 मिलियन टन ई-अपशिष्ट का उत्पादन किया जाता है। तेजी से विकसित होने वाली प्रौद्योगिकी के संदर्भ में 'प्रयोग करो और फेंको' (Use and throw) की प्रवृत्ति बढ़ रही है जिससे ई-अपशिष्ट की समस्या दिन-प्रतिदिन जटिल और विकराल होती जा रही है।

भारतीय परिदृश्य (Indian Scenario)

भारत में इलेक्ट्रॉनिक उद्योग की शुरूआत 60 के दशक से मानी जाती है, परन्तु वास्तविक रूप में कम्प्यूटर क्रांति की शुरूआत 80 तथा 90 के दशक में हुई। जैसे-जैसे भारत आर्थिक तथा प्रौद्योगिकीय विकास करता गया, वैसे-वैसे सूचना व प्रौद्योगिकी का विस्तार होता गया है।

वर्तमान में भारत विश्व में मोबाईल का प्रमुख उपभोक्ता तथा उत्पादक बन चुका है। हाल ही में प्रकाशित एक रिपोर्ट के अनुसार, भारत विश्व का दूसरा सबसे बड़ा मोबाईल उत्पादक देश बन गया है। यही नहीं, भारत विश्व में ई-अपशिष्ट की डंपिंग का हब बनता जा रहा है। अमेरिका, जापान व यूरोपीय देश अपना इलेक्ट्रॉनिक वेस्ट भारत, चीन जैसे देशों में भेज देते हैं।

भारत में सस्ते कुशल श्रम एवं इंजीनियरिंग दक्षता तथा वृहद् बाजार के कारण यह उद्योग काफी तेजी से आगे बढ़ रहा है। भारत के 10 प्रमुख राज्य ई-अपशिष्ट का लगभग 70 प्रतिशत उत्पादित करते हैं। भारत में इलेक्ट्रॉनिक वेस्ट के मुख्य स्रोत (लगभग 65% से अधिक) सरकारी एवं निजी औद्योगिक क्षेत्र हैं। हाल ही में प्रकाशित संयुक्त राष्ट्र की रिपोर्ट के अनुसार, 2007 के मुकाबले 2020 तक भारत में ई-वेस्ट लगभग 500 गुना बढ़ जाएगा।

ई-अपशिष्ट की प्रकृति (Nature of E-Waste)

ई-कचरे में अत्यंत हानिकारक तत्व-सीसा, पारा, कैडमियम, क्रोमियम तथा ब्रोमिनेट आदि होते हैं।

ई-कचरे में घटक	प्रदूषक	मानव शरीर पर प्रभाव
1. प्लास्टिक हाऊसिंग	ब्रोमाइन	एण्डोक्राइन
2. रबड़	फथालेट प्लास्टिसाइजर	हार्मोन्स का असंतुलन, कैंसर
3. केबल इन्सुलेशन/ कोटिंग	पोलिविनाइल क्लोराइड	प्रजनन, रोधक शक्ति
4. तरल क्रिस्टल डिस्प्ले	पारा	मस्तिष्क, त्वचा, स्नायु प्रणाली
5. प्रिन्टेड सर्किट बोर्ड, प्लास्टिक	ब्रोमिनेटिड फ्लेम रिटार्डेंट	स्नायु प्रणाली, हार्मोन्स का असंतुलन
6. कैपैसिटर एवं ट्रांसफार्मर	पॉलीक्लोरिनेटिड वाइफिनाइल	स्नायु प्रणाली, हार्मोन्स का असंतुलन, रोग निरोधक प्रणाली
7. कम्प्यूटर बैटरी	कैडमियम	किडनी, लीवर
8. शीतलक	ओजोन क्षरण करने वाले पदार्थ	साँस प्रणाली, त्वचा
9. स्विच एवं फ्लैट-स्क्रीन मॉनीटर	पारा	मस्तिष्क, त्वचा, स्नायु प्रणाली
10. कैथोड-रे ट्यूब	लेड ऑक्साइड, बेरियम एवं कैडमियम	किडनी, लीवर, त्वचा, स्नायु प्रणाली
11. मदर बोर्ड	बेरीलियम	फेफड़े एवं त्वचा

ये तत्व न केवल मानव स्वास्थ्य, अपितु प्रत्येक पारितंत्र में रहने वाले जीव-जन्तुओं पर प्रतिकूल प्रभाव डालते हैं।

ई-अपशिष्ट न केवल अत्यंत खतरनाक होते हैं, अपितु नॉन-बायोडिग्रेडेबल (Non-Biodegradable) भी होते हैं। फलतः अवैज्ञानिक निस्तारण के चलते ये खाद्य श्रृखंला के माध्यम से पारिस्थितिकी तंत्र में प्रवेश कर जाते हैं।

ई-अपशिष्ट का प्रभाव (Impact of E-Waste)

ई-अपशिष्ट मानव तथा पर्यावरण दोनों के लिए अत्यंत हानिकारक है। जब ई-अपशिष्ट को खाली जमीन अथवा गड्ढों में निस्तारित कर दिया जाता है, तो भारी धातुएं रिसकर भौमजल-स्तर तक पहुँच जाती हैं और मृदा एवं भौम जल तथा अन्य जल स्रोतों को प्रदूषित कर देती हैं। ये प्रदूषक मृदा एवं जल प्रदूषण के माध्यम से हमारी खाद्य श्रृखंला में प्रवेश करके हमारे स्वास्थ्य पर बुरा प्रभाव डालते हैं।

ई-परिसर (E-Complex)

भारत में ई-वेस्ट की समस्या दिन-प्रतिदिन बढ़ती जा रही है। बढ़ती जनसंख्या के कारण दैनिक जीवन में तरह-तरह की वस्तुओं का उपयोग में लाया जाना एक आम बात है तथा उनसे होने वाले ई-वेस्ट की समस्या एक विकराल रूप धारण करती जा रही है।

ई-परिसर भारत में प्रथम अपशिष्ट पुनर्चक्रण इकाई है। इसे सितम्बर, 2005 में प्रारम्भ किया गया है। यह इलेक्ट्रिकल एवं इलेक्ट्रॉनिक इंडस्ट्रीज से निकलने वाले ई-अपशिष्टों को पुनर्चक्रण के माध्यम से उपयोग में लाए जाने के लिए सहायता प्रदान करता है।

ई-वेस्ट प्रबंधन (E-Waste Management)

ई-वेस्ट प्रबंधन के अंतर्गत दो महत्त्वपूर्ण तरीकों का वर्णन निम्नवत् है-

भूमि-भराव (Land Fills)

यह एक आधुनिक वैज्ञानिक तरीका है। सामान्यत: नगरीय क्षेत्रों के आस-पास इसका इस्तेमाल किया जाता है, यह एक बड़े आकार का गड्ढा होता है जिसमें शहर से निकलने वाले ठोस अपशिष्टों को डाल दिया जाता है, पुन: ऊपर से मिट्टी की एक पतली परत डाल दी जाती है। यह प्रक्रिया लगातार चलती रहती है जब तक कि गड्ढा भर न जाए। यह एक सस्ती तकनीक है तथा इससे एक साथ बहुत प्रकार के अपशिष्टों का निपटान किया जा सकता है।

लाभ:- यह सबसे सस्ता एवं आधुनिक तरीका है जिसके अंतर्गत एक बार में पूरे नगर के अपशिष्टों को समाहित किया जा सकता है। इससे निकलने वाली गैसें ऊर्जा के रूप में उपयोग में लाई जा सकती हैं जिससे स्थानीय लोगों को रोजगार का अवसर प्रदान किया जा सकता है।

हानि:- भूमि-भराव विधि में जहाँ एक तरफ कचरे (E-अपशिष्ट) का निदान किया जाता है, वहीं इसके कुछ हानिकारक प्रभाव भी देखने को मिलते हैं:-

- भूमि से उत्सर्जित होने वाली हानिकारक गैस बदबूदार एवं वायु प्रदूषक हो सकती है जिससे तरह-तरह की बीमारियों का होना आम बात होगी।
- वर्षा का जल ई-अपशिष्टों से गुजरकर भू-जल को विषैला कर देता है।
- इससे उत्सर्जित होने वाली गैसें ग्लोबल वार्मिंग को बढ़ावा देती हैं।

भस्मीकरण (Incineration)

भस्मीकरण एक ऐसी विधि है जिसके अंतर्गत ठोस कचरे को अत्यधिक उच्च ताप (लगभग 1000°C) पर जलाया जाता है तथा इससे उत्सर्जित होने वाली गैसों का उपयोग ऊर्जा के उत्पादन में किया जाता है। हानिकारक कचरों से निपटने हेतु इसे एक व्यावहारिक पद्धति के रूप में मान्यता प्राप्त है, परन्तु भारत जैसे कृषि प्रधान देश में बढ़ती वायु प्रदूषण की समस्या के कारण यह पद्धति विवादास्पद बनी रहती है।

लाभ:-

- भस्मीकरण एक निपटान विधि है। अत: इसके लिए निम्न भूमि की आवश्यकता होती है।
- दहन प्रक्रिया पूर्ण होने के बाद अपशिष्ट के भार में भारी मात्रा में गिरावट आती है।
- इससे जल निकायों एवं भौमजल पर प्रदूषण का खतरा नहीं होता है।
- इससे उत्पन्न गैसों का प्रयोग बिजली उत्पादन में होता है।

हानि:-

- इससे उत्सर्जित होने वाले रसायन उच्च प्रदूषक होते हैं जो कि ओजोन क्षरण में सहायक होते हैं।
- उच्च ऊर्जा की आवश्यकता होने की स्थिति में यह अत्यधिक महँगी तकनीक है।
- इसके अंतर्गत कुशल श्रमिक की आवश्यकता होती है।

अपशिष्ट प्रबंधन की आधुनिक तकनीक (Modern Technology for E-Waste Management)

भारत जैसे विशाल देश में ई-वेस्ट की समस्या एक विकराल रूप धारण करती जा रही है। जहाँ एक तरफ शहरीकरण की समस्या का उन्मूलन किया जा रहा है, वहीं दूसरी तरफ बढ़ती आबादी की समस्या के समाधान हेतु नई-नई प्रौद्योगिकी को बढ़ावा देने की जरूरत महसूस हुई।

भारत एक विकासशील देश है। अत: नई-नई उभरती प्रौद्योगिकी में इसकी एक अलग पहचान बनती जा रही है, जहाँ यह एक तरफ शोध, मेडिकल, अभियांत्रिकी, सैन्य तकनीकी आदि में तरक्की कर रहा है, वहीं दूसरी तरफ ई-अपशिष्ट की समस्या के समाधान हेतु नई तकनीकी का निर्माण करने में भी योगदान दे रहा है। ई-अपशिष्ट निपटान की आधुनिक तकनीकें इस प्रकार हैं-

फाइटोट्रांसफॉर्मेशन (Phytotransformation)

फाइटोट्रांसफॉर्मेशन का आशय मृदा एवं जल में उपस्थित कार्बनिक प्रदूषक पदार्थों का पादपों के माध्यम से कम विषाक्त तथा स्थायी पदार्थों के रूप में परिवर्तन से है। इस विधि को फाइटोडिग्रिडेशन भी कहते हैं। इस विधि में पादपों द्वारा कार्बनिक प्रदूषकों का अपघटन

किया जाता है, कुछ एंजाइम्स पादपों में वृद्धि करते हैं तथा कुछ अमोनिया जैसे विषाक्त पदार्थों का अपघटन करते हैं। जीव-जन्तु एवं कीड़ों के माध्यम से ये प्रदूषक खाद्य श्रृंखला को भी प्रभावित करते हैं जिसका परिणाम हानिकारक हो सकता है।

राइजोफिल्ट्रेशन (Rhizofiltration)

यह एक ऐसी तकनीक है जिसका प्रयोग पानी (जल) के उपचार हेतु किया जाता है। चूँकि यह जल प्रदूषक को नियंत्रित करती है अत: मृदा प्रदूषकों का खतरा यथावत ही बना रहता है। इस विधि का प्रयोग नमभूमियों तथा ज्वारनद मुखों में हानिकारक प्रदूषक (यूरेनियम, कैडमियम) के नियंत्रण हेतु किया जाता है।

माइको रेमिडिएशन (Myco-Remediation)

अपशिष्ट पदार्थों में कार्बनिक तथा अकार्बनिक दोनों प्रकार के तत्व पाये जाते हैं। कुछ कार्बनिक पदार्थों का अपघटन उपस्थित कवकों (Fungi) के माध्यम से होता है जो आहार जाल के घटकों में सहायक होते हैं तथा पर्यावरण संतुलन को बनाए रखने में सहायक होते हैं।

फाइटोवोलैटिलाइजेशन (Phytovolatilization)

इस विधि द्वारा मृदा प्रदूषकों को कम किया जाता है। इस प्रक्रिया द्वारा पादपों की सहायता से मृदा में उपस्थित हानिकारक प्रदूषक (पारा, यूरेनियम) को ग्रहण करके वाष्पित कर दिया जाता है तथा प्रदूषण को बहुत हद तक नियंत्रित किया जाता है।

फाइटोरेमिडिएशन (Phytoremediation)

वायुमंडल में उपस्थित भिन्न-भिन्न प्रकार की गैसों द्वारा प्रदूषण की समस्या दिनों-दिन बढ़ती जा रही है। अम्ल वर्षा के कारण मृदा प्रदूषण की समस्या उनमें महत्त्वपूर्ण है। फाइटोरेमिडिएशन विधि द्वारा पौधों को वातावरणीय प्रदूषण की समस्या के उपचार हेतु प्रयोग किया जाता है। यह सबसे सस्ती तथा समय साध्य तकनीकी है।

फाइटोस्टेविलाइजेशन (Phytostabilization)

यह तकनीक उन स्थानों पर प्रयोग में लाई जाती है जहाँ मृदा प्रदूषण की समस्या कम है तथा वायु प्रदूषण की समस्या चरम सीमा पर है। इस विधि के माध्यम से पादप प्रदूषित मृदा से प्रदूषणों के स्थानान्तरण एवं गतिशीलता को नियंत्रित करते हैं तथा उनका अवशोषण कर वायुमंडलीय संतुलन को बनाए रखने में सहायक होते हैं।

फाइटोएक्सट्रेक्शन (Phytoextraction)

इस विधि में मृदा में उपस्थित हानिकारक प्रदूषक पौधों द्वारा अवशोषित कर पत्तियों में संग्रहीत कर लिये जाते हैं। यह प्रक्रिया निरंतर चलती रहती है।

ऑयल जैपर तकनीक (Oil Zapper Technique)

ऑयल जैपर एक प्रकार से बैक्टीरिया (लगभग पाँच प्रकार के) का संयुक्त रूप है, जिसे डॉ. बनवारी लाल द्वारा सन् 1966 में निर्मित किया गया था। इसमें उपस्थित बैक्टीरिया ऑयल में मौजूद हाइड्रोकार्बन का अपघटन करते हैं तथा जल एवं कार्बन-डाईऑक्साइड में परिवर्तित कर देते हैं, जो पर्यावरण संतुलन में सहायक होते हैं।

रेडियोएक्टिव प्रदूषण (Radio Active Pollution)

नाभिकीय प्रदूषण पर्यावरणीय में प्रदूषणों में सर्वाधिक हानिकारक प्रदूषण है। रेडियोधर्मी कचरा वह कचरा है, जिसमें रेडियोधर्मी पदार्थ मौजूद हों। परमाणु ऊर्जा उत्पादन के विभिन्न चरणों के दौरान उत्पादित अपशिष्ट पदार्थ को सामूहिक रूप से परमाणु कचरे के रूप में जाना जाता है। इस कचरे से उत्पन्न विकिरण प्रदूषण को नाभिकीय प्रदूषण कहा जाता है। सामान्य रूप में यदि देखें, तो रेडियोधर्मी प्रदूषण मुख्य रूप से वायुमंडल में बमों के विस्फोट व परीक्षण के द्वारा, परमाणु बिजली घरों के अपशिष्ट कचरे द्वारा, परमाणु संयंत्रों में नाभिकीय रिसाव द्वारा हो रहा है।

नाभिकीय ऊर्जा जनन के समय 'प्राकृतिक रेडियोसक्रिय पदार्थों' को विभिन्न प्रक्रियाओं से गुजरना होता है जिससे उत्पन्न अपशिष्टों का तदनुसार प्रबंधन व विनियोजन किया जाता है। सम्पूर्ण नाभिकीय ऊर्जा चक्र में बहुत से रेडियोधर्मी पदार्थ उत्सर्जित होते हैं। इसके अतिरिक्त, यूरेनियम विखण्डन के द्वारा उत्पादित रेडियोसक्रिय पदार्थ, ट्रांसयूरेनिक तत्व एवं ईंधन की पुनर्योजित व्यवस्था में पृथक होने वाले पदार्थ आते हैं। प्राकृतिक यूरेनियम अयस्क, सान्द्रण, संवर्धन से लेकर सम्पूर्ण नाभिकीय ईंधन चक्र प्रक्रम में होने वाले परिवर्तनों के दौरान अत्यधिक घातक रेडियोसक्रिय पदार्थ उत्पन्न होते हैं।

नाभिकीय अपशिष्ट प्रबंधन में द्रव्य अपशिष्टों को तीन श्रेणियों में विभाजित किया गया है।

- निम्नस्तर के द्रव्य अपशिष्ट जिनकी रेडियोधर्मिता 0 से 1 माइक्रो क्यूरी प्रति लीटर है।
- मध्यमस्तरीय द्रव्य अपशिष्ट जिनकी रेडियोधर्मिता 1 माइक्रो क्यूरी से 100 क्यूरी प्रति लीटर है।
- उच्चतर द्रव्य अपशिष्ट जिनकी रेडियो सक्रियता 100 क्यूरी प्रति लीटर है।

नाभिकीय प्रदूषण के प्रमुख स्रोत

- प्राकृतिक यूरेनियम
- कोबाल्ट
- थोरियम
- स्ट्रॉन्शियम

विकिरण प्रदूषण का प्रभाव

विकिरण अथवा नाभिकीय प्रदूषण का पड़ने वाला प्रभाव न केवल तात्कालिक होता है, अपितु दीर्घकालिक भी। अन्य प्रदूषकों की अपेक्षा विकिरण प्रदूषण जीवों पर अधिक खतरनाक प्रभाव डालते हैं।

- विकिरण प्रदूषण के कारण जीन एवं गुणसूत्रों के लक्षणों में परिवर्तन हो जाता है। इसका ज्वलंत उदाहरण द्वितीय विश्वयुद्ध के दौरान जापान के नागासाकी तथा हिरोशिमा पर अमेरिका द्वारा गिराए गए परमाणु बमों के प्रभावों को देख सकते हैं। इन परमाणु विस्फोटों से दोनों शहरों की लगभग सम्पूर्ण जनसंख्या समाप्त हो गयी। इतना ही नहीं, विकिरण से प्रभावित लोगों के आनुवांशिक लक्षण बदल गए थे।
- ऐसा देखा गया है कि परमाणु ऊर्जा केन्द्रों के आस-पास के वातावरण में रेडियोएक्टिव पदार्थ स्रावित होते रहते हैं। इन रेडियो एक्टिव पदार्थों में से एक पदार्थ ट्राईटियम है। यह हवा से जमीन में पहुँचता है। यह प्रक्रिया वर्षा के दिनों में अधिक होती है।
- विकिरण प्रदूषण न केवल मानव अथवा जीव-जन्तुओं को प्रभावित करता है, अपितु यह पादपों व वनस्पतियों पर भी प्रभाव डालता है। हरे पादप गामा किरणों के प्रति अत्यधिक संवेदनशील होते हैं। विकिरण प्रदूषण के सम्पर्क में आने पर पौधों की आयु, उनकी वृद्धि दर, फल व बीजांकुर आदि की प्रक्रिया पर प्रतिकूल प्रभाव पड़ता है।
- विकिरण प्रदूषण का प्रभाव मृदा पारितंत्र तथा जलीय पारितंत्र आदि पर भी देखा गया है।

रेडियोधर्मी कचरा (Radio Active Waste)

वस्तुत: परमाणु उद्योगों से निकलने वाली प्रयुक्त यूरेनियम ईंधन की छड़ें (Spent Fuel Rods), उच्च प्रदीप्त रिएक्टर के हिस्से तथा पुन: प्रयोग वाला कचरा आदि को रेडियोधर्मी कचरे के अन्तर्गत शामिल किया जाता है। परमाणु उद्योग ही निम्नस्तरीय रेडियोधर्मी कचरे का भी प्रमुख उत्पादक है, परन्तु इसकी कुछ मात्रा अन्य स्रोतों; जैसे- अस्पतालों, विश्वविद्यालयों एवं औद्योगिक स्थापनाओं से भी प्राप्त होती है। रेडियम अथवा ट्राईटियम युक्त कचरा पर्यावरण में विनिर्मित प्रदीप्त पदार्थों (Luminescent Materials) के निस्तारण से भी पहुँच सकता है।

रेडियोधर्मी कचरे का संचालन एवं प्रबंधन

रेडियोधर्मी कचरे का निस्तारण एक जटिल समस्या है और इसका प्रबंधन अत्यंत सावधानीपूर्वक किया जाना चाहिए:-

तनुकरण एवं विसरण (Dilute and disperse):- रेडियोधर्मी कचरे को किसी स्थान पर डंप करने अथवा छोड़ने से पूर्व इसे सावधानीपूर्वक शोधित करके विकिरण मुक्त बनाना। गहरे समुद्र या मिट्टी में छोड़ने से पूर्व एक निश्चित स्तर तक रेडियोधर्मी कचरे का विसरण एवं तनुकरण (न्यूनीकरण) किया जा सकता है।

विलम्बन करना एवं क्षयित करना (Delay and Decay):- किसी लघु अर्द्ध-आयु वाले रेडियोधर्मी पदार्थ को भंडारों में तब तक रोके रहना चाहिए, जब तक कि उसकी रेडियोधर्मिता प्राकृतिक क्षय द्वारा क्षीण न हो जाए।

संकेन्द्रण एवं भंडारण (Concentration and Contain):- उच्च स्तरीय विकिरण युक्त कचरे को अनेक लघु मात्रा वाले भंडारों में मानव बस्तियों तथा वन्यजीव या जलीय पारितंत्र आवासों से दूर निर्जन स्थान पर जमा कर दिया जाता है।

नाभिकीय प्रदूषण को नियंत्रित करने के उपाय

परमाणु ऊर्जा तकनीकि जितनी लाभकर है उससे कहीं अधिक इसके खतरे भी हैं। यह खतरा विकिरण प्रदूषण के माध्यम से उत्पन्न होता है जो कि ऊर्जा प्राप्ति के लिए प्रयुक्त ईंधन (यूरेनियम) के द्वारा निर्मुक्त होता है। नाभिकीय अपशिष्ट (राख व छड़ें) का सुरक्षित निस्तारण वैज्ञानिकों के लिए आज भी एक जटिल समस्या है। फिर भी निम्नलिखित रूपों में नाभिकीय प्रदूषण को नियंत्रित किया जा सकता है-

- नाभिकीय हथियारों के भूमिगत, जलमंडल अथवा वायुमंडल में परीक्षण पर रोक लगायी जाए।
- परमाणु ऊर्जा केन्द्रों की स्थापना प्रविधि में उच्च तकनीकी का प्रयोग किया जाए तथा उन्हें सौ प्रतिशत विकिरण प्रूफ बनाया जाए।
- ऊर्जा केन्द्रों, चिकित्सा केन्द्रों तथा अनुसंधान केन्द्रों से नि:सृत नाभिकीय अपशिष्टों का वैज्ञानिक व सुरक्षित निस्तारण किया जाए।
- नाभिकीय हथियारों पर रोक लगायी जाये तथा नि:शस्त्रीकरण की प्रक्रिया अपनायी जाए।

नाभिकीय दुर्घटनाएँ

यूरेनियम के आविष्कार तथा उनके विविध अनुप्रयोगों के साथ-ही-साथ इससे जुड़े खतरे अति त्रासद हैं। अब तक सौ से अधिक नाभिकीय दुर्घटनाएँ घटित हो चुकी हैं जिनमें थ्री माइल आईलैंड-1979, चर्नोबिल नाभिकीय संयंत्र-1986 तथा फुकुशिमा-2011 सर्वाधिक विनाशकारी सिद्ध हुई हैं। अकेले चिर्नोबिल संयंत्र में 2500 लोग विकिरण की चपेट में आ गए थे जबकि फुकुशिमा संयंत्र में हुए विस्फोट के दौरान सैकड़ों लोग प्रभावित हुए थे।

ताप प्रदूषण (Thermal Pollution)

ताप विद्युत गृहों में ईंधन के दहन से विनाशकारी गैस, द्रव एवं ठोस पदार्थ निकलते हैं जो पर्यावरण को घातक नुकसान पहुँचा रहे हैं। ताप प्रदूषण का सबसे अधिक प्रभाव जलीय जीवों पर पड़ रहा है। ताप प्रदूषण के कारण जल के तापमान में अप्रत्याशित वृद्धि होती है जिसके फलस्वरूप जलीय पारितंत्र में निवास करने वाले जीव नष्ट हो जाते हैं। वस्तुत: वायु तापमान की अपेक्षा जल का तापमान अधिक स्थिर रहता है। इसीलिए तापमान में अचानक वृद्धि के प्रति जलीय जीव अनुकूलित नहीं होते है और तापमान में 1°C की कमी या वृद्धि जलीय जीवों पर प्रतिकूल प्रभाव डालती है।

ताप प्रदूषण के प्रमुख कारक

- कोयला आधारित विद्युत संयंत्र
- औद्योगिक बहि:स्राव
- गहरे सागरीय गीजर
- परमाणु ऊर्जा संयंत्र
- ज्वालामुखी उद्‌गार
- तटीय क्षेत्रों में वनाग्नि

ताप प्रदूषण प्राकृतिक व मानवीय दोनों कारणों से हो रहा है। ताप प्रदूषण के लिए ज्वालामुखी उद्‌गार तथा गहरे सागरीय गीजर जैसी प्राकृतिक घटनाएँ भी उत्तरदायी हैं। मार्च, 2018 में हवाई द्वीप में हुये ज्वालामुखी विस्फोट के दौरान व्यापक स्तर पर जलीय व स्थलीय पारितंत्र क्षतिग्रस्त हुआ। इसी प्रकार प्राकृतिक गीजर जब अचानक उत्सृत होते हैं तो उनके आस-पास के जलीय पर पारितंत्र पर प्रतिकूल प्रभाव पड़ता है।

इसी प्रकार ताप ऊर्जा संयंत्रों, औद्योगिक उपक्रमों आदि विभिन्न मानवीय गतिविधियों द्वारा भी बड़े पैमाने पर ताप प्रदूषण हो रहा है। इन सभी क्षेत्रों में प्रशीतक तथा क्लीनिंग के शीतल जल का उपयोग किया जा रहा है। इस प्रक्रिया में निकला गर्म जल नदियों तथा समुद्र आदि में प्रवाहित कर दिया जाता है जिसके परिणामस्वरूप जलीय पारितंत्र बुरी तरह प्रभावित होता है।

विभिन्न प्रदूषणों के स्रोत, प्रभाव एवं नियंत्रण

प्रदूषक	स्रोत	प्रभाव	नियंत्रक उपाय
कार्बन डाईऑक्साइड	– जीवाश्म ईंधनों के दहन, वनाग्नि, जीवित प्राणियों द्वारा श्वसन आदि।	– अत्यधिक संकेंद्रण बढ़ने से वैश्विक तापन वृद्धि द्वारा जलवायु परिवर्तन।	– जीवाश्म ईंधनों का प्रयोग सीमित, नवीकरणीय ऊर्जा के प्रयोग को बढ़ावा दिया जाए तथा वनावरण में वृद्धि की जाए।
कार्बन मोनोऑक्साइड	– वनाग्नि, ऑटोमोबाइल औद्योगिक प्रतिष्ठान। – जैविक पदार्थों का अपूर्ण दहन, सिगरेट का धुआँ आदि। – सबसे बड़ा योगदान परिवहन।	– रक्त की ऑक्सीजन धारण क्षमता को घटाता है। – मानसिक थकावट, हृदय एवं श्वसन संबंधी बीमारियों को बढ़ाता है। – हल्के संकेन्द्रण (50 से 100 PPM) होने पर।	– ऑटोमोबाइल व उद्योगों की दहन प्रणाली में सुधार। – घरों में जलावन तथा वनाग्नि पर नियंत्रण स्थापित किया जाये। – सिगरेट-तम्बाकू पर रोक।
क्लोरोफ्लोरो कार्बन	– रेफ्रिजरेटर, एरोसॉल एयरकंडीशनर, फोम आदि। – सबसे बड़ा स्रोत रेफ्रिजरेशन- 26% तथा एरोसॉल 25.6%।	– ओजोन क्षरण। – पराबैंगनी किरणों के धरती पर पहुँचने के कारण कैंसर व चर्म रोग आदि।	– प्रशीतक के उपकरणों को CFC उत्पादन रहित बनाना।
सल्फर डाईऑक्साइड (SO_2)	– ज्वालामुखी उद्‌गार, सल्फरयुक्त कोयले का दहन (उद्योग व ऊर्जा संयंत्रों में), घरेलू ईंधन का प्रयोग। – इसका सबसे बड़ा स्रोत औद्योगिक क्षेत्र (65%) तथा ऊर्जा (25%) है।	– सल्फर डाईऑक्साइड जल के साथ अभिक्रिया करके सल्फ्यूरिक अम्ल का निर्माण करती है, जो अम्ल वर्षा के लिए उत्तरदायी है। – श्वसन संबंधी बीमारियों को गंभीर कर देती है। भवनों, कागज व चमड़ा आदि को क्षतिग्रस्त करती है।	– निम्न सल्फर वाले जीवाश्म ईंधनों का प्रयोग। – नवीकरणीय ऊर्जा संसाधनों को बढ़ावा।

प्रदूषक	स्रोत	प्रभाव	नियंत्रक उपाय
	– सीसा युक्त गैसोलिन। – कीटनाशक।	– प्लैंकटन की विकास प्रक्रिया पर नकारात्मक प्रभाव।	
डिटर्जेंट (फॉस्फेट्स)	– घरेलू एवं औद्योगिक बहि:स्राव।	– जलीय पारितंत्र पर विनाशकारी प्रभाव। – पेयजल दूषित। – जल में घुलित ऑक्सीजन में कमी।	– अपशिष्ट जल का ट्रीटमेंट। – डिटर्जेंट के प्रयोग को सीमित करना।

प्रदूषक	स्रोत	प्रभाव	नियंत्रक उपाय
नाइट्रोजन डाईऑक्साइड	– मोटर वाहनों एवं उद्योगों में उच्च तापमान पर ईंधनों का दहन। – कोयला आधारित ऊर्जा संयंत्र। – इसमें 45% तक यातायात का योगदान है।	– श्वसन एवं हृदय रोगों को तीव्र करती है। – अम्ल वर्षा का कारण बनती है। – प्रकाश-रासायनिक स्मॉग का निर्माण करता है।	– ऑटोमोबाइल व जीवाश्म ईंधन। – सार्वजनिक यातायात को बढ़ावा।
हाइड्रोकार्बन	– ऑटोमोबाइल एवं औद्योगिक भट्टियां। – जीवाश्म ईंधनों का अपूर्ण दहन। – वनाग्नि तथा घरेलू पारंपरिक जलावन।	– रासायनिक स्मॉग। – कुछ कैंसर जनक। – उच्च सांद्रण पौधों और प्राणियों के लिए विषैला हो सकता है।	– उन्नत प्रौद्योगिकी का विकास करना जिससे ऑटोमोबाइल तथा औद्योगिक केन्द्रों में प्रयुक्त ईंधनों की दहन प्रक्रिया को सुधारा जा सके। – नगरीय तथा कृषि अपशिष्टों का समुचित प्रबंधन।
मीथेन	आर्द्रभूमि – प्राकृतिक सांसाधनों (तेल, गैस, कोयला) का खनन। – धान की कृषि। – कृत्रिम जलाशय/बांध आदि। – पशुपालन। – किण्वन (अपशिष्टों को सड़ाना अथवा जैविक खाद)	– ग्रीन हाउस प्रभाव उत्पन्न करने में सहायक।	– नगरीय तथा कृषि अपशिष्टों का समुचित प्रबंधन।
रेडियोएक्टिव पदार्थ	– प्राकृतिक स्रोत शैल एवं मृदा। – नाभिकीय अस्त्र परीक्षण। – नाभिकीय ऊर्जा।	– रक्त व त्वचा कैंसर। – आनुवांशिक त्रुटियाँ।	– नाभिकीय अस्त्रों के परीक्षण पर पूर्ण प्रतिबंध।
पारा	– औद्योगिक अपशिष्ट। – प्राकृतिक चट्टानें तथा वाष्पीकरण।	– विशेषकर मानव स्वास्थ्य के लिए अत्यंत विषैला।	– अपशिष्ट जल का समुचित प्रसंस्करण।
सीसा	– ऑटोमोबाइल एवं विभिन्न औद्योगिक प्रतिष्ठानों में जीवाश्म ईंधनों का दहन।	– मानव तंत्रिका तंत्र व पाचन तंत्र पर प्रतिकूल प्रभाव।	– सीसायुक्त गैसोलिन एवं कीटनाशकों को प्रतिबंधित किया जाये।

अध्याय 9

भूमण्डलीय तापन
Global Warming

भूमण्डलीय तापन अथवा वैश्विक ऊष्मन एवं जलवायु परिवर्तन एक-दूसरे से अन्तर्संबंधित हैं क्योंकि वैश्विक तापन का अंतिम परिणाम जलवायु में स्थानीय, प्रादेशिक एवं भूमण्डलीय स्तर पर भारी परिवर्तन के रूप में हो सकता है। जिसका प्रभाव न केवल मानव जीवन अपितु समस्त पारितंत्र पर पड़ेगा।

वैश्विक ऊष्मन (Global Warming)

वैश्विक उष्णता पृथ्वी और समुद्र के वातावरण के औसत तापन में वृद्धि को कहते हैं। वैश्विक ऊष्मन के अंग्रेजी शब्द 'Global Warming' का सर्वप्रथम प्रयोग ब्रिटिश पर्यावरणविद् ब्रोएकर द्वारा 1970 के दशक में किया गया था। वैश्विक उष्णता औद्योगिक क्रांति से ग्रीन हाउस गैसों में वृद्धि के परिणामस्वरूप पृथ्वी के निचले वायुमण्डल के औसत तापमान में क्रमिक बढ़ोत्तरी है।

वैश्विक ऊष्मन के कारक

पिछले कुछ दशकों में पृथ्वी और इसके वायुमण्डल का तापमान लगातार बढ़ रहा है जिसके मुख्य कारक पर्यावरण प्रदूषण के लिए उत्तरदायी ग्रीन हाउस गैसें तथा पर्यावरण प्रदूषण हैं।

वस्तुतः वैश्विक ऊष्मन के कारकों को दो वर्गों में वर्गीकृत किया जाता है:-

प्राकृतिक कारक

वैश्विक ऊष्मन एक प्राकृतिक परिघटना भी है, जो लाखों वर्षों से पृथ्वी पर होती रही है। प्राकृतिक कारकों द्वारा वैश्विक तापन तथा शीतलन अत्यन्त मंद गति से होता है और ऊष्मन एवं शीतलन की ये प्राकृतिक प्रक्रियाएँ उत्क्रमणीय होती हैं।

मानवीय कारक

आधुनिक युग में मानव कई ऐसी क्रियाएँ-प्रक्रियाएँ अपनाता चला गया, जिससे पर्यावरण तथा जलवायु के सम्मुख जटिल समस्याएँ उत्पन्न होती चली गयीं। स्मरणीय है कि मानव जनित भूमण्डलीय तापन तेजी से होता है तथा उत्क्रमणीय नहीं होता अर्थात् एक निश्चित सीमा प्राप्ति के पश्चात् वह दुबारा वापस नहीं होता है। मानव प्रेरित वैश्विक ऊष्मन से जलवायु में स्थानीय, प्रादेशिक तथा वैश्विक स्तर पर अल्पकालिक से लेकर दीर्घकालिक परिवर्तन हो सकते हैं।

वैश्विक ऊष्मन की प्रक्रिया

वैश्विक ऊष्मन तथा वैश्विक औसत तापमान में वृद्धि के प्रमुख स्रोतों, कारकों एवं प्रक्रियाओं का अध्ययन निम्नलिखित रूपों में किया जाता है:-

हरित गृह प्रभाव (Green House Effect)

सामान्य वायुमंडलीय प्रक्रिया यह है कि पृथ्वी के धरातल पर तापमान का अनुरक्षण, पृथ्वी पर आने वाली सूर्य किरणों की ऊर्जा और वहाँ से अंतरिक्ष में वापस जाने वाली ऊष्मा के ऊर्जा संतुलन द्वारा होता है। जब वायुमंडल में हरित गृह गैसों के संकेन्द्रण में वृद्धि होती है, तो वे अंतरिक्ष में विकसित होने वाली ऊर्जा को रोक कर अवशोषित कर लेती हैं, फलस्वरूप पृथ्वी के तापमान में वृद्धि होने लगती है। यही घटना हरित गृह प्रभाव कहलाती है।

दूसरे शब्दों में कहें, तो कार्बन डाईऑक्साइड के आवरण प्रभाव के कारण पृथ्वी की सतह के प्रगामी तापन को हरित गृह प्रभाव कहा जाता है।

Note

हरित गृह शीशे की दीवारों एवं छत युक्त विशेष प्रकार के गृह होते हैं, जिनमें पर्वतों एवं अति ठण्डे प्रदेशों में सब्जी, फल व पुष्प आदि की भी कृषि की जाती है। शीशे के इस गृह में, सूर्य की लघु तरंगीय विकिरण तो प्रविष्ट कर जाती है, परन्तु पृथ्वी के धरातल से वापस होने वाला दीर्घ तरंगीय पार्थिव विकिरण इन दीवारों के पार जाने में असमर्थ होता है, फलतः उस हरित गृह का तापमान बाहर के तापमान से अधिक हो जाता है और उसमें सब्जियों की सफलतापूर्वक खेती होती है।

लगभग ऐसी ही स्थिति पृथ्वी पर वायुमण्डलीय गैंसों के आवरण के द्वारा उत्पन्न की जाती है। जलीय वाष्प, कार्बन डाईऑक्साइड (CO_2), नाइट्रस ऑक्साइड (N_2O), मीथेन (CH_4) और ओजोन पृथ्वी के वायुमण्डल में पाई जाने वाली प्राथमिक ग्रीनहाउस गैसें हैं। वायुमण्डल में पायी जाने वाली ये गैसें ताप अवशोषक गैसें हैं। सूर्य से आने वाली लघु तरंगीय सौर विकिरण इन गैसों के आवरण को पार करके पृथ्वी के धरातल तक पहुँचने में तो सफल होती हैं, परन्तु पृथ्वी के धरातल से वापस होने वाला दीर्घ तरंगीय पार्थिव विकिरण इन गैसों को पार करने में असमर्थ होता है अर्थात् पार्थिव विकिरण इन गैसों द्वारा अवशोषित कर लिया जाता है। फलतः उनमें ऊष्मा संचित हो जाती है। इस प्रकार इन गैसों की मात्रा में होने वाली वृद्धि का सीधा परिणाम वायुमंडल में ऊष्मा के संग्रह में वृद्धि करता है।

इस प्रकार कार्बन डाईऑक्साइड आदि गैसों की मात्रा में वृद्धि और वैश्विक तापमान में वृद्धि के बीच सीधा संबंध होता है। इसीलिए इस घटना को वैश्विक ऊष्मन या हरित गृह प्रभाव कहते हैं। इसीलिए कार्बन डाईऑक्साइड, मीथेन, नाइट्रस ऑक्साइड, क्लोरोफ्लोरो कार्बन, परफ्लोरोकार्बन आदि गैसों को हरित गृह गैसें (Green House Gases) भी कहते हैं। स्मरणीय है कि हरितगृह प्रभाव (Green House) शब्द का प्रयोग सबसे पहले स्वीडन के रसायनशास्त्री स्वांते अगस्ट आर्रहीनियस ने 1896 ई. में किया था।

हरित गृह गैसें (Green House Gases)

वायुमण्डल में विभिन्न ग्रीनहाउस गैसें प्राकृतिक रूप से उपस्थित होती हैं, परन्तु ये मानवीय क्रियाओं; जैसे- जीवाश्म ईंधनों के दहन आदि से भी उत्पन्न होती हैं। ये ग्रीन हाउस गैसें वायुमण्डल के तापमान को बढ़ाने के लिए उत्तरदायी हैं।

इन गैसों का विस्तृत विवरण निम्नलिखित रूप में किया जा सकता है:-

कार्बन-डाईऑक्साइड (CO_2):- हरित गृह प्रभाव की दृष्टि से यह बहुत महत्त्वपूर्ण गैस है। 1780 से पूर्व वायुमंडल में कार्बन-डाईऑक्साइड की मात्रा 0.0294 प्रतिशत अर्थात् 294ppm थी, जबकि 1860 से 1920 के बीच की अवधि में 13% की वृद्धि के साथ यह 334ppm हो गई। वर्तमान में जैव ईंधनों के प्रयोग में लगभग 4% की वृद्धि हो रही है। इस गति से सन् 2030 तक वायुमंडल में कार्बन-डाइ-ऑक्साइड की मात्रा दोगुनी होने की संभावना है।

कार्बन-डाईऑक्साइड की मात्रा बढ़ने से वायुमण्डल के तापमान में वृद्धि होती है क्योंकि यह गैस लघु तरंगीय सौर किरणों के लिए तो पारदर्शी होती है, परन्तु दीर्घ तरंगीय पार्थिव किरणों का अवशोषण करती है। इससे वायुमण्डल में ऊष्मा की मात्रा में वृद्धि हो जाती है। एक अनुमान के अनुसार, यदि जीवाश्म ईंधनों के प्रयोग की वर्तमान दर को आधा कर दिया जाए, तो कार्बन-डाईऑक्साइड की मात्रा सन् 2050 तक दोगुनी हो जाएगी। इसके साथ ही यदि वायुमंडल में कार्बन-डाईऑक्साइड की वर्तमान वृद्धि दर जारी रही, तो 21वीं शताब्दी के अन्त तक वायुमंडलीय तापमान में 4.5° से. की वृद्धि हो जाएगी।

जीवाश्म ईंधनों के जलने से प्रतिवर्ष 5 करोड़ टन से भी अधिक कार्बन-डाईऑक्साइड की उत्पत्ति उत्तरी तथा मध्य अमेरिका, एशिया व यूरोपीय गणतंत्रों में होती है। कार्बन-डाईऑक्साइड का उत्सर्जन जहाँ एक ओर गंभीर स्थिति में है, वहीं दूसरी ओर वननाशन ने स्थिति को और जटिल तथा गंभीर बना दिया है क्योंकि वन कार्बन-डाईऑक्साइड के मुख्य अवशोषक होते हैं। अतः वननाशन CO_2 के वातावरण में वृद्धि का प्रमुख कारण भी बन जाता है।

वर्ष	कार्बन-डाईऑक्साइड का संकेन्द्रण	प्रति दस लाख के अनुपात में कार्बन
1825	0.021	210 ppm
1885	0.028	280 ppm
1985	0.035	350 ppm
2000	0.036	360 ppm
2018	0.041	410 ppm
2050 (अनुमानित)	0.045	450 ppm

मीथेन (CH_4)

मीथेन भी एक अत्यंत महत्त्वपूर्ण हरितगृह गैस है। यह कुल हरितगृह गैसों का लगभग एक-चौथाई भाग है। मीथेन की तापवृद्धि क्षमता 36 है। यह गैस कार्बन-डाईऑक्साइड की तुलना में 20 गुना अधिक प्रभावी है। इसे सामान्यत: दलदली गैस (Marsh Gas) कहते हैं क्योंकि यह आर्द्रभूमि तथा दलदल में उत्पन्न होती है। यह जल में घुलनशील है और प्राकृतिक गैस की मुख्य घटक भी है। मीथेन न केवल स्थल पर, अपितु महासागरीय नितल के नीचे भी पायी जाती है। यह मानवीय क्रियाकलापों से भी पैदा होती है। वास्तव में विश्व की दो-तिहाई मीथेन मानवीय क्रियाओं से ही पैदा होती है। पिछले 100 वर्षों में वातावरण में मीथेन के सान्द्रण में दुगुनी वृद्धि हुई है।

कोयला खनन, पेट्रोलियम उद्योग, चावल की खेती, बायोमास का दहन, दलदली भूमि तथा अपशिष्ट उपचार (वेस्ट ट्रीटमेंट) आदि मीथेन की उत्पत्ति के प्रमुख स्रोत हैं। मीथेन गैस पशुओं द्वारा जुगाली करने तथा दीमक द्वारा भी पैदा होती है। चावल की कृषि तथा आर्द्र भूमियाँ 25-30% तक मीथेन उत्पादन के लिए उत्तरदायी हैं। हालांकि, वायुमंडल में CO_2 की अपेक्षा मीथेन का संकेन्द्रण बहुत कम है, लेकिन मीथेन का एक कण, कार्बन-डाईऑक्साइड के एक कण की तुलना में आठ गुना अधिक हरित गृह गैस पैदा करता है अर्थात् CO_2 की अपेक्षा मीथेन की प्रभाविता अधिक है।

क्लोरो-फ्लोरो कार्बन (Chloro-fluoro Carbon)

यह एक कृत्रिम रासायनिक गैस है, जो आमतौर पर प्रशीतकों (Refrigeration), रोधकों (insulators), ठोस प्लास्टिक व एरोसोल स्प्रे केन आदि के निर्माण में प्रयोग की जाती है। वायुमंडल में इसका संकेन्द्रण 1ppm से कम है और यह लगभग 5% की दर से प्रतिवर्ष बढ़ रही है। हालांकि, वायुमंडल में इसका संकेन्द्रण काफी कम है, परन्तु इसका प्रभाव CO_2 की अपेक्षा 15 हजार गुना अधिक है।

ऐसा माना जाता है कि क्लोरो-फ्लोरो कार्बन की वातावरण में 25% वृद्धि औद्योगीकरण के कारण हुई है। क्लोरो-फ्लारो कार्बन विशेष रूप से वायुमंडल में उपस्थित ओजोन परत के क्षरण के लिए उत्तरदायी गैस है। स्मरणीय है कि यह एक अप्राकृतिक ग्रीनहाउस गैस है।

क्लोरो-फ्लोरो कार्बन को निम्नलिखित रूपों में वर्गीकृत किया जाता है:-

- **हाइड्रो क्लोरो-फ्लोरोकार्बन (Hydro Chlorofluorocarbon-HCFC):-** इसकी वातावरण में वृद्धि दर 0.4% प्रतिवर्ष है, जबकि इसकी तापवृद्धि क्षमता 14600 है। यह CFC से कम हानिकारक है। परन्तु कोपेनहेगन में हुई बैठक में 2030 तक इसे भी समाप्त करने का निर्णय लिया गया है।
- **पर-फ्लोरोकार्बन (Per Fluorocarbon-PFC):-** यह गैस एल्युमीनियम प्रगलन उद्योग (Aluminium Smelting Industry) आदि द्वारा उत्सर्जित होती है। यह वातावरण में काफी लम्बे समय तक बनी रहती है, जिसके कारण यह वातावरण को लम्बे समय तक गर्म करती रहती है।
- **सल्फर हेक्साफ्लोराइड (Sulphur Hexafluoride):-** यह विभिन्न रासायनिक उद्योगों द्वारा उत्सर्जित होती है और लम्बी जीवन अवधि के कारण वायुमंडल को भारी क्षति पहुँचाती है।

नाइट्रस ऑक्साइड गैस (Nitrous Oxide)

नाइट्रस ऑक्साइड एक प्राकृतिक ग्रीनहाउस गैस है, जो कि मुख्य रूप से मृदा अवक्षयन द्वारा उत्सर्जित होती है। इसकी एक बड़ी मात्रा नाइट्रोजनीकृत उर्वरकों तथा वनों एवं कृषि अपशिष्ट के जलाने से भी पैदा होती है। वातावरण में नाइट्रस ऑक्साइड की मात्रा 0.3% वार्षिक दर से बढ़ रही है। मृदा में रासायनिक खादों पर सूक्ष्म-जीवों की प्रतिक्रिया के परिणामस्वरूप नाइट्रस ऑक्साइड का निर्माण होता है। तत्पश्चात् यह गैस वातावरण में उत्सर्जित होती है। एक अनुमान के अनुसार, औद्योगिक क्रांति से पूर्व वातावरण में N_2O का संकेन्द्रण 270 ppb (Parts Per Bilion) था, जो वर्तमान में बढ़कर लगभग 320 ppb हो गया है। नाइट्रस ऑक्साइड वातावरण को कार्बन-डाईऑक्साइड की तुलना में 270 गुना अधिक गर्म करने की क्षमता रखती है। इस गैस का वैश्विक तापमान वृद्धि में लगभग 6% योगदान है।

हरित गृह गैसों की वृद्धि के मुख्य कारण

यद्यपि हरितगृह गैसों की वृद्धि के लिए मानवीय तथा प्राकृतिक दोनों प्रक्रियाएँ उत्तरदायी हैं। फिर भी विगत दशकों में मानव जनित उत्प्रेरकों द्वारा हरित गृह गैसों के उत्सर्जन में तीव्रता आयी है।

हरित गृह गैसों के उत्प्रेरक कारकों को निम्नलिखित रूप में व्यक्त किया जा सकता है:-

जीवाश्म ईंधनों का प्रयोग:- विभिन्न औद्योगिक गतिविधियों, यातायात के साधनों तथा घरेलू उपयोग हेतु वृहद् पैमाने पर जीवाश्म ईंधनों का दहन किया जाना, जिससे बड़ी मात्रा में कार्बन-डाईऑक्साइड आदि गैसें उत्सर्जित होती हैं। एक अनुमान के अनुसार, वर्ष 2018 में वायुमंडल के भीतर CO_2 का स्तर लगभग 410 ppm तक पहुँच गया था।

वनोन्मूल (Deforestation):- औद्योगिक तथा नगरीकरण की प्रक्रिया के चलते स्थापनाओं के विकास हेतु बड़े पैमाने पर वनों को काटा गया। इसके साथ ही कृषि क्षेत्र के विस्तार हेतु वन क्षेत्रों का विनाश किया गया।

आधुनिक जीवन शैली (Modern Lifestyle):- औद्योगिक क्रांति से पूर्व तथा पश्चात् मानव जीवन पद्धति में अनेक बदलाव देखने को मिले, जहाँ एक तरफ वैज्ञानिक प्रगति के माध्यम से उसने जीवन को सुविधापूर्ण बनाने के लिए अनेक आविष्कार किए, वहीं दूसरी तरफ उसकी उपभोक्तावादी प्रवृत्ति तथा प्राकृतिक सांसाधनों के उपभोग के प्रति दोषपूर्ण धारणा ने समस्त पारितंत्र को प्रभावित करने वाले तत्वों को जन्म दिया। वर्तमान में इसका दुष्प्रभाव वैश्विक ऊष्मन के रूप में हमें देखने को मिल रहा है।

पशुपालन एवं डेयरी फार्मिंग (Animal Husbandry and Dairy Farming):- पशुपालन एवं डेयरी फार्मिंग में वृद्धि से मीथेन उत्सर्जन में भी वृद्धि होती है क्योंकि गाय, भेड़, भैंस आदि के पेट में माइक्रोबियल (Microbial) खमीरीकरण के दौरान उप-उत्पाद के रूप में मीथेन उत्सर्जित होती है।

जलवाष्प (Water Vapour):- यह सबसे महत्त्वपूर्ण हरित गृह गैस है। यह प्राकृतिक श्वसन तथा वाष्पीकरण द्वारा उत्पन्न होती है। जलवाष्प की मात्रा में स्थानिक तथा कालिक परिवर्तन होते हैं, परंतु वायुमंडल के तापमान में आंशिक वृद्धि से इसकी कुल मात्रा बढ़ जाती है। इसकी मात्रा में वृद्धि होने से हरित गृह गैसों की मात्रा भी बढ़ जाती है।

निम्नस्तरीय ओजोन (Tropospheric Ozone):- यह भी एक हरित गृह गैस है। ओजोन, वाहनों के धुएँ तथा अन्य जैव ईंधनों की गैसों पर सूर्य की किरणों के प्रभाव से उत्पन्न होती है।

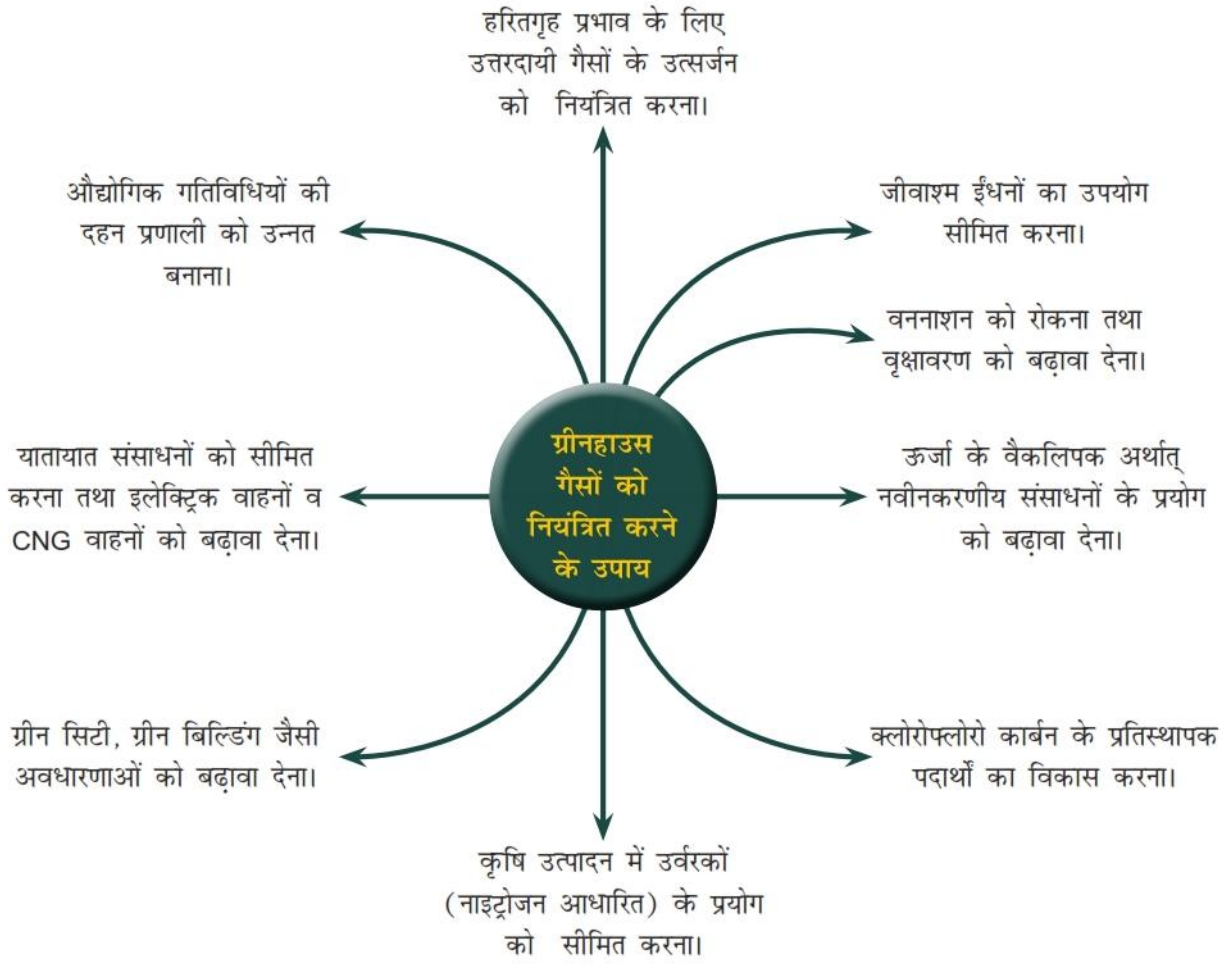

भूमण्डलीय तापन का प्रभाव

वैश्विक तापन के कारण वायुमंडल में ऊष्मा का अधिक संकेन्द्रण हो सकता है, जिससे वातावरण के तापमान में वृद्धि हो सकती है।

इसके फलस्वरूप निम्नलिखित परिघटनाएँ परिलक्षित हो सकती हैं-

- वाष्पीकरण की मात्रा में वृद्धि।
- चक्रवातों की बारंबारता में वृद्धि।
- एलनीनो की बारंबारता एवं तीक्ष्णता में वृद्धि।
- दोनों गोलार्द्धों में ग्रीष्म ऋतु की तीक्ष्णता में वृद्धि।
- वर्षा की मात्रा तथा समयावधि में असंतुलन।
- जैव चक्र में व्यवधान।

स्थलमंडल पर प्रभाव

- स्थलीय शुष्कता में वृद्धि।

जलमण्डल पर प्रभाव

- ग्लेशियरों के तीव्र पिघलाव के फलस्वरूप समुद्री जलस्तर में वृद्धि।
- समुद्री जलस्तर में वृद्धि से एक बड़ी जनसंख्या के सम्मुख पलायन की समस्या।
- छोटे द्वीपीय देशों के डूबने का संकट।
- प्रवालों का विनाश।
- तटीय पर्यटन पर कुप्रभाव।
- मत्स्यन से जुड़े उद्योगों व लोगों के सम्मुख रोजगार की समस्या आदि।

कृषि उत्पादन पर प्रभाव

- तापमान में वृद्धि से जलवायविक क्रियाविधियों में डिस्टर्बेंस देखी जा सकती है। मौसम संबंधी समयावधि में बदलाव महसूस किया जा रहा है। ऐसे में विभिन्न मौसमों के अनुकूल फसल प्रारूप पर प्रतिकूल प्रभाव पड़ना स्वाभाविक है।
- वैश्विक ऊष्मन के फलस्वरूप मरुस्थलीकरण में वृद्धि के चलते कृषि योग्य भूमि में कमी आएगी। अत: खाद्यान्न संकट उत्पन्न हो सकता है।

जीव-जन्तुओं तथा वनस्पतियों पर प्रभाव

- यदि वायुमण्डल 2°C से 5°C तक गर्म हो जाता है, तो धरातल, विशेष रूप से शीतोष्ण वन तथा वर्षा वन के पारितंत्र पर विपरीत प्रभाव पड़ेगा।
- अनेक जीव-जन्तुओं की प्रजातियाँ विलुप्त हो सकती हैं या उनका प्रवासन होगा।
- जलस्रोतों के सूखने से भी बहुत से वन्यजीव संकट में पड़ सकते हैं।

अध्याय
10

आजोन क्षरण
Ozone Depletion

हमारे सौरमंडल में पृथ्वी ही संभवत: ऐसा अनोखा ग्रह है, जिसका वायुमंडल रासायनिक दृष्टि से सक्रिय तथा ऑक्सीजन युक्त है जबकि अन्य ग्रह केवल कार्बन-डाईऑक्साइड, मीथेन तथा हाइड्रोजन जैसी निष्क्रिय गैसों से घिरे हुए हैं। पृथ्वी ही एक ऐसा ज्ञात ग्रह है जिसके वायुमंडल में ओजोन परत मौजूद है।

ओजोन क्या है?

ओजोन समतापमंडल में पाया जाने वाला ऑक्सीजन का ट्राई एटॉमिक स्वरूप है। यद्यपि यह समताप मंडल में 12 से 35 किलोमीटर की ऊँचाई तक विस्तृत है, परन्तु यदि इसे सागर तल पर लाया जाए तो इसकी मोटाई केवल 0.1 किलोमीटर रह जाती है। फिर भी यह पृथ्वी पर स्थित समस्त जीवों के लिए अत्यधिक महत्त्वपूर्ण गैस है क्योंकि-

- यह सूर्य से निकलने वाली पराबैंगनी किरणों को अवशोषित कर लेती है, जिससे पृथ्वी पर रहने वाले जीवों को हानि नहीं पहुँचती।
- यह क्षोभमंडल के ऊपर और समतापमंडल के नीचे एक तापमान व्युत्क्रमणता की सतह बनाती है, जिसके कारण सभी मौसमी परिघटनाएँ क्षोभमंडल तक ही सीमित रह जाती हैं।

आजोन क्षय/ह्रास क्या है?

ओजोन के निर्माण, ओजोन के विनाश तथा ओजोन के पुनर्निर्माण को ओजोन क्षरण की क्रियाविधि के अंतर्गत शामिल करते हैं। जैसा कि आप जानते हैं ओजोन को पृथ्वी का रक्षा कवच या छतरी कहते हैं क्योंकि यह सौर्यिक विकिरण को पृथ्वी पर आने से रोकती है, परन्तु 70 तथा 80 के दशक में हुए अनुसंधानों से यह तथ्य सामने आया है कि विभिन्न मानवीय तथा प्राकृतिक घटनाओं के चलते ओजोन का क्षरण हो रहा है। ओजोन परत के क्षरण का वैज्ञानिक व प्रामाणिक वर्णन अमेरिकी अनुसंधानकर्त्ताओं ने वर्ष 1973 में किया। उन्होंने कहा कि ओजोन परत को मानव निर्मित गैस क्लोरो-फ्लोरोकार्बन (CFC) नष्ट कर सकती है। वर्ष 1984 में नासा के उपग्रह निम्बस ने ओजोन का काफी नजदीक से सूक्ष्म परीक्षण किया और पाया कि 1976 से अक्टूबर एवं नवम्बर के महीनों में अंटार्कटिका के ऊपर समतापमंडल से ओजोन गायब हो जाता है। उन्होंने इसे ओजोन छिद्र का नाम दिया। कुछ वर्षों में तो इस ओजोन छिद्र का आकार उत्तरी अमेरिका के क्षेत्रफल से भी बड़ा पाया गया। वर्तमान में ओजोन छिद्र एक वार्षिक घटना है, जो अंटार्कटिका के ऊपर ही अब तक पाया गया है। अंटार्कटिका के ऊपर समतापमंडल में हर वर्ष दक्षिणी गोलार्द्ध के बसंत काल में ओजोन का पूर्ण अभाव हो जाता है। समतापमंडल में ओजोन निर्माण व विध्वंस की प्रक्रिया निरंतर चलती रहती, परन्तु विगत कुछ वर्षों में इसमें असंतुलन देखा गया।

ओजोन छिद्र क्या है?

ओजोन परत में ओजोन रहित भाग को ओजोन छिद्र (Ozone Hole) कहते हैं। समतापमंडलीय ओजोन की मात्रा घटती जा रही है। घटने की यह प्रक्रिया क्लोरो-फ्लोरो-कार्बन, मिथाइल क्लोरोफॉर्म, कार्बन ट्रेटा क्लोराइड, हैलोजन आदि द्वारा हो रही है। ये सभी तत्व क्लोरीन या ब्रोमीन से बने हुए हैं जो समतापमंडल में पहुँचने की क्षमता रखते हैं।

क्लोरो-फ्लोरो-कार्बन वास्तव में एक संश्लेषित रसायन है जो रासायनिक रूप से निष्क्रिय है, परन्तु लम्बे समय तक वायुमंडल में विद्यमान रहती है। इसके अणु क्लोरीन, फ्लोरीन एवं कार्बन से बने होते हैं। ये CFCs कई वर्षों बाद ऊपरी समतापमंडल में पहुँचकर सौर्यिक विकिरण के साथ अभिक्रिया करके ओजोन को क्षति पहुँचाती हैं।

ओजोन छिद्र बनने की प्रक्रिया तथा उत्तरदायी कारक

ओजोन क्षरण के लिए दो प्रक्रियाओं की पहचान की गई है-

- **प्राकृतिक प्रक्रिया (Natural Process):-** प्राकृतिक प्रक्रिया के अंतर्गत सौर क्रिया, नाइट्रस ऑक्साइड, प्राकृतिक क्लोरीन, वायुमंडलीय संचरण, पृथ्वी के रचनात्मक प्लेट किनारों से निकलने वाली गैस तथा केन्द्रीय ज्वालामुखी उद्‌गार से निकलने वाली गैसें प्रमुख हैं।

ओजोन को क्षति पहुँचाने वाली पराबैंगनी किरणों की मात्रा सौर स्थिरांक द्वारा प्रभावित होती है। सौर स्थिरांक धरातल से 1000 किलोमीटर की ऊँचाई पर मापी गई सूर्याभिताप की पृथ्वी के वायुमंडल में प्रवेश करने की मात्रा है जो सामान्य रूप से 2 कैलोरी प्रति वर्ग मिनट होती है। सौर स्थिरांक सौर क्रिया द्वारा प्रभावित है। सौर क्रिया के समय सौर स्थिरांक सामान्य से अधिक बढ़ जाता है, जिसके फलस्वरूप ओजोन क्षरण असंतुलित अथवा ओजोन ह्रास दर में वृद्धि हो जाती है।

- **मानव जनित क्रिया:**- ओजोन क्षरण में सर्वाधिक योगदान मानव जनित क्रियाओं का है। मानव द्वारा औद्योगिक क्रियाओं तथा घरेलू उपयोग हेतु विभिन्न उपकरणों के माध्यम से ओजोन ह्रास के लिए उत्तरदायी गैसों का उत्सर्जन किया जा रहा है। ओजोन विघटनकारी गैसें इस प्रकार हैं-

  –क्लोरो फ्लोरो कार्बन (CFCs)

  –हाइड्रो क्लोरो फ्लोरो कार्बन (HCFCs)

  –कार्बन ट्रेटा क्लोराइड (CCl_4)

  –मिथाइल क्लोरोफॉर्म (CH_3CCl_3)

  –हाइड्रो ब्रोमो फ्लोरो कार्बन (HBFCs)

  –मिथाइल ब्रोमाइट (CH_3Br)

  –हैलॉन (Halon)

  –ब्रोमो क्लोरो मीथेन (CH_2BrCl)

CFC_{11} व CFC_{12} का उपयोग मुख्यत: वातानुकूलन यंत्र व प्रशीतक यंत्र, स्प्रेकेन, इलेक्ट्रॉनिक कलपुर्जों की सफाई आदि के लिए किया जाता है। CFCs के अणु ऊपर वायुमंडल में विक्षोभ के सहारे क्षोभमंडल से समतापमंडल में पहुंच जाते हैं। समतापमंडल में पहुँचने के क्रम में वे वायुमंडल में मिश्रित हो जाते हैं। शीत ऋतु में जब अंटार्कटिका में अंधकार छाया रहता है और तापमान बहुत कम हो जाता है, तब ध्रुवीय प्रदेशों में विद्यमान पछुआ पवनें बहुत ही शक्तिशाली हो जाती हैं और इनकी गति 100 मीटर/सेकेंड की हो जाती है। ये पवनें इतनी शक्तिशाली होती हैं कि ये ठंडी हवाओं का बवण्डर (Vortex) तैयार कर लेती हैं जो विश्व के शेष वायुमंडल में मिश्रित नहीं हो पाती हैं। जब ये हवाएँ विश्व के शेष वायुमंडलीय संचरण से विलग हो जाती हैं, तो इस बवण्डर के अंदर का तापक्रम बहुत कम (-90^0C to -105^0C) हो जाता है।

इतने कम तापमान में समतापमंडल में संघनन के कारण बादलों का निर्माण हो जाता है। हिम क्रिस्टल से निर्मित इन बादलों की सतह पर CFCs एवं अन्य ओजोन विध्वंसक रसायनों की एक परत बन जाती है।

ये हिम क्रिस्टल नाइट्रोजन ऑक्साइड को युग्मित कर लेते हैं और क्लोरीन मोनोऑक्साइड निर्मित करने की परिस्थितियाँ उत्पन्न करते हैं।

यहाँ यह ध्यान देने योग्य तथ्य है कि क्लोरीन अति निम्न तापमान पर वायुमंडल में उपस्थित नाइट्रोजन युक्त क्लोरीन अणुओं को वायुमंडल में जाने से रोक देता है। ये क्लोराइड अणु सम्पूर्ण शरद ऋतु तक स्थिर यौगिकों, विशेषकर क्लोराइड नाइट्रेट के भंडार में पड़े रह जाते हैं। गर्मियों में जब सूर्य की किरणें हिम क्रिस्टल के ऊपर पड़ती हैं, तो क्लोरीन के परमाणु वायुमंडल में मुक्त हो जाते हैं। सूर्य से आने वाली पराबैंगनी किरणें CFC अणुओं पर पड़ती हैं, जिससे वे टूटकर अत्यंत क्रियाशील क्लोरीन अणु का निर्माण करती हैं। क्लोरीन के ये परमाणु ओजोन के साथ मिलकर Cl_2 और O_2 का निर्माण करते हैं। Cl_2 और O_2 पुन: Cl और O में टूट जाता है, Cl का परमाणु फिर से मुक्त होकर और अधिक ओजोन अणुओं को नष्ट करता है।

यह क्रिया एक लाख बार चलती है अर्थात् क्लोरीन का एक परमाणु पुन: निचले वायुमंडल में पहुँचने से पूर्व ओजोन के 1 लाख अणुओं को नष्ट कर देता है।

ओजोन ह्रास का प्रभाव

पृथ्वी के वायुमंडल में ओजोन की विशिष्ट भूमिका है। ओजोन की सांद्रता में कमी होने से सूर्य की हानिकारक पराबैंगनी किरणें पृथ्वी पर पहुँच जाती हैं जो मानव स्वास्थ्य के साथ-साथ जीव-जंतुओं, सूक्ष्म जीवों तथा विभिन्न पारितंत्रों को हानि पहुँचाती हैं।

ओजोन ह्रास से पड़ने वाले प्रभावों को निम्नलिखित रूप में देख सकते हैं:-

- **मानव तथा जंतुओं के स्वास्थ्य पर प्रभाव**

  – यदि पराबैंगनी किरणें सीधे पृथ्वी पर पहुँचती हैं तो जहाँ मनुष्य में त्वचा कैंसर, मोतियाबिन्द, श्वसन से संबंधित रोग तथा प्रतिरक्षा प्रणाली का विरूपित होना संभावित है, तो वहीं नर्म त्वचा वाले जानवरों तथा अन्य जीवों में त्वचा रोग व आँखों से संबंधित रोग हो जाते हैं।

- **स्थलीय पादपों पर प्रभाव:-**

  – पराबैंगनी किरणें पौधों की सभी विकासात्मक प्रक्रियाओं पर प्रतिकूल प्रभाव डालती हैं। पराबैंगनी किरणों के कारण न केवल पादप प्रजातियों के संघटन का प्रारूप प्रभावित होता है, बल्कि पौधों के उपापचय में भी असंतुलन उत्पन्न हो जाता है।

– पराबैंगनी किरणों की मात्रा अधिक बढ़ने से पौधों की भोजन क्रियाविधि (प्रकाश संश्लेषण) भी प्रभावित होती है जिनके फलस्वरूप पौधों की वृद्धि दर भी प्रभावित होती है।

- **जलीय अथवा समुद्री पारितंत्र पर प्रभाव:**- यदि पराबैंगनी किरणों की अधिक मात्रा जलीय अथवा समुद्री पारितंत्र में पहुँचती है तो फाइटोप्लैंकटन (जलीय आहारजाल का प्रमुख आधार) के उत्पादन में कमी आ जाती है। फाइटोप्लैंकटन की संख्या में कमी से कार्बन डाईऑक्साइड की मात्रा बढ़ेगी जिससे वैश्विक तापन में तीव्रता आएगी।

ऐसा अनुमान है कि ओजोन क्षरण के कारण आने वाले 40 वर्षों में पृथ्वी तक पहुँचने वाले पराबैंगनी विकिरण में 5-20 प्रतिशत की वृद्धि हो जाएगी। इससे पृथ्वी का तापमान बढ़ेगा, भूमंडलीय पवनें प्रभावित होंगी और वर्षा के प्रारूप में विकार आ जाएगा।

ओजोन संरक्षण के उपाय

ओजोन क्षरण को लेकर वैश्विक समूह का चिंतित होना स्वाभाविक है क्योंकि ओजोन क्षरण की समस्या न केवल एक वैश्विक समस्या है बल्कि भयावह भी है। एक अध्ययन के अनुसार, ओजोन में 12 प्रतिशत की कमी होने पर अकेले अमेरिका में 1 लाख 20 हजार लोग त्वचा कैंसर से पीड़ित हो सकते हैं जबकि 1 प्रतिशत की कमी होने पर सम्पूर्ण विश्व में लाखों लोग अपनी आँखों की रोशनी खो सकते हैं। फलत: ओजोन क्षरण की समस्या के प्रति वैश्विक समुदाय आरंभ से ठोस कदम उठाने के लिए प्रयासरत रहे हैं।

ओजोन क्षरण को रोकने के लिए 1970 तथा 1980 के दशक के आरंभिक वर्षों में प्रयास शुरू हुए। अमेरिका तथा यूरोपीय समुदाय ने 1980 में क्लोरोफ्लोरोकार्बन के उत्सर्जन व उपभोग में 30 प्रतिशत की कमी करने की घोषणा की। आगे चलकर अन्य देशों ने भी इस समस्या के निदान हेतु प्रयास किए। ओजोन संरक्षण से संबंधित प्रमुख घटनाक्रम इस प्रकार हैं-

- यूनाइटेड नेशन्स इन्वायरमेंट प्रोग्राम-1977
- वियना कन्वेंशन-1985
- मॉण्ट्रियल प्रोटोकॉल-1987
- लंदन में मॉण्ट्रियल प्रोटोकॉल का संशोधन-1990
- 112 देशों द्वारा मॉण्ट्रियल प्रोटोकॉल के संशोधन को मंजूरी-1992
- कोपेनहेगन सम्मेलन में 1996 तक हानिकारक रसायनों को कम करने पर सहमति-1992
- किगाली समझौता-2016

वियना कन्वेंशन (Vienna Convention)

यह ओजोन परत के संरक्षण के लिए एक बहुपक्षीय पर्यावरणीय समझौता (Multilateral Environment Agreement) है। इस पर 1985 के वियना सम्मेलन में सहमति बनी और 1988 में यह लागू किया गया।

- वियना कन्वेंशन ने ओजोन संरक्षण के लिए किए गए प्रयासों हेतु एक फ्रेमवर्क का काम किया।
- वर्ष 2009 में वियना कन्वेंशन सार्वभौमिक सत्यापन को प्राप्त करने वाला पहला कन्वेंशन बन गया।
- परन्तु वियना कन्वेंशन ओजोन संरक्षण हेतु CFCs के उत्सर्जन में कमी लाने के लिए बाध्यकारी नहीं है।

मॉण्ट्रियल प्रोटोकॉल (Montreal Protocol)

मॉण्ट्रियल प्रोटोकॉल ओजोन परत के क्षरण को रोकने हेतु एक अंतर्राष्ट्रीय संधि है। इस प्रोटोकॉल के माध्यम से उन पदार्थों के उत्पादन को कम करना है जो ओजोन क्षरण के लिए उत्तरदायी हैं।

- मॉण्ट्रियल प्रोटोकॉल पर 16 सितम्बर, 1987 को हस्ताक्षर किया गया और यह 1 जनवरी, 1989 से प्रभावी हुआ।
- मॉण्ट्रियल प्रोटोकॉल को प्रभावी बनाने में संयुक्त राष्ट्र पर्यावरण कार्यक्रम (UNEP) ने भी प्रमुख भूमिका निभायी है।
- इस संधि ने ओजोन क्षयकारी पदार्थों या तत्त्वों के कुल वैश्विक उत्पादन और उपभोग की गिरावट में उल्लेखनीय योगदान दिया है जिसका प्रयोग विश्व भर में कृषि उपभोक्ता और औद्योगिक क्षेत्रों में किया गया।
- 2010 के बाद से, प्रोटोकॉल के एजेंडे का मुख्य फोकस हाइड्रोक्लोरोफ्लोरोकार्बन (HCFCs) को कम करने पर केन्द्रित है जिनका मुख्य रूप से ठंडे और प्रशीतन अनुप्रयोगों और फोम उत्पादों के निर्माण में प्रयोग किया जाता है।

महत्त्वपूर्ण तथ्य

- ओजोन की खोज सर्वप्रथम सी. एफ. स्चौंबिन ने की थी।
- ओजोन को मापने की इकाई डॉब्सन (Dobson) है।
- प्रत्येक वर्ष अंतर्राष्ट्रीय ओजोन दिवस 16 सितंबर को मनाया जाता है।
- ओजोन पृथ्वी के वायुमंडल के समतापमंडल में पाई जाती है।
- वर्ष 1985 में 'जेसेफ फरमन' के नेतृत्व में ब्रिटिश अंटार्कटिक सर्वेक्षण दल ने ओजोन के ह्रास के ठोस प्रमाण दिए।
- जेसेफ फरमन के अनुसार अंटार्कटिका के ऊपर बसंत काल में ओजोन परत में 40 प्रतिशत की कमी होती है।
- ओजोन का ह्रास मुख्यत: हैलोजनित गैसों-क्लोरोफ्लोरो कार्बन, हैलॉन्स तथा नाइट्रोजन ऑक्साइड के द्वारा होता है।
- वायुमंडल की ओजोन परत में मौजूद ओजोन महत्त्वपूर्ण है क्योंकि यह सूर्य की पराबैंगनी किरणों के एक बड़े अनुपात को अवशोषित करके पौधों के विकास में मदद करती है।
- क्लोरोफ्लोरो मीथेन ओजोन को नष्ट करने के अतिरिक्त वायुमंडल में कार्बन-डाईऑक्साइड की मात्रा बढ़ाती है जिससे हरित गृह प्रभाव में वृद्धि होती है।
- ओजोन का ह्रास होने पर समतापमंडल में हाइड्रोजन परॉक्साइड में वृद्धि होती है जिससे अम्ल वर्षा की संभावनाएँ बढ़ती हैं।

- मॉण्ट्रियल प्रोटोकॉल के तहत ही विकासशील देशों को CFC का उत्पादन 2010 तक बंद करने का समय दिया गया था। हालांकि बाद में इसमें कुछ देशों (विकासशील) को छूट देने हेतु संशोधन किया गया।
- मॉण्ट्रियल प्रोटोकॉल संवाद के माध्यम से कार्यान्वित की गई अब तक की सबसे सफल और प्रभावी पर्यावरणीय संधियों में से एक है। इससे संबद्ध सभी 142 विकासशील देश 2010 तक CFCs हैलोन वर्ग के यौगिकों और अन्य के प्रयोग को चरणबद्ध तरीके से शतप्रतिशत समाप्त करने हेतु सक्षम हुए हैं।

किगाली सम्मेलन-2016

मॉण्ट्रियल प्रोटोकॉल में संशोधन हेतु रवांडा की राजधानी किगाली में अक्टूबर, 2016 को एक सम्मेलन आयोजित किया गया। इसके अंतर्गत 2040 के उत्तरार्द्ध तक हाइड्रोक्लोरो-फ्लोरो कार्बन (HCFCs) को चरणबद्ध तरीके से समाप्त करना है। संशोधित मॉण्ट्रियल प्रोटोकॉल 2019 से सभी सदस्य देशों के लिए बाध्यकारी है।

हाइड्रो फ्लोरोकार्बन के उत्सर्जन में कटौती के लिए सभी सदस्य देशों को तीन अलग-अलग श्रेणियों में वर्गीकृत किया गया है:-

- **प्रथम समूह (G-1):-** इसके अंतर्गत अमेरिका और यूरोपीय संघ के देशों को रखा गया है। इन्हें 2018 तक HFCs के उत्सर्जन तक इसे 2012 के स्तर से लगभग 15 प्रतिशत कम करने का लक्ष्य सौंपा गया था।
- **द्वितीय समूह (G-2):-** इस समूह के अंतर्गत चीन, ब्राजील और सम्पूर्ण अफ्रीकी देश शामिल हैं। ये सभी 2014 तक HFCs के उपयोग को स्थिर कर 2045 तक इसे 2021 के स्तर से 20 प्रतिशत तक कम करेंगे।
- **तृतीय समूह (G-3):-** इस समूह के अंतर्गत भारत, ईरान, सऊदी अरब, बांग्लादेश, पाकिस्तान आदि देश शामिल हैं। इन्हें 2018 तक HFCs के उपयोग को स्थिर कर 2047 तक इसे 2025 के स्तर से 15 प्रतिशत तक कम करना है।

ओजोन क्षरण से संबंधित वैज्ञानिक आकलन-2018

मॉण्ट्रियल प्रोटोकॉल के तहत की गई कार्यवाही के परिणामस्वरूप वायुमंडल में विद्यमान संग्रहित ओजोन पदार्थों (ODSs) की मात्रा में कमी आई है जिसके परिणामस्वरूप हाल ही के वर्षों में समतापमंडलीय ओजोन की स्थिति भी बेहतर हो रही है।

इस आंकलन की रिपोर्ट में कहा गया है कि उत्तरी गोलार्द्ध एवं मध्य अक्षांशीय ओजोन में 2030 के दशक तक पूर्ण रूप से सुधार होना संभावित है।

ओजोन संरक्षण के लिए भारतीय पहल

भारत सरकार द्वारा भी समय-समय पर ओजोन संरक्षण हेतु प्रयास किए गए हैं। मॉण्ट्रियल प्रोटोकॉल को लागू करने का उत्तरदायित्व पर्यावरण, वन एवं जलवायु परिवर्तन मंत्रालय को सौंपा गया है।

पर्यावरण, वन एवं जलवायु परिवर्तन मंत्रालय की वर्ष 2014-15 की रिपोर्ट के अनुसार, ओजोन क्षरण को नियंत्रित करने के लिए निम्नलिखित विनियामक कदम उठाए गए हैं-

- ओजोन क्षयकारी पदार्थ (नियंत्रक अधिनियम), 2000 के अनुसार औषधि उद्योग को छोड़कर शेष सभी कार्यों के लिए क्लोरोफ्लोरोकार्बन (CFCs) तथा हैलोन के उत्पादन एवं प्रयोग को प्रतिबंधित किया गया है।
- हाइड्रोक्लोरोफ्लोरोकार्बन (HCFCs) को शीघ्रता से नियंत्रित करने के लिए सितम्बर, 2007 में मॉण्ट्रियल प्रोटोकॉल की बैठक के अनुसार, अपने पूर्व के नियमों में संशोधन किया गया।
- भारत ने मॉण्ट्रियल प्रोटोकॉल द्वारा निश्चित समय-सारणी के अनुसार या उससे भी पहले निम्नलिखित उपलब्धियाँ अर्जित की-
  - भारत ने 94 प्रतिशत ओजोन ह्रास संभाव्यता को समाप्त कर दिया है।
  - ओजोन अपक्षयकारी पदार्थ (नियंत्रण अधिनियम), 2000 में संशोधन किया गया है ताकि HCFCs को समाप्त करने की त्वरित क्रिया को बल मिल सके।

❑❑❑❑❑

अध्याय
11

जलवायु परिवर्तन
Climate Change

जलवायविक दशाओं में होने वाले दीर्घकालिक उतार-चढ़ावों को वैश्विक स्तर पर जलवायु परिवर्तन की संज्ञा दी जाती है। वर्तमान में जलवायविक परिवर्तन के फलस्वरूप अनेक मौसमी विपथगन (उथल-पुथल) को महसूस किया जा रहा है, जिनमें चरम उच्च तापमान, चरम ठंड अथवा विस्तारित शीतकाल एवं ग्रीष्मकाल, चक्रवातों की बारंबारता में वृद्धि, उच्च वर्षा आदि घटनाएँ शामिल हैं। ये या तो प्राकृतिक कारणों से, पृथ्वी द्वारा सूर्य से प्राप्त विकिरण में परिवर्तन से या मानवीय क्रिया-कलापों से उत्पन्न होने वाली हरित गृह गैसों में वृद्धि से होती हैं।

जलवायु परिवर्तन पर संयुक्त राष्ट्र फ्रेमवर्क कन्वेंशन (UNFCCC) के अनुसार, "जलवायु परिवर्तन लम्बी अवधि के संदर्भ में मानवीय क्रियाकलापों का प्रत्यक्ष एवं अप्रत्यक्ष परिणाम है, जो वायुमंडल की संरचना को परिवर्तित करता है और यह प्राकृतिक कारणों के अतिरिक्त है।"

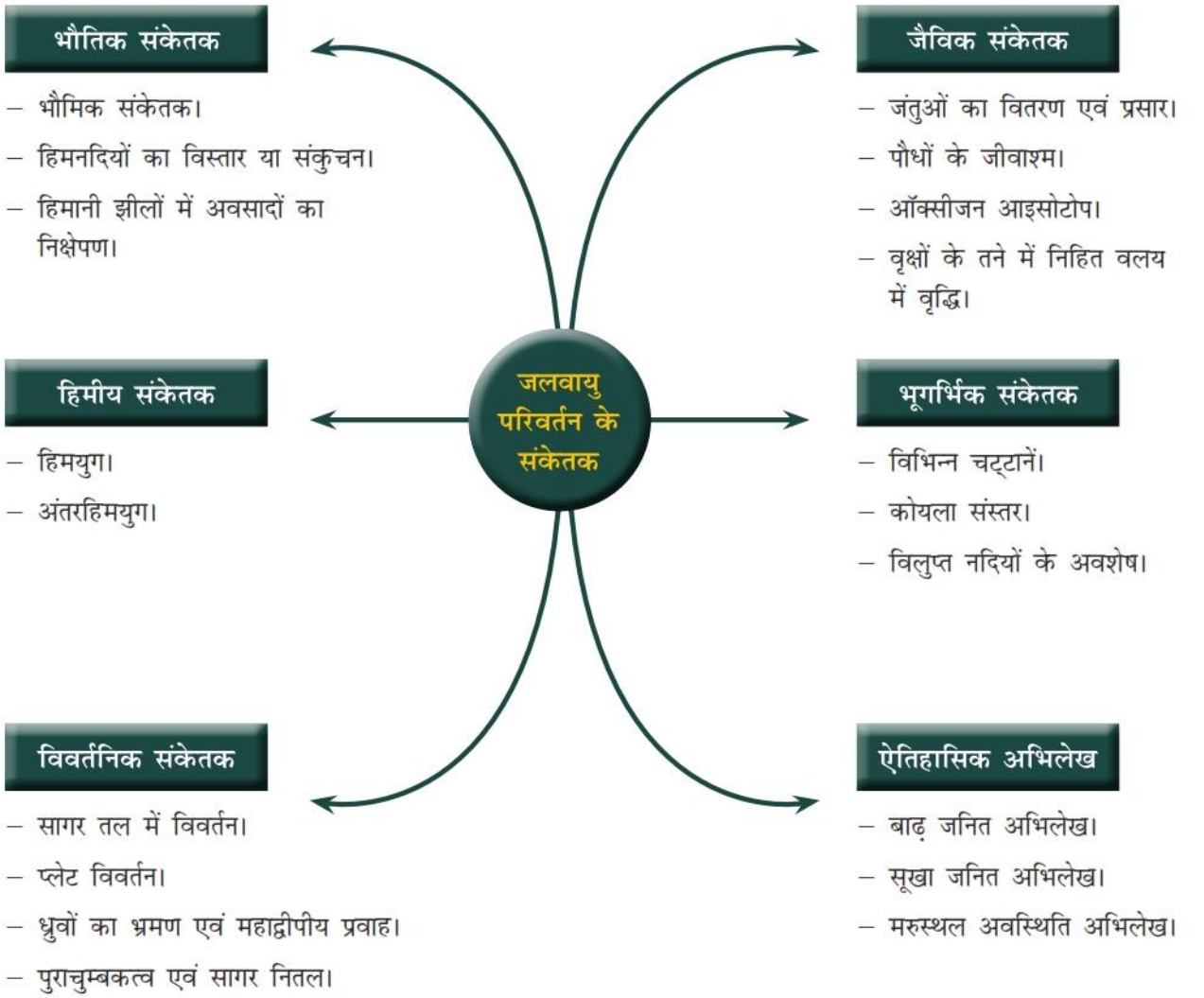

पृथ्वी का औसत तापमान अभी लगभग 15°C है। हालांकि, भूगर्भिक प्रमाण बताते हैं कि पूर्व में पृथ्वी का तापमान बहुत अधिक या बहुत कम रहा है, लेकिन पिछले कुछ वर्षों में अचानक तेजी से बदलाव हो रहा है। मौसम की अपनी विशेषताएँ होती हैं, लेकिन अब इसका ढंग (पैटर्न) बदल रहा है; गर्मियाँ लंबी होती जा रही हैं और सर्दियाँ छोटी। ऐसा सम्पूर्ण विश्व में हो रहा है।

जब जलवायु परिवर्तन की चर्चा होती है, तो अधिकांश लोग वैश्विक तापन (Global Warming) के बारे में सोचते हैं। इसी प्रकार, जब ग्लोबल वार्मिंग के विषय में चर्चा होती है तो हममें से अधिकतर ग्रीन हाउस प्रभाव के बारे में सोचते हैं। वास्तव में ग्रीन हाउस प्रभाव एक प्रकृति है, जो मानव गतिविधियों से भी प्रभावित होती है।

जलवायु परिवर्तन को लेकर पर्यावरणविदों तथा वैज्ञानिकों में इस विषय को लेकर गतिरोध है कि पृथ्वी किस दर से गर्म हो रही है तथा भविष्य में कितना अधिक गर्म हो सकती है, किन्तु इस तथ्य को लेकर सहमति है कि वास्तव में पृथ्वी गर्म हो रही है। उन्होंने इस बात की पुष्टि की है कि वास्तव में पृथ्वी गर्म हो रही है।

जलवायु परिवर्तन के कारण

पृथ्वी के उद्‌भव काल से देखें, तो ज्ञात होता है कि जलवायु परिवर्तन एक प्राकृतिक तथा सतत् प्रक्रिया है। प्रारंभ में पृथ्वी की जलवायु अत्यंत गर्म थी। कालांतर में यह हिम युग में परिवर्तित हो गयी। अतीत में ऐसे परिवर्तन होने में लंबा समय लगा, परन्तु वर्तमान में परिवर्तनों की दर अत्यंत तीव्र है और परिवर्तनों के लिए प्राकृतिक तथा मानवीय दोनों कारकों की भूमिका है।

जलवायु परिवर्तन को प्रभावित करने वाले कारकों को खगोलीय और पार्थिव कारकों में भी वगीकृत किया जाता है, जिन्हें हम निम्नलिखित रूपों में देख सकते हैं-

प्राकृतिक कारक

पृथ्वी की जलवायु, जलवायु तंत्र के बाहर के विभिन्न प्राकृतिक कारकों; यथा-सौर निर्गत (Solar Output), सूर्य के सापेक्ष पृथ्वी की कक्षा का झुकाव और ज्वालामुखी गतिविधियों आदि द्वारा प्रभावित हो सकती है। यहाँ खगोलीय कारकों का संबंध सौर कलंकों की गतिविधियों से उत्पन्न सौर्यिक निर्गत ऊर्जा परिवर्तन से है। सौर कलंक सूर्य पर काले धब्बे होते हैं, जो एक चक्रीय ढंग से घटते-बढ़ते रहते हैं। कुछ मौसम वैज्ञानिकों के अनुसार, सौर कलंकों की संख्या बढ़ने पर मौसम ठंडा और आर्द्र हो जाता है और तूफानों की संख्या बढ़ जाती है। सौर कलंकों की संख्या घटने से उष्ण एवं शुष्क दशाएँ उत्पन्न होती हैं। यद्यपि ये खोजें आंकड़ों की दृष्टि से महत्त्वपूर्ण नहीं हैं।

एक अन्य खगोलीय सिद्धांत 'मिलैंकोविच दोलन' है, जो सूर्य के चारों ओर पृथ्वी के कक्षीय लक्षणों में बदलाव के चक्रों, पृथ्वी के झुकाव में परिवर्तनों के बारे में अनुमान लगाता है। ये सभी कारक सूर्य से प्राप्त होने वाले सूर्यातप में परिवर्तन ला देते हैं, जिसका जलवायु पर प्रतिकूल प्रभाव पड़ता है।

ज्वालामुखी उद्‌गार जलवायु परिवर्तन का एक अन्य प्राकृतिक कारक है। ज्वालामुखी उद्‌भेदन वायुमंडल में बड़ी मात्रा में एरोसोल फेंक देता है। ये एरोसोल लम्बे समय तक वायुमंडल में विद्यमान रहते हैं और पृथ्वी की सतह पर पहुँचने वाले सौर्यिक विकिरण को कम कर देते हैं। हालांकि, ज्वालामुखी विस्फोट का जलवायु परिवर्तन पर अपेक्षाकृत अल्पकालिक प्रभाव होता है।

वायुमंडल के गैसीय संयोजन में असंतुलन अथवा परिवर्तन जलवायु परिवर्तन के प्रमुख कारणों में से एक है। वायुमंडल में उपस्थित कार्बन डाईऑक्साइड, मीथेन, नाइट्रस ऑक्साइड तथा जलवाष्प आदि अधिकांशत: प्राकृतिक क्रियाकलापों द्वारा निर्मित होते हैं। इनमें किसी भी प्रकार का असंतुलन जलवायविक परिवर्तनों को उत्प्रेरित करता है।

मानवीय कारण

एक समय सभी जलवायवीय परिवर्तन प्राकृतिक कारणों द्वारा उत्प्रेरित थे, परन्तु औद्योगिक क्रांति के फलस्वरूप नगरीकरण, औद्योगीकरण तथा भूमि उपयोग में परिवर्तन जैसी अनेक क्रियाओं ने जलवायु परिवर्तन के लिए उत्तरदायी तत्वों को बढ़ावा दिया। औद्योगिक गतिविधियों तथा आधुनिक उपभोक्तावादी जीवन पद्धति ने मानव जनित ग्रीनहाउस गैसों के उत्सर्जन में वृद्धि की। ग्रीन हाउस गैसों के स्तर में वृद्धि पृथ्वी के तापमान में तेजी से वृद्धि करती है और ग्लोबल वार्मिंग का कारण बनती है। पिछली सदी के दौरान पृथ्वी के तापमान में 0.8°C की वृद्धि दर्ज की गयी। तीव्र गति से घटते वनावरण ने स्थिति को और भी गंभीर बना दिया है क्योंकि वन ग्रीन हाउस गैसों, विशेषकर कार्बन-डाईऑक्साइड को अवशोषित कर लेते हैं, परन्तु इनकी अंधाधुंध कटाई ने संतुलन की नियमित श्रृंखला को भंग करने का कार्य किया है।

जलवायु परिवर्तन के प्रभाव

वर्तमान वैश्विक परिवेश में जलवायु परिवर्तन एक गंभीर समस्या बनकर उभरा है। यद्यपि जलवायु परिवर्तन के अंतर्गत तापमान में परिवर्तन (तापमान में वृद्धि अथवा कमी) वायुमंडलीय दाब, वायुमंडल में आर्द्रता, वर्षा की मात्रा तथा चक्रवात जैसी अन्य घटनाओं का समावेश होता है, तथापि तापमान में वृद्धि सबसे अधिक महत्त्वपूर्ण तत्व है। फिर भी जलवायु परिवर्तन से पड़ने वाले प्रभावों को निम्नलिखित रूप में देख सकते हैं-

हिम का पिघलना तथा हिम चादरों का सिकुड़ना

- जलवायु परिवर्तन का सबसे अधिक प्रभाव हिम खण्डों (ग्लेशियरों) अथवा हिम नदियों पर परिलक्षित हो रहा है। वैश्विक ऊष्मन के फलस्वरूप हिमालय, रॉकी, एण्डीज, कॉकेशस, आल्प्स तथा अन्य नवीन वलित पर्वतों के ग्लेशियर तेजी से पिघलकर सिकुड़ रहे हैं।

शोध पत्रिका 'नेचर' के अनुसार, तिब्बत की लगभग 46 हजार हिमनदियों के वैश्विक ऊष्मन के चलते पिघलने से एशिया के महत्त्वपूर्ण प्रवाह तंत्रों के लिए खतरा उत्पन्न हो गया है। गंगोत्री तथा यमुनोत्री ग्लेशियरों के पिघलने से गंगा तथा यमुना के प्रवाह तंत्र पर विपरीत प्रभाव पड़ेगा।

इसी प्रकार एण्डीज पर्वत के ग्लेशियर इतनी तेजी से पिघल रहे हैं कि आने वाले 15-20 वर्षों में ये पूर्णत: समाप्त हो जाएंगे। इसके परिणामस्वरूप कोलंबिया, पेरू, चिली, वेनेजुएला, इक्वेडोर व बोलीविया आदि देशों में भारी जल संकट उत्पन्न होने की आशंका है।

हाल ही में प्रकाशित एक रिपोर्ट के अनुसार, ग्रीनलैण्ड, अंटार्कटिका तथा बैफिन द्वीप आदि की बर्फ तेजी से पिघल रही है। इसकी पुष्टि नासा ने अपने सैटेलाइट के द्वारा लिए गए इमेज के माध्यम से की है। नासा ने यह भी बताया है कि विगत 50 वर्षों में पश्चिमी अंटार्कटिका प्रायद्वीप में सबसे अधिक 17.2 प्रतिशत सेल्सियस तापमान बढ़ा है। वर्ष 2018 में प्रकाशित एक जलवायविक रिपोर्ट के अनुसार, अंटार्कटिका महाद्वीप की बर्फ पूर्व की अपेक्षा अधिक तेजी से पिघल रही है और 1992 के बाद 23 ट्रिलियन टन बर्फ का क्षय हो चुका है। इसी प्रकार, नेचर पत्रिका ने जलवायु परिवर्तन पर आधारित अपने 2018 के अंक में बताया है कि 1992 से 2011 के बीच अंटार्कटिका में प्रतिवर्ष 84 टन बर्फ पिघल चुकी है।

ऐसा अनुमान लगाया जा रहा है कि इस शताब्दी के अंत तक अंटार्कटिका की बर्फ पिघलने पर प्राप्त हुए जल से समुद्र का तल 16 सेंटीमीटर ऊपर उठ सकता है।

इसी प्रकार उत्तरी ध्रुव पर स्थित आर्कटिक प्रदेश में भी जमी बर्फ की परतें बड़े पैमाने पर पिघल जाएंगी। उत्तर ध्रुव के 65° से 80° अक्षांशों के मध्य पायी जाने वाली हिम पेटी भी तेजी से पिघल रही है।

समुद्री तल का ऊपर उठना (Rise in Sea Levels)

- वैश्विक ऊष्मन के चलते ग्लेशियरों के तीव्र पिघलाव के फलस्वरूप समुद्र के जलस्तर में बढ़ोत्तरी होगी। वस्तुत: समुद्र का जलस्तर दो प्रकार से ऊपर उठता है- प्रथम, ग्लेशियरों के पिघलने से तथा द्वितीय, समुद्र के गर्म होकर फैलने से। समुद्री जल का सबसे बड़ा स्रोत हिमनदियाँ हैं। लगातार बढ़ते तापमान तथा जलवायु परिवर्तन जनित प्रभावों के चलते हिमाच्छादन तथा पिघलाव में असंतुलन उत्पन्न हो रहा है। इससे समुद्र के जलस्तर में उभार महसूस किया जा रहा है। एक अध्ययन के अनुसार, 18 हजार वर्ष पूर्व समुद्री जल वर्तमान की अपेक्षा 82 मीटर नीचे था। तब से लेकर आज तक समुद्र का जलस्तर निरंतर ऊपर उठ रहा है।

अमेरिकी स्पेस एजेंसी नासा ने अपने अध्ययन में बताया कि समुद्र का तल 3.20 मिलीमीटर प्रतिवर्ष की दर से ऊपर उठ रहा है।

- **जलवायु परिवर्तन पर अंतर सरकारी पैनल (IPCC)** के अनुसार, सम्पूर्ण विश्व में लगभग 63.5 करोड़ लोग ऐसे निचले स्थलों में रहते हैं, जिनकी समुद्र तल से ऊँचाई 1 मीटर से भी कम है। ऐसा माना जा रहा है कि वर्ष 2080 तक समुद्री जलस्तर में वृद्धि के फलस्वरूप प्रतिवर्ष 10 करोड़ लोग प्रभावित होंगे।
- इसी प्रकार एक अन्य रिपोर्ट में कहा गया है कि समुद्र तल में आधा मीटर वृद्धि से विश्व के अधिकांश छोटे द्वीप, जैसे- किरिबाती, फिजी, मार्शल द्वीप समूह, मालदीव तथा मॉरिशस आदि के डूबने की संभावना है। किरिबाती और फिजी द्वीप समूह प्रशांत महासागर में स्थित हैं। इस द्वीप समूह का कुल क्षेत्रफल लगभग 800 वर्ग किलोमीटर है। इनका अधिकांश भाग समुद्र तल से कुछ फुट ही ऊपर है। ज्वार-भाटा की लहरें लोगों के घरों तक पहुँचने लगी हैं। यहाँ की जनसंख्या को पर्यावरण शरणार्थी के रूप में फिजी में बसाया जा रहा है। इसी प्रकार आशंका है कि तुवालू द्वीपीय देश जलमग्न होकर विश्व मानचित्र से मिटने वाला पहला देश

होगा। अत: यह कह सकते हैं कि जलवायु परिवर्तन की सबसे बड़ी कीमत तुवालू जैसे देशों को चुकानी पड़ेगी।

- समुद्री जलस्तर में वृद्धि के फलस्वरूप तटीय भू-भाग जलमग्न हो जाएगा। इससे कृषि का एक बड़ा क्षेत्र अनुपयुक्त हो जाएगा। मालदीव, बांग्लादेश, क्यूबा, इंडोनेशिया जैसे द्वीपीय देश तथा भारत, ऑस्ट्रेलिया, ब्राजील, अफ्रीका आदि तटीय देशों को कृषि संकट का सामना करना पड़ेगा। एक अनुमान के अनुसार, अकेले बांग्लादेश में उसकी समस्त चावल की खेती योग्य भूमि का 50 प्रतिशत क्षेत्र समुद्री अतिक्रमण का शिकार हो जाएगा।
- समुद्री जलस्तर के प्रसार से भौमजल प्रदूषण की आशंका है। भौमजल में खारे जल के मिल जाने से भौमजल पीने योग्य नहीं रहेगा।
- नेशनल ओसिनोग्राफिक सेंटर ऑफ यूनाइटेड किंगडम की 2018 में प्रकाशित रिपोर्ट के अनुसार, समुद्र के जलस्तर के ऊपर उठने से वर्ष 2100 तक विश्व को 14 ट्रिलियन अमेरिकी डॉलर के मूल्य की आर्थिक क्षति हो सकती है।

प्राकृतिक आपदाओं में वृद्धि

- जलवायु विशेषज्ञों तथा वैज्ञानिकों के तमाम अध्ययनों से यह स्पष्ट हो चुका है कि प्राकृतिक आपदाओं में वृद्धि तथा जलवायु परिवर्तन का आपस में सीधा संबंध है। ग्लोबल वार्मिंग के चलते जलचक्र की गति में तेजी आती है और महासागर, वायुमंडल तथा भूतल के बीच जल चक्र की अवधि कम हो जाती है। इससे वर्षा की मात्रा में विषमता बढ़ जाती है और सूखे तथा बाढ़ की स्थिति उत्पन्न हो जाती है। कुछ जलवायु वैज्ञानिकों का मानना है कि वर्षा तथा हिम पात पर तापमान की अपेक्षा जलवायु का अधिक प्रभाव पड़ता है। उदाहरण के लिए, उत्तरी तथा दक्षिणी अमेरिका के पूर्वी भागों, उत्तरी यूरोप तथा मध्य एवं उत्तरी एशिया के विस्तृत भागों में वर्षा प्रारूप पर स्पष्ट प्रभाव देखने को मिल रहा है।
- वैश्विक ऊष्मन जनित जलवायु परिवर्तन के चलते ग्रीष्म ऋतु की समयावधि शरद ऋतु की अपेक्षा अधिक लंबी होती जा रही है। इससे समुद्र तथा स्थल दोनों गर्म हो रहे हैं। समुद्री भाग की अपेक्षा स्थलीय भाग पर गर्मी अधिक होती है तथा गर्म लहरों की गहनता एवं आवृत्ति में वृद्धि होती है। महासागरीय जल का तापमान बढ़ने से तीव्र चक्रवातों, हरिकेन तथा टारनेडो अधिक संख्या में आते हैं और उनकी तीव्रता भी बढ़ जाती है। इससे व्यापक स्तर पर जन-धन की क्षति होती है।

जलवायु परिवर्तन का वनों पर प्रभाव

पारितंत्र में वनों की भूमिका महत्त्वपूर्ण है। वर्तमान में पृथ्वी के एक-चौथाई भाग पर वन पाए जाते हैं। वन पारितंत्र वाष्पोत्सर्जन, मृदा से नमी की प्राप्ति आदि क्रियाओं के लिए जलवायु पर निर्भर करते हैं। वनों की संरचना भी जलवायु पर ही निर्भर करती है क्योंकि कुछ विशिष्ट प्रजातियों के वृक्ष विशिष्ट जलवायु में ही उत्पन्न होते हैं। यदि जलवायु में असंतुलन उत्पन्न होता है और औसत तापमान में 0.5° सेल्सियस की वृद्धि होती है, तो इससे वृक्षों का विकास अवरूद्ध हो जाएगा तथा अनेक वृक्ष विलुप्त हो सकते हैं।

जलस्रोतों पर प्रभाव

वैश्विक ऊष्मन के फलस्वरूप तापमान में वृद्धि होगी और तापमान में वृद्धि के कारण वाष्पीकरण में भी वृद्धि होगी। एक अनुमान के अनुसार, वर्ष 2080 तक संयुक्त राष्ट्र अमेरिका में 2 से 6 इंच वार्षिक वाष्पीकरण का अनुमान लगाया गया है। इसी प्रकार विश्व के अन्य देशों एवं महाद्वीपों में भी वाष्पीकरण की दर में वृद्धि देखी जा रही है।

जलवायु परिवर्तन का ही परिणाम है कि अरल सागर का लगभग 70 प्रतिशत जल सूख चुका है।

नगरीय जीवन पर प्रभाव

जलवायु परिवर्तन का प्रभाव नगरीय जीवन पर भी दृष्टिगोचर हो रहा है। जलवायु परिवर्तन के चलते तापमान में वृद्धि ने नगरीय जीवन को गहरे स्तर से प्रभावित किया है। नगरों पर वायु का तापमान नगरों के आस-पास के तापमान से अधिक होता है। इस स्थिति को ऊष्मा द्वीप कहा जाता है। ऊष्मा द्वीप (Heat Island) वर्तमान में नगरों की एक प्रबल समस्या के रूप में सामने आया है।

जलवायु परिवर्तन की संकल्पनाएँ

कार्बन पदचिन्ह (Carbon Footprint)

कार्बन पदचिन्ह का अर्थ किसी एक संस्था, व्यक्ति या उत्पाद द्वारा किया गया कुल कार्बन उत्सर्जन है। यह उत्सर्जन कार्बन-डाईऑक्साइड या ग्रीन हाउस गैसों के रूप में होता है। जलवायु विशेषज्ञों के अनुसार, मानव की सभी आदतें, जिनमें खान पान से लेकर पहने जाने वाले कपड़े तक शामिल हैं, कार्बन पदचिन्ह के कारण बनते हैं।

सामान्य अर्थों में देखें, तो प्रत्येक कार्य के लिए ऊर्जा की आवश्यकता पड़ती है और इससे कार्बन-डाईऑक्साइड गैस उत्सर्जित होती है, जो धरातल को गर्म करने वाली सबसे अहम गैस है। हम प्रत्येक दिन, महीने तथा वर्ष में जितनी कार्बन-डाईऑक्साइड गैस पैदा करते हैं, वह हमारा कार्बन पदचिन्ह होता है।

कार्बन पदचिन्ह के प्रकार

कार्बन पदचिन्ह को मुख्यत: दो रूपों में वर्गीकृत किया गया है-

- **संगठनात्मक:-** ऊर्जा उपयोग, औद्योगिक प्रक्रियाओं और कंपनी वाहनों जैसे संगठन में सभी गतिविधियों से कार्बन-डाईऑक्साइड का उत्सर्जन होता है।
- **उत्पाद:-** किसी उत्पाद या सेवा के पूरे जीवन में कार्बन-डाईऑक्साइड का उत्सर्जन होता है।

कार्बन पदचिन्ह को कम करने के उपाय-

- नवीकरणीय ऊर्जा संसाधनों को बढ़ावा देकर।
- सार्वजनिक परिवहन और कार-पूल का उपयोग।
- वनावरण में वृद्धि द्वारा कार्बन उत्सर्जन में कमी लाना।
- सामुदायिक स्तर पर ग्रीन हाउस गैसों को कम करने वाली प्रथाओं को प्रोत्साहित करके।

ब्लैक कार्बन

ब्लैक कार्बन जीवाश्म ईंधन, लकड़ी और अन्य ईंधनों के अपूर्ण दहन से निर्मित पार्टिकुलेट मैटर का प्रभावशाली जलवायु तापन घटक है। एक हालिया अध्ययन में पाया गया है कि पछुआ विक्षोभों और पवन प्रवाह के माध्यम से भूमध्यसागरीय प्रदेशों से प्रवाहित होने वाला ब्लैक कार्बन, प्रदूषण और हिमालयी क्षेत्र में हिम के पिघलने की दर में वृद्धि करने वाले कारकों में से एक हो सकता है। यह बादल निर्माण के साथ-साथ स्थानीय परिसंचरण और वर्षा प्रतिरूप को भी प्रभावित करता है।

ग्रीन कार्बन

वृक्षों की प्रकाश-संश्लेषण क्रिया द्वारा वायुमंडल के कार्बन-डाईऑक्साइड से जो कार्बन निकलकर पौधों तथा मृदा में संग्रहित हो जाता है, वह ग्रीन कार्बन कहलाता है। ग्रीन कार्बन के निर्माण तथा संचरण में उतार-चढ़ाव होता रहता है। मौसम के अनुरूप बायोमास में इसका सांद्रण कम-ज्यादा होता रहता है।

पादप अथवा वनस्पतियों में ग्रीन कार्बन लघु जीवन अवधि के कारण थोड़े समय के लिए रहता है एवं कुछ समय के बाद वे इस कार्बन को मुक्त कर देते हैं।

ब्लू कार्बन

वातावरण में संचरित अथवा उपस्थित कार्बन जब तटीय पारिस्थितिक तंत्रों एवं समुद्री पारितंत्र में संग्रहित हो जाता है, तो इसे ब्लू कार्बन कहा जाता है।

तटीय पारितंत्र पृथ्वी पर मौजूद सबसे महत्त्वपूर्ण पारितंत्रों में से एक है। वे हमें आवश्यक पारितंत्रीय सेवाएँ प्रदान करते हैं, जैसे कि चक्रवातों से सुरक्षा आदि। इसी प्रकार वे ब्लू कार्बन का अनुक्रमण और भण्डारण भी करते हैं।

ऐसा माना जाता है कि समुद्र वायुमंडलीय कार्बन का सबसे बड़ा अवशोषक है। लगभग 55 प्रतिशत कार्बन-डाईऑक्साइड का अवशोषण समुद्र द्वारा कर लिया जाता है और उसमें 50-70% तक अवशोषण समुद्री वनस्पतियों द्वारा कर लिया जाता है। समुद्री वनस्पतियों के अंतर्गत समुद्री घास (Sea Grass), लवणीय दलदल (Sea Marshes), मैंग्रोव वन तथा समुद्री खरपतवार शामिल हैं। इन्हें ही ब्लू कार्बन आवास कहा जाता है।

ब्राउन कार्बन

यह मुख्य रूप से कार्बनिक बायोमास के दहन से उत्पन्न होता है और ब्लैक कार्बन के साथ पाया जाता है।

कार्बन क्रेडिट

कार्बन क्रेडिट एक व्यापार योग्य साख-पत्र या प्रमाण-पत्र है, जो धारक को 1 टन कार्बन-डाईऑक्साइड के वैश्विक तापन क्षमता के बराबर अन्य हरितगृह गैसों (जिनकी मात्रा 1 टन CO_2 के बराबर हो) के उत्सर्जन का अधिकार देता है।

कार्बन क्रेडिट की संकल्पना क्योटो प्रोटोकॉल-1997 के दौरान चर्चा में आयी थी। इस प्रोटोकॉल के तहत विकसित देशों को ग्रीन हाउस गैसों के उत्सर्जन में 2012 तक कमी लाते हुए उसमें 1990 के स्तर से 5.2 प्रतिशत की कमी लानी थी। UNFCCC ने सदस्य देशों को इस प्रोटोकॉल के तहत लक्ष्य हासिल करने के लिए अतिरिक्त उपाय भी प्रस्तावित किया, जिसे बाजार आधारित तंत्र कहते हैं। यह तीन प्रकार का होगा-

- स्वच्छ विकास तंत्र।
- संयुक्त क्रियान्वयन।
- अंतर्राष्ट्रीय उत्सर्जन विकास।

कार्बन क्रेडिट कैसे कार्य करता है?

कार्बन क्रेडिट मूल रूप से सरकार या अन्य नियामक निकाय द्वारा जारी किया गया परमिट है, जो अपने धारक को एक निर्दिष्ट अवधि में हाइड्रोकार्बन ईंधन की एक निश्चित मात्रा को जलाने की अनुमति देता है। जैसा कि प्रत्येक कार्बन क्रेडिट का मूल्य 1 टन हाइड्रोकार्बन ईंधन के मुकाबले होता है। कंपनियों या देशों को एक निश्चित संख्या में क्रेडिट आवंटित किए जाते हैं और वे विश्वभर के उत्सर्जन को संतुलित करने में मदद करने के लिए उनका व्यापार कर सकते हैं।

कार्बन ट्रेडिंग या कार्बन व्यापार

कार्बन ट्रेडिंग अंतर्राष्ट्रीय उद्योग में कार्बन उत्सर्जन नियंत्रण की योजना है। कार्बन क्रेडिट सही मायने में किसी देश द्वारा किए गए कार्बन उत्सर्जन को नियंत्रित करने का प्रयास है। कार्बन डाईऑक्साइड और अन्य ग्रीन हाउस गैसों के उत्सर्जन को कम करने के लिए क्योटो प्रोटोकॉल के तहत प्रक्रियाओं का नियमन किया गया था, जिसे कार्बन ट्रेडिंग का नाम दिया गया।

कार्बन ट्रेडिंग के अंतर्गत प्रत्येक देश या उसके अंदर मौजूद विभिन्न औद्योगिक सेक्टर, जैसे- टैक्सटाइल, ऑटोमोबाइल या अन्य उद्योगों के लिए एक निश्चित मात्रा में कार्बन उत्सर्जन की सीमा निर्धारित की जाती है। यदि किसी देश ने अधिक औद्योगिक गतिविधियों द्वारा अपनी निर्धारित सीमा का कार्बन उत्सर्जित कर लिया है और उत्पादन कार्य जारी रखना चाहता है, तो वह किसी ऐसे देश से कार्बन को खरीद सकता है, जिसने अपनी सीमा का आवंटित कार्बन उत्सर्जित नहीं किया है। प्रत्येक देश को कार्बन उत्सर्जन की सीमा का आवंटन UNFCCC द्वारा किया जाता है।

कार्बन क्रेडिट का व्यापार बाजार मांग और पूर्ति के नियम पर चलता है, जिसको आवश्यकता है वह खरीद सकता है और जिसे बेचना है वह बेच सकता है। जैसे- ब्रिटेन, भारत में कोयले की जगह सौर ऊर्जा की कोई परियोजना शुरू करे। फलतः इससे कार्बन डाईऑक्साइड का उत्सर्जन कम होगा। इसका मापन किया जाएगा है और फिर कार्बन उत्सर्जन में जितनी कमी आती है उतना क्रेडिट ब्रिटेन को प्रदान किया जाएगा।

पिछले कुछ वर्षों में कार्बन क्रेडिट का वैश्विक व्यापार लगभग 6 बिलियन डॉलर तक पहुँच गया है। इसमें भारत की हिस्सेदारी 22 से 25 प्रतिशत है।

कार्बन पूल

यह एक ऐसी प्रणाली होती है, जिसके अंतर्गत कार्बन को संग्रहित एवं विमुक्त करने की क्षमता होती है। जमीन के ऊपर का बायोमास, जमीन के नीचे का बायोमास, मृत लकड़ियां, कूड़ा और मृदा जैसे कार्बनिक पदार्थों को मराकेश समझौते के अंतर्गत कार्बन पूल चिन्हित किया गया है।

जियो-इंजीनियरिंग

जियो-इंजीनियरिंग को जलवायु इंजीनियरिंग (Climate Engineering) भी कहते हैं। इसके अंतर्गत खनन एवं जलवायु, भूगर्भ विज्ञान, अर्थ साइंस, सिविल इंजीनियरिंग आदि सम्मिलित हैं। जियो-इंजीनियरिंग के अंतर्गत पृथ्वी की जलवायु को तकनीकी विधि द्वारा नियंत्रित किया जाता है। ऑक्सफोर्ड विश्वविद्यालय के अनुसार, "जियो-इंजीनियरिंग जलवायु परिवर्तन को नियंत्रित करने के लिए पृथ्वी के प्राकृतिक पर्यावास के साथ बड़े पैमाने पर किया गया हस्तक्षेप है।"

REDD : Reduced Emmission from Avoided Deforestation and Degradation

यह वन संपदा के अनचाहे विनाश को रोककर विकासशील देशों के लिए वन-प्रबंधन हेतु लागू किया जाता है। वनों के अंधाधुंध कटाव के कारण हुई जलवायु परिवर्तन की समस्या को मद्देनजर रखते हुए UNFCCC द्वारा 2005 में इसे अपनाया गया। इसका उद्देश्य वन संरक्षण को प्रोत्साहित करके जलवायु परिवर्तन शमन को प्राप्त करना है।

राष्ट्रीय REDD+ रणनीति

- यह केन्द्रीय पर्यावरण, वन और जलवायु परिवर्तन मंत्रालय (MOEFCC) द्वारा जारी की जाती है।
- REDD+ के कवरेज के अंतर्गत वन क्षेत्र के अंदर तथा बाहर के स्थित वृक्षों को शामिल किया जाएगा।
- **इसके अंतर्गत तीन चरणबद्ध दृष्टिकोण हैं-**

  चरण-1 : राष्ट्रीय कार्ययोजनाओं एवं रणनीतियों, उपायों, नीतियों और क्षमता निर्माण का विकास करना।

  चरण-2 : राष्ट्रीय नीतियों, राष्ट्रीय रणनीतियों एवं उपायों या कार्य योजनाओं का क्रियान्वयन करना।

  चरण-3 : परिणामी क्रियाओं में विकास करना तथा रिपोर्ट एवं सत्यापन को बढ़ावा देना आदि।

सबनेशनल REDD+ रणनीति

- भारतीय वन सर्वेक्षण द्वारा देश को 14 भौगोलिक क्षेत्रों में विभाजित किया गया है। इन भौगोलिक क्षेत्रों को REDD+ एक्शन प्लान हेतु सहयोग एवं विकास के लिए राज्य सरकार के अंतर्गत रखा गया है।
- नमामि गंगे, ग्रीन हाइवे नीति-2015, नदी जलसंग्रहण क्षेत्र तथा वानिकी हस्तक्षेप, महाराष्ट्र की हरित सेना जैसे कार्यक्रम REDD+ वन कार्बन स्टॉक के संवर्द्धन हेतु कार्यरत हैं।
- वनों की कटाई और वन निम्नीकरण को संबोधित करने के साथ हितधारकों के मध्य जागरूकता पैदा करती है।
- प्रतिपूरक वनीकरण कोष, हरित जलवायु कोष तथा वित्त पोषण के अन्य स्रोतों के द्वारा वित्त का हस्तांतरण करना।

❑❑❑❑❑

अध्याय 12

जलवायु परिवर्तन के लिए अंतर्राष्ट्रीय प्रयास
International Initiatives on Climate Change

जलवायु परिवर्तन के लिए अंतर सरकारी पैनल (IPCC)

लगभग 20वीं सदी के आस-पास हुए औद्योगीकरण के कारण हरित गृह गैसों का प्रभाव अत्यधिक हो गया जिसके तहत मानवीय क्रियाओं के द्वारा जलवायु परिवर्तन पर संयुक्त राष्ट्र महासभा द्वारा हुए ब्रंटलैंड कमीशन (जलवायु परिवर्तन से संबंधित) की रिपोर्ट पर पुन: बैठक की आवश्यकता महसूस हुई। बढ़ती हुई जलवायु परिवर्तन की समस्या के समाधान हेतु सन् 1988 में विश्व मौसम विज्ञान संगठन (World Meteoroligical Organization) तथा संयुक्त राष्ट्र पर्यावरण कार्यक्रम (United Nation Environment Programme) के द्वारा PCC (Panel on Climate Change) की स्थापना की गई। यह सदैव संयुक्त राष्ट्र (UN) एवं विश्व मौसम विज्ञान संगठन (WMO) के सदस्यों के लिए कार्यरत है। इसके द्वारा जलवायु की स्थिति का अध्ययन किया जाता है तथा उस पर रिपोर्ट तैयार की जाती है एवं यह अलग-अलग मॉडलों की भविष्यवाणी पर आधारित है। इसके अंतर्गत जलवायु परिवर्तन विज्ञान प्रभाव, अनुकूलन एवं भेद्यता, जलवायु परिवर्तन विज्ञान, उपशमन आदि कार्य शामिल हैं।

IPCC की रिपोर्ट

जलवायु परिवर्तन पर पहली मूल्यांकन रिपोर्ट 1990 में तैयार की गई थी, जिसमें संयुक्त राष्ट्र की सामान्य सभा (UN-General Assembly) द्वारा UNFCCC के लिए अंतर्राष्ट्रीय स्तर पर भूमिका निभाई गई। दूसरी रिपोर्ट 1995, तीसरी 2001 तथा चौथी रिपोर्ट 2004 में तैयार की गई। IPCC की अंतिम रिपोर्ट वर्ष 2018 में तैयार की गई। जिसके प्रमुख निष्कर्ष हैं:-

वैश्विक तापमान की स्थिति मानव-जनित ग्लोबल वार्मिंग के द्वारा 2017 में ही, पूर्व औद्योगिक स्तर पर 1 डिग्री सेल्सियस के ऊपर तक पहुँच गई थी। अलग-अलग देशों में जलवायु परिवर्तन से वर्तमान प्रयासों को देखते हुए 2030 से 2052 के मध्य पृथ्वी का तापमान का 1.5 डिग्री सेल्सियस से ऊपर तक जाने की संभावना है।

वर्ष 2000 के बाद से ही मानव जनित तापन का अनुमानित स्तर ऐतिहासिक काल में घटित सौर आपदाओं एवं अन्य प्राकृतिक आपदाओं (ज्वालामुखी) के योगदान के कारण उत्पन्न हुए तापन के अनुमानित स्तर के समान हो चुका है।

1.5 डिग्री सेल्सियस वृद्धि पर ग्लोबल वार्मिंग के प्रभाव का बहुत ही नकारात्मक परिणाम हो सकता है। समुद्र स्तरों में वृद्धि के साथ वर्षा की मात्रा में वृद्धि होगी तथा सूखे एवं बाढ़ की बारम्बारता अधिक हो सकती है जिसके साथ-साथ उष्णकटिबंधीय चक्रवातों की तीव्रता में वृद्धि होगी तथा महासागरों में अम्लीकरण का प्रभाव अत्यधिक होगा जिसकी वजह से समुद्री पारितंत्र नष्ट हो सकता है।

- **स्पेशल क्लाइमेट चेंज फंड (Special Climate Change Fund):-** इसकी स्थापना वर्ष 2001 में मराकेश में कोप-7 की देख-रेख में अनुक्रिया स्वरूप की गई थी। यह लीस्ट डेवलप्ड कंट्रीज फंड (LDCF) का पूरक है तथा यह (LDCF) के विपरीत सभी विकासशील देशों में कार्यरत है।
- **एडॉप्टेशन फंड (AF):-** इसकी स्थापना वर्ष 2001 में की गई थी। इसका उद्देश्य क्योटो प्रोटोकॉल के पक्षकार विकासशील देश, जो जलवायु परिवर्तन के लिए कार्यरत हैं, को वित्तीय सहायता प्रदान करना है। इसका वित्तीय पोषण क्लीन डेवलपमेंट मैकेनिज्म (CDM) परियोजना गतिविधियों से प्राप्त आय के हिस्से एवं वित्त पोषण के अन्य स्रोतों से किया जाता है।
- **ग्रीन क्लाइमेट फंड (Green Climate Fund):-** इसकी स्थापना कोप-16 के अंतर्गत की गयी, जो कानकुन (मैक्सिको) में आयोजित किया गया था। इसके माध्यम से अनुकूलन एवं शमन क्रियाकलापों हेतु विकासशील देशों को सहायता प्रदान की जाती है तथा यह विश्व बैंक के अंतर्गत कार्यरत है।
- **हॉट हाउस (Hot House):-** यह एक ऐसा निकाय है जिसमें किसी एक निश्चित मानक से ऊपर की प्राकृतिक प्रक्रिया के तहत अनियंत्रित ऊष्मन (तापन) को प्रदर्शित किया जाता है।

पृथ्वी शिखर सम्मेलन–1992

औसत वैश्विक तापमान वृद्धि को सीमित करके जलवायु परिवर्तन से निपटने हेतु वर्ष 1992 में विभिन्न देशों द्वारा UNFCCC को अंतर्राष्ट्रीय सहयोग के एक फ्रेमवर्क के रूप में अपनाया गया। इस पर पहली रिपोर्ट 1992 में तैयार की गई। जिसने संयुक्त राष्ट्र के कार्यक्रम को आधार प्रदान किया, साथ ही इस रिपोर्ट के साथ विश्व के सभी देशों ने UNFCCC पर सहमति स्थापित की।

वर्ष 1992 के 'रियो पृथ्वी शिखर सम्मेलन' में अपनाए गये तीन प्रमुख अभिसमयों में से एक है तथा अन्य दो-कंवेंशन टू कॉम्बेट डेजर्टिफिकेशन तथा यूनाइटेड नेशन कंवेंशन ऑन बायोलॉजिकल डाइवर्सिटी हैं।

UNCCD 2019

मरुस्थलीकरण और संयुक्त राष्ट्र का कॉप–14

मरुस्थलीकरण जमीन के अनुपजाऊ हो जाने की ऐसी प्रक्रिया है जिसमें जलवायु परिवर्तन तथा मानवीय गतिविधियों समेत अन्य कई कारणों से शुष्क, अर्द्ध-शुष्क और निर्जल, अर्ध-नम इलाकों की जमीन रेगिस्तान में बदल जाती है। इससे जमीन की उत्पादन क्षमता में कमी और ह्रास होता है। एशियाई देशों में मरुस्थलीकरण पर्यावरण सम्बन्धी एक प्रमुख समस्या है। भारत में निर्जल भूमि के अन्तर्गत गर्म जलवायु वाले शुष्क, अर्द्ध-शुष्क और अर्द्ध-नम क्षेत्र शामिल हैं। सरल शब्दों में समझें तो मरुस्थलीकरण एक तरह से भूमि क्षरण का वह प्रकार है, जब शुष्क भूमि क्षेत्र निरंतर बंजर होता है और नम भूमि भी कम हो जाती है। साथ ही साथ, वन्यजीव और वनस्पति भी खत्म होती जाती है। इसकी कई वजहें होती हैं, इसमें जलवायु परिवर्तन और इंसानी गतिविधियां प्रमुख हैं। इसे रेगिस्तान भी कहा जाता है और दुनिया का 23 प्रतिशत भौगोलिक क्षेत्र मरुस्थलीकरण की चपेट में आ चुका है। भारत की कुल जमीन का लगभग 30 प्रतिशत हिस्सा मरुस्थल बन चुका है।

विश्व भर में तेजी से मरुस्थलीकरण होने का कारण माना जा रहा है कि वर्ष 2050 तक मरुस्थलीकरण के कारण विश्व की करीब 70 करोड़ की आबादी को पलायन के लिए मजबूर होना पड़ेगा। मरुस्थलीकरण के कारण न केवल मानवीय जीवन पर प्रभाव पड़ रहा है, बल्कि वन्यजीवों पर भी इससे संकट के बादल मंडरा रहे हैं और उनका जीवन प्रभावित हो रहा है। भूमि के बंजर होने से लगातार खेती का क्षेत्र घटता जा रहा है और भू-क्षरण बढ़ रहा है। जिससे निकट भविष्य में अनाज का भीषण संकट गहराने की संभावना जताई जा रही है। यही कारण है कि पूरी दुनिया मरुस्थलीकरण को लेकर चिंतित है। इसी चिंता ने विश्व के सभी देशों को मरुस्थलीकरण से निपटने के लिए एकजुट किया और इस संयुक्त राष्ट्र के कॉप-14 सम्मेलन (यूएनसीसीडी) का लक्ष्य भी बढ़ते मरुस्थलीकरण को रोकना ही रखा गया तथा भारत ने पहली बार संयुक्त राष्ट्र के कॉप-14 (यूएनसीसीडी) की मेजबानी की। इस सम्मेलन का आयोजन ग्रेटर नोएडा में किया गया, जहाँ 196 देशों के प्रतिनिधि, बुद्धिजीवी, मीडिया प्रतिनिधि, पर्यावरणविद्, छात्र-छात्राओं आदि ने मरुस्थलीकरण और सूखे पर मंथन किया। 2 सितंबर को सम्मेलन के शुभारंभ के अवसर पर केंद्रीय मंत्री प्रकाश जावड़ेकर ने कहा कि दुनिया को बढ़ते मरुस्थलीकरण से बचाने के लिए सकारात्मक प्रयास करने होंगे। ऐसा करने से जैव विविधता और जलवायु परिवर्तन को रोका जा सकता है।

कॉप क्या है?

कॉप को सर्वोच्च निर्णय लेने वाली संस्था के रूप में संयुक्त राष्ट्र कन्वेंशन द्वारा स्थापित किया गया था। इसमें यूरोपीय संघ जैसे सरकारी और क्षेत्रीय आर्थिक एकीकरण संगठन शामिल हैं। आज तक कॉप ने तेरह सत्र आयोजित किए थे। यह वर्ष 2001 से आयोजित किया जा रहा है। वर्ष 2017 में चीन के ऑर्डोस में कॉप 13 का आयोजन किया गया था। कॉप का एक मुख्य कार्य पार्टियों द्वारा प्रस्तुत रिपोर्ट की समीक्षा करना है कि वे अपनी प्रतिबद्धताओं को कैसे पूरा कर रहे हैं। कॉप इन रिपोर्टों के आधार पर सिफारिशें करता है। इसमें कन्वेंशन में संशोधन करने या नए एनेक्स को अपनाने की शक्ति भी है, जैसे कि अतिरिक्त क्षेत्रीय कार्यान्वयन एनेक्स।

खेती के योग्य बनाने हेतु यूनाइटेड नेशंस कन्वेंशन के साथ समझौता

केंद्र सरकार बंजर जमीन को खेती के योग्य बनाने के लिए यूनाइटेड नेशंस कन्वेंशन के साथ समझौता भी करेगी। केंद्रीय मंत्री प्रकाश जावड़ेकर ने सम्मेलन के पहले दिन कहा था कि हमारी सरकार नई दिल्ली डिक्लेरेशन में बताए गए नियम एवं कायदों के मुताबिक इस काम को आगे बढ़ाएगी।

जलवायु परिवर्तन पर संयुक्त राष्ट्र फ्रेमवर्क कन्वेंशन (यूएनएफसीसीसी)

जलवायु परिवर्तन पर संयुक्त राष्ट्र फ्रेमवर्क (यूएनएफसीसीसी) एक अंतर्राष्ट्रीय समझौता है। इसका मुख्य उद्देश्य वायुमंडल में ग्रीनहाउस गैसों के उत्सर्जन को नियंत्रित करना है। यह समझौता जून, 1992 के पृथ्वी सम्मेलन के दौरान किया गया था। इस समझौते पर विभिन्न

देशों द्वारा हस्ताक्षर के बाद 21 मार्च, 1994 को इसे लागू किया गया था। यूएनएफसीसीसी की वार्षिक बैठक का आयोजन वर्ष 1995 से लगातार किया जा रहा है। यूएनएफसीसीसी की वार्षिक बैठक को कॉन्फ्रेंस ऑफ द पार्टीज (कॉप) के नाम से भी जाना जाता है।

UNFCCC के अंतर्गत प्रमुख गतिविधियां निम्नलिखित हैं-

कोप (Cop - Confrence of the Parties)

जलवायु परिवर्तन पर अंतर सरकारी पैनल की रिपोर्ट प्राप्त होने के पश्चात् ग्रीन हाउस गैस की समस्या अत्यधिक चिंता का विषय था। अत: इसे नियंत्रित करने हेतु कई देशों की सरकार, सहकारी विभाग एवं प्राइवेट पार्टियों ने सहमति जताई थी तथा ग्रीन हाउस गैस के नियंत्रण हेतु वर्ष 1992 में आयोजित Earth Summit का आयोजन हुआ एवं कोप पर सहमति जताई गई।

- **क्योटो सम्मेलन:-** इसमें भाग लेने वाले देशों ने यह महसूस किया कि वैश्विक कोपणता एक कटु सत्य है और इसका मुख्य कारण मानव द्वारा जनित कार्बन डाई-ऑक्साइड में निरंतर वृद्धि है। इसे क्योटो (जापान) में 1997 में आयोजित किया गया, परन्तु यह 2005 में ही कार्यान्वित हो सका। इस लम्बे विलम्ब का मुख्य कारण यह था कि कम-से-कम 55 देशों द्वारा इसे अनुसमर्थन (Ratification) किया जाना था। 2005 तक इस पर 169 देशों ने हस्ताक्षर कर दिए थे। संयुक्त राज्य अमेरिका तथा ऑस्ट्रेलिया ने दिसम्बर, 2007 तक इसका अनुसमर्थन करने से इन्कार किया था।

इसमें लिए गए निर्णय के अनुसार विश्व का तापमान बढ़ाने वाली छह गैसों-कार्बन डाई-ऑक्साइड, मीथेन, नाइट्रस ऑक्साइड, हाइड्रोफ्लोरो कार्बन, पर फ्लोरो कार्बन (Per Fluorocarbons) तथा सल्फर हेक्साफ्लोराइड (Sulfur Hexafluoride) के उत्सर्जन को कम करने के ध्येय को अनिवार्य किया गया। विकसित देशों द्वारा विकासशील देशों को तकनीकी एवं आर्थिक सहायता देने की भी बात कही गई है।

अधिकांश औद्योगिक देशों के लिए उत्सर्जन की सीमा को 1990 के स्तर से कम करना अनिवार्य है। यद्यपि कुछ देशों को 1990 के स्तर से 10% अधिक उत्सर्जन करने की छूट होगी। सामान्यत: विकासशील देशों के लिए उत्सर्जन में कमी करना अनिवार्य नहीं है, परन्तु भविष्य में उन्हें उत्सर्जन को कम करने के लिए कहा जाएगा।

दोष:-

- विश्व में अधिक उत्सर्जन करने वाले कुछ देशों के लिए उत्सर्जन को कम करना अनिवार्य नहीं है।
- संयुक्त राज्य अमेरिका की गणना विश्व के सबसे बड़े उत्सर्जक देशों में की जाती है। इस देश ने इस प्रोटोकॉल का अनुसमर्थन नहीं किया है।
- चीन, भारत, ब्राजील, दक्षिण अफ्रीका, इण्डोनेशिया, दक्षिण कोरिया आदि विश्व की कुछ बड़ी एवं तेजी से बढ़ने वाली अर्थव्यवस्था वाले देशों ने प्रोटोकॉल में निश्चित किए गए लक्ष्य को नहीं माना।
- यह प्रोटोकॉल 180 देशों द्वारा अनुसमर्थन के बाद ही लागू हुआ। इससे इसकी वैधता पर प्रश्न चिह्न लगता है।

- **कानकुन-2010 (कोप-16):-** इस सम्मेलन का मुख्य उद्देश्य ग्रीन क्लाइमेट फंड की रूपरेखा के साथ वनों के विनाश को कम करना तथा जलवायु परिवर्तन को कम करने में सहायक प्रौद्योगिकी को विकसित करना एवं उनका स्थानान्तरण करना था। इस सम्मेलन का आयोजन मैक्सिको के कानकुन में नवंबर, 2010 में हुआ। इस सम्मेलन में विभिन्न पहलुओं पर वार्ताएं होती रही तथा विकसित एवं विकासशील देशों में मतभेद को कम करने में सहायता मिली। विकसित देशों को तकनीक एवं आर्थिक सहायता के साथ विकासशील देशों पर उत्सर्जन कम करने के लिए मजबूर किया गया। जलवायु परिवर्तन के एक अंतर सरकारी पैनल (IPCC) रिपोर्ट के अनुसार, औद्योगिक क्रांति से हरित गृह गैसों में काफी वृद्धि दर्ज की गई है और वर्ष 1970 तथा 2004 के बीच यह लगभग 70% है। इस सम्मेलन में यह सुनिश्चित किया गया कि विकास की पोषणीय नीति के अनुसार हुई हरित गृह गैसों की वृद्धि का अल्पीकरण किया जा सकता है।

कानकुन सम्मेलन में चर्चा का मुख्य विषय विश्व के औसत तापमान में 2 C से कम तथा औद्योगिक क्रान्ति के बाद की अवधि में 1.5 C से कम वृद्धि करने का लक्ष्य था तथा इसके साथ 90 देशों द्वारा जलवायु परिवर्तन को कम करने हेतु हरित गृह गैसों के उत्सर्जन पर कमी लाने की सहमति दर्ज की गई।

- **डरबन-2011 (कोप-17):-** डरबन (कोप-17) का उद्देश्य कानकुन सम्मेलन की त्रुटियों को दूर करने के लिए किया गया था, लेकिन विभिन्न देशों से एकत्रित हुए राष्ट्राध्यक्षों द्वारा जलवायु परिवर्तन की समस्या के समाधान हेतु वैश्विक समझौते में आपसी मतभेद के कारण इस सम्मेलन का असर फीका रह गया। अत: इसके कुछ निर्णय पर ध्यान दिया गया है:-
  - क्योटो प्रोटोकॉल की आगामी अवधि के लिए समझौता।

- भारत के सतत् पोषणीय विकास के लिए एक समान पहुँच संबंधी मांग मान ली गई।
- इसके साथ अंतर्राष्ट्रीय स्तर पर ग्रीन क्लाइमेट फंड की स्थापना की गई, परन्तु वित्तीय व्यवस्था के प्रावधान की कोई व्याख्या नहीं हो सकी।

- **दोहा-2012 (कोप-18):-** इस सम्मेलन का आयोजन दिसंबर, 2012 दोहा (सऊदी अरब) में किया गया। इस सम्मेलन का मुख्य उद्देश्य विगत् तीन वर्षों में आयोजित सम्मेलनों के लाभों को एकत्रित करके भविष्य के लिए नई कार्यप्रणाली का आयोजन किया जाना था। इसके अंतर्गत लिए गए मुख्य निर्णय इस प्रकार हैं:-
  - अंतर्राष्ट्रीय स्तर पर 2015 तक होने वाले सभी जलवायु परिवर्तनों की समय-सारणी तैयार करना तथा आने वाले वर्ष 2020 तक इसे लागू करना।
  - हरित गृह गैसों के उत्सर्जन को कम करने के लिए तथा सुभेद्य देशों की सहायता हेतु आवश्यकता पर बल दिया गया।
  - क्योटो प्रोटोकॉल के अंतर्गत नई-नई तकनीकी को विकसित करने हेतु (जो जलवायु परिवर्तन को कम करने में सहायक हो) निर्णय लिया गया तथा अमीर देशों द्वारा उत्सर्जित हरित गृह गैसों को कम करने का प्रावधान स्थापित किया गया।
  - सम्मेलन के दस्तावेजों में पहली बार क्षति के लिए उपर्युक्त बातों को निरूपित किया गया।

- **वारसा-2013 (कोप-19):-** कोप-19 का सम्मेलन नवंबर, 2013 में पोलैंड के वारसा में आयोजित किया गया। इस सम्मेलन में भविष्य में होने वाली बैठकों के संबंध में चर्चा की गई थी तथा साथ ही साथ पेरु में आयोजित होने वाले कोप- 20 की रूपरेखा को निश्चित करने का प्रयास किया गया। भारत ने भी इस सम्मेलन में भाग लिया तथा विकासशील देशों को आर्थिक एवं तकनीकी सहायता प्रदान करने की मांग की गई तथा भविष्य में होने वाले जलवायु परिवर्तन को लेकर निम्नवत् सहमति स्थापित की गई।
  - सभी देश भविष्य में 2015 तक, तापमान वृद्धि को 2°C से नीचे रखने का प्रयास करेंगे।
  - दोहा (2012) में आयोजित सम्मेलन में निश्चित किया गया कि जलवायु परिवर्तन से होने वाली क्षति के लिए नई आर्थिक नीति को विकसित किया जाए।
  - REDD के अंतर्गत कार्यरत जलवायु परिवर्तन से पीड़ित देशों को आर्थिक सहायता सुनिश्चित की जाए।

इस सम्मेलन का मुख्य उद्देश्य विगत वर्षों में कार्बन डाई ऑक्साइड से पीड़ित देशों के वनों की सुरक्षा के लिए आर्थिक सहायता हेतु REDD के लिए वित्तीय समाधान करना।

- **लीमा सम्मेलन-2014:-** यह बैठक दिसंबर, 2014 में पेरु की राजधानी लीमा में की गई। हरितगृह गैसों को कम करने और तापमान में वृद्धि को 2°C तक सीमित करने के उद्देश्य से आयोजित हुआ। क्योटो प्रोटोकॉल की तरह लीमा सम्मेलन का प्रभाव भी कालान्तर में कम हो गया। रूस, ऑस्ट्रेलिया और कनाडा जैसे देशों द्वारा महसूस किया गया कि क्योटो प्रोटोकॉल के तहत विकासशील देशों को अधिक आर्थिक एवं तकनीकी सहायता प्रदान करने हेतु अनुबन्ध अब प्रभावहीन हो चुके हैं।

लीमा सम्मेलन में विकसित देशों द्वारा उत्सर्जित ग्रीन हाउस गैसों का भी आंकलन किया गया है जिसकी वजह से विकासशील देशों को होने वाली क्षतिपूर्ति के लिए आर्थिक सहायता उपलब्ध कराने पर विचार-विमर्श किया गया।

- **पेरिस समझौता-2015 (कोप-21):-** दिसंबर, 2015 में पेरिस में हुई सीओपी की 21वीं बैठक में कार्बन उत्सर्जन में कटौती के जरिये वैश्विक तापमान में वृद्धि को 2 डिग्री सेल्सियस के अंदर सीमित रखने और 1.5 डिग्री सेल्सियस के आदर्श लक्ष्य को लेकर एक व्यापक सहमति बनी थी। इस बैठक के बाद सामने आए 18 पन्नों के दस्तावेज को सीओपी 21 समझौता या पेरिस समझौता कहा जाता है। अक्टूबर, 2016 तक 191 सदस्य देशों ने इस समझौते पर हस्ताक्षर कर दिए यानी अधिकांश देश ग्लोबल वार्मिंग पर काबू पाने के लिए जरूरी तौर-तरीके अपनाने पर राजी हो गए जो एक बड़ी उपलब्धि मानी गयी।

इस समझौते का क्या महत्त्व है?

पेरिस संधि पर शुरुआत में ही 177 सदस्यों ने हस्ताक्षर कर दिए थे। ऐसा पहली बार हुआ जब किसी अंतर्राष्ट्रीय समझौते के पहले ही दिन इतनी बड़ी संख्या में सदस्यों ने सहमति व्यक्त की। इसी तरह का एक समझौता 1997 का क्योटो प्रोटोकॉल है, जिसकी वैधता 2020 तक बढ़ाने के लिए 2012 में इसमें संशोधन किया गया था। लेकिन व्यापक सहमति के अभाव में ये संशोधन अभी तक लागू नहीं हो पाए हैं।

जलवायु परिवर्तन पर सहमति बनाने में इतना समय क्यों लगा?

पिछले 22 सालों से सीओपी बैठकों में विवाद का सबसे बड़ा बिंदु सदस्य देशों के बीच जलवायु परिवर्तन से निपटने की जिम्मेदारी और इसके बोझ के उचित बंटवारे का रहा है। विकसित देश भारत और चीन जैसे विकासशील देशों पर वैश्विक उत्सर्जन बढ़ाने का दोष लगाते हुए कार्बन उत्सर्जन में वृद्धि की अपनी ऐतिहासिक जिम्मेदारी से बचते रहे हैं, जबकि आज भी विकासशील और विकसित देशों के बीच प्रति व्यक्ति कार्बन उत्सर्जन में बड़ा अंतर है।

इस समझौते में सदस्य देशों की क्या भूमिका है?

कार्बन उत्सर्जन और ग्लोबल वार्मिंग को काबू में रखने के लिए पेरिस सम्मेलन के दौरान सदस्य देशों ने अपने-अपने योगदान को लेकर प्रतिबद्धता जताई थी। हरेक देश ने स्वेच्छा से कार्बन उत्सर्जन में कटौती के अपने लक्ष्य पेश किए थे। ये लक्ष्य न तो कानूनी रूप से बाध्यकारी हैं और न ही इन्हें लागू कराने के लिए कोई व्यवस्था बनी है।

यह समझौता भारत को कैसे प्रभावित करेगा?

भारत जलवायु परिवर्तन के खतरों से प्रभावित होने वाले देशों में से है। साथ ही कार्बन उत्सर्जन में कटौती का असर भी भारत जैसी तेजी से बढ़ती अर्थव्यवस्थाओं पर सबसे अधिक पड़ेगा। साल 2030 तक भारत ने अपनी उत्सर्जन तीव्रता को 2005 के मुकाबले 33-35 फीसदी तक कम करने का लक्ष्य रखा है। इसके लिए कृषि, जल संसाधन, तटीय क्षेत्रों, स्वास्थ्य और आपदा प्रबंधन के मोर्चे पर भारी निवेश की जरूरत है। पेरिस समझौते में भारत विकासशील और विकसित देशों के बीच अंतर स्थापित करने में कामयाब रहा है। यह बड़ी सफलता है।

यह समझौता कब अस्तित्व में आएगा?

पेरिस समझौते के लागू होने के लिए 2020 को आधार वर्ष माना गया है। यूरोपीय संघ ने 5 अक्टूबर, 2016 को पेरिस समझौते को मंजूरी दी। यह समझौता नवंबर, 2016 को औपचारिक रूप से अस्तित्व में आ गया।

क्या भारत ने समझौते की पुष्टि की है?

हाँ, भारत ने 2 अक्टूबर, 2016 को समझौते पर हस्ताक्षर कर दिए। अमेरिका और चीन ने पहले समझौते को स्वीकार नहीं किया था, लेकिन बाद में ये देश भी तैयार हो गए, लेकिन हाल ही में अमेरिकी राष्ट्रपति डोनाल्ड ट्रंप ने पेरिस समझौते से अमेरिका को अलग करने की घोषणा की है।

क्या यह समझौता जलवायु परिवर्तन से निपटने में सक्षम है?

पेरिस समझौता सही दिशा में एक बड़ी पहल है। हालांकि, यह समझौता बहुत सीमित और देरी से उठाया गया कदम है। कार्बन-डाईऑक्साइड का स्तर पूर्व औद्योगिक स्तर की तुलना में 30 प्रतिशत बढ़ चुका है। इस समझौते की एक प्रमुख आलोचना है कि यह जलवायु परिवर्तन के पहले से दिखाई पड़ रहे प्रभावों को नजरअंदाज करते हुए अब भी इसे भविष्य के खतरे के तौर पर देखता है। आलोचकों ने इस मुद्दे को भी उठाया कि यह समझौता कार्बन उत्सर्जन रोकने के उपायों को पर तो जोर देता है लेकिन इन उपायों को प्रभावी ढंग से लागू करने की व्यवस्था सुनिश्चित नहीं करता।

सीओपी की बैठक में बातचीत का मुख्य मुद्दा क्या होता है?

सीओपी में जलवायु परिवर्तन का सामना कर रहे देशों के लिए वित्त जुटाने पर विचार-विमर्श होता है। जलवायु परिवर्तन के हिसाब से ढलने के लिए देशों के पास पर्याप्त फंड उपलब्ध नहीं हो पा रहा है।

- **कैटोवाइस-2018 (कोप-24):-** यूनाइटेड नेशन फ्रेमवर्क कन्वेंशन ऑन क्लाइमेट चेंज (UNFCCC) के कॉन्फ्रेंस ऑफ पार्टीज के 24वें सत्र (Cop-24) का आयोजन पोलैंड के कैटोवाइस में किया गया है। सभी देशों द्वारा IPCC के अंतर्गत नवीनतम उत्सर्जन लेखकांक मार्गदर्शन का उपभोग किया जायेगा। आने वाले विगत वर्षों में इसमें सुधार की संभावनाएँ बढ़ सकती हैं। इसके अंतर्गत कार्बन क्रेडिट के व्यापार की सुविधा के साथ-साथ बिक्री के लिए कार्बन क्रेडिट का निर्माण एवं व्यक्तिगत परियोजनाओं के लक्ष्यों की प्राप्ति पर सहमति जताई गई है।

जलवायु परिवर्तन से संबंधित प्रमुख 'कोप' सम्मेलन

सम्मेलन	स्थान (देश)	वर्ष	उद्देश्य
कोप-1	बर्लिन (जर्मनी)	1995	– बर्लिन प्रारूप की मान्यता।
कोप-2	जिनेवा (स्विट्जरलैंड)	1996	– जिनेवा मंत्रिमंडलीय की अवधारणा।
कोप-3	क्योटो (जापान)	1997	– क्योटो प्रोटोकॉल की उत्पत्ति, विकसित देशों द्वारा हरित गृह गैस उत्सर्जन के प्रावधान।
कोप-4	ब्यूनस आयर्स (अर्जेन्टीना)	1998	– ब्यूनस आयर्स एक्शन प्लान का संगठन।
कोप-5	बॉन (जर्मनी)	1999	– कोप-6 तक विकास की अवधारणा तय हुई।
कोप-6	हेग (नीदरलैंड)	2000	– विकास एवं निर्णय के लिए असफल वार्ता।
कोप-7	मर्राकेश (मोरक्को)	2001	– कोप-6 के अनिर्णित विषय पर निर्णय।
कोप-8	नई दिल्ली	2002	– दिल्ली मंत्रिमंडलीय उद्घोषणा का प्रारूप, विकसित देशों द्वारा विकासशील देशों को तकनीकी एवं आर्थिक मदद्, रूस द्वारा जताई गई आपत्ति।
कोप-9	मिलान (इटली)	2003	– गोद लेने हेतु फंड (Adoption Fund) का लाभ लेने वाले देशों द्वारा सहमति।
कोप-10	ब्यूनस आयर्स (अर्जेन्टीना)	2004	– ब्यूनस आयर्स एक्शन प्लान अपनाया गया।
कोप-11	मॉण्ट्रियल (कनाडा)	2005	– 2012 के बाद क्योटो प्रोटोकॉल की सीमा में वृद्धि। – GHG के उत्सर्जन में कटौती की वार्ता।
कोप-12	नैरोबी (केन्या)	2006	– जलवायु पर्यटन की पहली अवधारणा प्रस्तुत की।
कोप-13	बाली (इंडोनेशिया)	2007	– आगामी सम्मेलन की रूपरेखा, 2012 के बाद होने वाले सम्मेलन का समयानुसार विचार-विमर्श।
कोप-14	पोजनान (पोलैंड)	2008	– अमेरिकी राष्ट्रपति द्वारा होनोलुलु (हवाई) जलवायु परिवर्तन की दूसरे चरण की वार्ता। ऑस्ट्रेलिया द्वारा क्योटो प्रोटोकॉल पर अपनी नीति परिवर्तन।
कोप-15	कोपेन हेगेन (डेनमार्क)	2009	– क्योटो प्रोटोकॉल के उत्तराधिकारी समझौते को 2012 के बाद अंतिम रूप देना।
कोप-16	कानकुन (मैक्सिको)	2010	– ग्रीन क्लाइमेट फंड का प्रारूप, वनों की क्षति हेतु प्रावधान।
कोप-17	डरबन (दक्षिण अफ्रीका)	2011	– क्योटो प्रोटोकॉल के द्वितीय चरण पर सहमति। – भारत द्वारा सतत् पोषणीय विकास के लिए एवं समान पहुँच संबंधी मांग।
कोप-18	दोहा (सऊदी अरब)	2012	– 2020 तक क्योटो प्रोटोकॉल की सीमा में वृद्धि।

सम्मेलन	स्थान (देश)	वर्ष	उद्देश्य
			– COP-3 के तहत भारत एवं ब्राजील द्वारा उत्सर्जन संबंधी कोई पाबंदी नहीं। क्षति संबंधी मामलों में उपर्युक्त भाषण का प्रावधान शामिल किया गया। – ग्रीन क्लाइमेट फंड की उन्नति।
कोप-19	वारसा (पोलैंड)	2013	– वैश्विक तापन वृद्धि को 2015 तक 2°C के नीचे रखने की सीमा तय करना। – REDD के अंतर्गत संकटग्रस्त विकासशील देशों को आर्थिक सहायता।
कोप-20	लीमा (पेरू)	2014	– ग्रीन हाउस गैसों के उत्सर्जन में कमी। – तापन में वृद्धि को 2°C तक सीमित रखना।
कोप-21	पेरिस (फ्रांस)	2015	– कई राष्ट्राध्यक्षों द्वारा विश्वव्यापी कार्यक्रम पर सहमति तथा आगामी 2020 तक लागू करने की नीति।
कोप-22	मर्राकेश (मोरक्को)	2016	– जलवायु परिवर्तन पर नियंत्रण हेतु योजना। – खाद्य एवं कृषि संगठन द्वारा सहायता प्राप्त। – 2000 लोगों की कार्यक्रम में भागीदारी।
कोप-23	बॉन (जर्मनी)	2017	– पर्यावरण संबंधी समस्याओं का निवारण। – कोप-21 समझौते में उन्नति का प्रावधान।
कोप-24	कैटोवाइस (पोलैंड)	2018	– IPCC के नवीनतम उत्सर्जन लेखांकन मार्गदर्शन का उपयोग। – जलवायु संबंधी प्रतिबद्धताओं की तुलना करने एवं उन्हें वैश्विक समुच्चय में जोड़ने हेतु लेखांकन मार्गदर्शन नियम का प्रयोग। – तालानोआ वार्ता के परिणामों पर विचार करने के लिए आमंत्रित किया गया।
कोप-25	मेड्रिड (स्पेन)	2019	– एमिशन गैप रिपोर्ट को जारी किया गया। – ग्लोबल कार्बन प्रोजेक्ट की रिपोर्ट को जारी किया गया। – पेरिस जलवायु समझौते के कार्यान्वयन का वितरण प्रस्तुत किया गया।

अध्याय 13

पर्यावरण से संबंधित प्रमुख अंतर्राष्ट्रीय संगठन
Environment Related International Organization

आई.यू.सी.एन. (International Union For Conservation of Nature)

आई.यू.सी.एन. को वर्ल्ड कन्जर्वेशन यूनियन के नाम से भी जाना जाता है। इसकी स्थापना अक्टूबर, 1948 में हुई। आई.यू.सी.एन. विश्व का सबसे बड़ा वैश्विक पर्यावरण नेटवर्क है तथा इसका मुख्यालय स्विट्जरलैंड के 'ग्लाण्ड' में स्थित है। आई.यू.सी.एन. के अंतर्गत सरकारी और गैर-सरकारी संगठनों दोनों के सदस्य सम्मिलित होते है। इसमें 200 से ज्यादा सरकारी और 1000 से ज्यादा गैर-सरकारी संगठनों के सदस्य हैं। यह एकमात्र ऐसा अंतर्राष्ट्रीय संगठन है जिसे संयुक्त राष्ट्र महासभा का 'पर्यवेक्षक दर्जा' प्राप्त है। इस तरह यह संयुक्त राष्ट्र का सदस्य नहीं है। आईयूसीएन के अंतर्गत जैव-विविधता के संरक्षण के साथ-साथ पौधों एवं जीव-जन्तुओं को लुप्त होने से रोकना है, साथ ही उनके आवास क्षेत्रों को नष्ट होने से बचाना है। आईयूसीएन जैव-विविधता के साथ-साथ अन्य क्षेत्रों में भी कार्य करता है। इस क्षेत्र के अंतर्गत जलवायु परिवर्तन, अजीविका, हरित अर्थव्यवस्था, संपोषणीय ऊर्जा आदि आते हैं।

वर्ल्ड वाइल्ड लाइफ फंड (WWF)

WWF एक अंतर्राष्ट्रीय गैर-सरकारी संगठन है, जिसकी स्थापना वर्ष 1961 में की गई थी। इसका उद्देश्य वन्यजीव संरक्षण के साथ मानव क्रियाकलापों से पर्यावरण को होने वाली क्षति को कम करना है। इस संस्था के अंतर्गत 100 से अधिक देश पर्यावरण के उत्थान के लिए कार्यरत हैं। इसका मुख्यालय मउवर्नी, ग्लाण्ड, स्विट्जरलैंड में स्थित है तथा इसका प्रतीक चिन्ह (Logo) 'काला पांडा' है।

संयुक्त राष्ट्र पर्यावरण कार्यक्रम (UNEP)

UNEP संयुक्त राष्ट्र की एक एजेंसी है जिसकी स्थापना स्टॉकहोम (स्वीडन) में हुए कान्फ्रेंस-1972 के परिणामस्वरूप हुई थी। यह पर्यावरण निरीक्षण और परीक्षण के लिए अंतर-सरकारी तरीकों के समन्वय के लिए जिम्मेदार है। इसका कार्य विभिन्न पर्यावरण कार्यक्रम और संगठनों के प्रबंधन के लिए अंतर्राष्ट्रीय रूपरेखा तैयार करना है। वर्ष 1988 में UNEP तथा विश्व मौसम विज्ञान संगठन को मिलाकर (IPCC) का गठन किया गया। स्टॉकहोम सम्मेलन-1972 के अंतर्गत 5 जून को मनाए जाने वाले विश्व पर्यावरण दिवस कार्यक्रम का निर्णय लिया गया है। पर्यावरण संबंधित कार्यक्रमों को बढ़ावा देने वाले संगठनों हेतु ग्लोबल-500 पुरस्कार (1987) की स्थापना की गई है। इसका मुख्यालय केन्या की राजधानी नैरोबी में स्थित है।

अंतर्राष्ट्रीय उष्णकटिबंधीय काष्ठ संगठन (ITTO)

यह एक अंतर-सरकारी संगठन है जिसकी स्थापना संयुक्त राष्ट्र के अंतर्गत 1986 में हुई है। यह एक अनोखा संगठन है। इसके अंतर्गत एक ओर उष्णकटिबंधीय वन संरक्षण एवं सतत् प्रबंधन, उद्योग एवं व्यापार है, तो दूसरी तरफ पर्यावरणीय समस्याएं भी इसके वृत्त में शामिल हैं और यह उन्हें स्थानीय परिस्थितियों के अनुसार इन नीतियों को लागू करने का प्रयास करता है। यह उष्णकटिबंधीय वन उत्पादों के साथ व्यापार से संबंधित आँकड़ों का एकत्रण एवं विश्लेषण कर उसे प्रचारित करता है। साइट्स और जैव विविधता अभिसमय, ITTO के साथ संयुक्त कार्यक्रम आयोजित करता है जिससे जैव-विविधता संरक्षण और संकटग्रस्त प्रजातियों को अवैध व्यापार से बचाया जा सके। इसके अंतर्गत 35 उत्पादक सदस्य एवं 38 उपभोक्ता सदस्य के साथ कुल 73 सदस्य देश हैं जिसमें से 10 उत्पादक सदस्य देश एशिया-प्रशांत से हैं जिनमें भारत भी शामिल है।

वन्य जीव व्यापार निगरानी नेटवर्क: ट्रैफिक (The Wild Life Trade Monitoring Network: TRAFFIC)

यह एक गैर सरकारी वैश्विक नेटवर्क है जो वन्यजीवों तथा वनस्पतियों के व्यापार पर निगरानी रखता है तथा उचित प्रबंधन पर बल देता है जिससे जैव-विविधता संरक्षण के साथ सतत् विकास के लक्ष्यों को हासिल किया जा सके। साइट्स की स्थापना के लगभग एक साल बाद ट्रैफिक की स्थापना शामिल की गई। यह आईयूसीएन और WWF का संयुक्त कार्यक्रम है। वर्तमान स्थिति में यह दुनिया का सबसे बड़ा वन्य जीव व्यापार निगरानी तंत्र बन गया है। ट्रैफिक ने वन्यजीव संरक्षण से मिलने वाले सतत् कामों में वृद्धि करने के साथ, जैव-विविधता एवं वन्यजीवों के अवैध और गैर-सम्पोषणीय व्यापार को कम करने हेतु '2020 लक्ष्य' रखा है इसका मुख्यालय कैम्ब्रिज (UK) में स्थित है।

साइट्स (CITES)

इसकी स्थापना वॉशिंगटन कन्वेंशन के दौरान की गई थी। अत: इसे वॉशिंगटन कन्वेंशन भी कहा जाता है। साइट्स एक अंतर्राष्ट्रीय समझौता है जो वन्यजीव और वनस्पतियों की लुप्त प्राय प्रजातियों हेतु संरक्षण का प्रावधान करता है। इसके अंतर्गत 103 सदस्य देश शामिल हैं। भारत 1976 में 'साइट्स' में शामिल हुआ था। हाल ही में ओशीनिया महाद्वीप के टोंगा (Tonga) नामक देश को 2016 में 183वें सदस्य के रूप में साइट्स में सम्मिलित किया गया है। साइट्स के अंतर्गत प्रजातियों की तीन परिशिष्ट शामिल हैं-

परिशिष्ट-1

इसके अंतर्गत उन प्रजातियों को शामिल किया गया है जो अस्तित्व में अत्यधिक संकटग्रस्त हैं। विश्व की लगभग 630 जन्तु प्रजातियाँ एवं 301 पादप प्रजातियाँ इस परिशिष्ट के अंतर्गत शामिल हैं। इसके अंतर्गत जीवों का अंतराष्ट्रीय व्यापार पूर्ण रूप से प्रतिबंधित है।

परिशिष्ट-2

इस परिशिष्ट के अंतर्गत उन प्रजातियों का समूह शामिल है जो आवश्यक रूप से संकटापन्न स्थिति में तो नहीं हैं, लेकिन उनको असंगत उपयोग से बचाने हेतु उनके व्यापार को नियंत्रित किया जाता है। इसमें विनियमन के साथ व्यापार की अनुमति प्रदान की जाती है। विश्व की लगभग 4827 जन्तु प्रजातियाँ एवं 29592 पादप प्रजातियाँ इस परिशिष्ट में शामिल की जा चुकी हैं।

परिशिष्ट-3

इस परिशिष्ट के अंतर्गत उन प्रजातियों को शामिल किया जाता है जो किसी एक देश द्वारा संरक्षित होती हैं तथा वह देश किसी साइट्स सहयोगी व्यापार नियंत्रण हेतु मांग रखता है। इसमें भी विनियमन के साथ अंतर्राष्ट्रीय व्यापार की अनुमति दी जाती है। इसके अंतर्गत विश्व की लगभग 135 जन्तु प्रजातियों एवं 12 पादप प्रजातियों को शामिल किया गया है।

यूनाइटेड नेशन फोरम ऑन फॉरेस्ट (UNFF)

इस संगठन का मुख्य उद्देश्य वनों के संरक्षण, प्रबंधन के साथ सतत् विकास को बढ़ावा देना है। इसकी स्थापना 2000 में, संयुक्त राष्ट्र की आर्थिक-सामाजिक परिषद् (ECOSOC) के द्वारा एक सहायक निकाय के रूप में की गयी है। यह एक सार्वभौमिक सदस्यता वाला मंच है जिसमें संयुक्त राष्ट्र के सभी सदस्य सम्मिलित हैं।

इसके अंतर्गत कुछ महत्त्वपूर्ण उद्देश्यों को दर्शाया गया है, जो निम्नवत् हैं:-

- सतत् वन प्रबंधन हेतु राष्ट्रीय एवं क्षेत्रीय सहयोग प्राप्त करना।
- सतत् विकास पर जोहांसबर्ग घोषणापत्र और सतत् विकास लक्ष्य की प्राप्ति में वनों की भागीदारी को बढ़ावा देना।
- वन संबंधित नीतियों एवं कार्यक्रमों के समन्वय को बढ़ावा देना।
- वन संरक्षण मुद्दों को सरकारी एवं अंतर्राष्ट्रीय स्तर पर बढ़ावा देना तथा उसमें होने वाली वृद्धि को प्रोत्साहित करना।
- आरंभ में UNFF का सम्मेलन वार्षिक तौर पर छोटा था तथा 2001 में पहला सम्मेलन एवं 2007 में सातवाँ सम्मेलन हुआ। इसके बाद UNFF का सम्मेलन आयोजित किया गया है जिसके अंतर्गत वन संरक्षण एवं प्रबंधन की रूपरेखा को निरूपित किया गया है। इसके अंतर्गत राष्ट्रों ने सतत् वन प्रबंधन से संबंधित अंतर्राष्ट्रीय समझौते पर सहमति जताई है तथा वनों के निजीकरण को रोककर सतत् सम्पोषणीय आजीविका को सुनिश्चित किया है जो कि वन आश्रित समुदाय की गरीबी को कम करने में सहायक है।

वर्ल्ड वॉच इंस्टीट्यूट (WWI)

यह एक स्वतंत्र शोध संस्था है जिसकी स्थापना लेस्टर आर. ब्राउन द्वारा 1974 में की गई। यह न केवल पर्यावरण संबंधित समस्याओं की ओर लोगों का ध्यान आकर्षित करती है, बल्कि उसका व्यावहारिक निदान भी करती है जिसके अंतर्गत सतत् विकास के लक्ष्यों को साकार करने हेतु हर सम्भव प्रयास शामिल है।

सतत् विकास के लक्ष्यों को प्राप्त करने में इस संस्था ने निम्नलिखित कार्यक्रमों को जारी किया है-

जलवायु और ऊर्जा

ऊर्जा की बढ़ती कीमतों तथा जलवायु परिवर्तन के प्रति जल चिंताओं ने परंपरागत ऊर्जा स्रोतों के परिवर्तन की स्थिति पैदा कर दी। इस संस्था के अंतर्गत कम कार्बन उत्सर्जन हेतु कई नवीकरणीय ऊर्जा एजेंसियों का संचालन किया जा रहा है।

खाद्य और कृषि

वर्ल्ड वॉच इंस्टीट्यूट द्वारा खाद्य और कृषि कार्यक्रम को प्रोत्साहन दिया गया है जो किसानों और उपभोक्ताओं के साथ-साथ पारितंत्रों के संपोषणीय विकास में सहायक है तथा बढ़ती जलवायु से जनता के प्रति उत्पन्न समस्याओं से निपटने में सहायक है।

पर्यावरण एवं समाज

वर्ल्ड वॉच संस्था के अनुसार, 'पृथ्वी की जलवायु और वातावरण के दुष्प्रभाव का मुख्य कारण हमारे समाज एवं संस्कृति की पर्यावरण के प्रति अवैज्ञानिक सोच की अवधारणा है। अत: इस संस्था के माध्यम से पर्यावरण संरक्षण से संबंधित समस्त संस्थाओं को सक्षम बनाने तथा सतत् विकास के लक्ष्यों को शामिल करने हेतु प्रोत्साहन दिया जाता है।

वर्ल्ड रिसोर्सेज इंस्टीट्यूट

यह एक स्वतंत्र वैश्विक गैर-सरकारी संस्था है जिसकी स्थापना वर्ष 1982 में की गई। यह एक ऐसी संस्था है जिसका उद्देश्य मानवीय जीवन को सुरक्षित करने के साथ उनमें बदलते पर्यावरण के धारणीय विकास को बढ़ावा देना है। यह संस्था उन आंकड़ों के संग्रहण, शोध तथा उन रणनीतियों की माप करती है जो लोगों द्वारा एक स्वच्छ पर्यावरण के निर्माण में सहायक है।

इसके अंतर्गत ऐसे 6 महत्त्वपूर्ण लक्ष्यों को निर्धारित किया गया है जो सतत् विकास के लक्ष्यों को हासिल करने में सहायक हैं।

जलवायु (CLIMATE)

बढ़ती ग्रीन हाउस गैस के उत्सर्जन से आज विश्व संकट के जाल में फँसता जा रहा है। ग्रीन हाउस गैसों के उत्सर्जन से उत्पन्न संकटों से जीव-समुदाय एवं पेड़ पौधों (पारितंत्रों) की रक्षा करने के साथ-साथ निम्न कार्बन अर्थव्यवस्था की ओर अग्रसर करना इसका लक्ष्य है।

ऊर्जा (Energy)

एक सतत् समाज के अंतर्गत आर्थिक विकास को बढ़ावा देने के लिए स्वच्छ वहनीय ऊर्जा की आवश्यकता होती है।

भोजन (Food)

पर्यावरण पर नकारात्मक प्रभाव डालते हुए वर्ष 2050 तक 3.7 अरब जनसंख्या के लिए भोजन की उपलब्धता को सुनिश्चित करना।

United Nations FORUM ON FORESTS

वन (Forest)

जैव-विविधता और खाद्य सुरक्षा में वृद्धि तथा जलवायु परिवर्तन के प्रभाव में कमी, गरीबी में कमी के साथ-साथ वनों के क्षरण को कम करना तथा वनों की उत्पादकता में वृद्धि करना।

जल (Water)

वैश्विक जल जोखिम को कम रखते हुए जल संसाधनों की सुरक्षा को बढ़ावा देना।

संपोषणीय शहर (Sustainable Cities)

शहरों में जीवन की अनुकूल परिस्थितियों के समन्वयन हेतु, पर्यावरणीय सामाजिक और आर्थिक रूप से सतत् शहरीकरण को बढ़ावा देना।

बेसल कन्वेंशन (Basel Convention)

बेसल संधि एक अंतर्राष्ट्रीय संधि है जिसे 22 मार्च, 1989 में स्वीकृति प्रदान की गई तथा यह मई, 1992 से प्रभाव में आई। बेसल कन्वेंशन के अंतर्गत हानिकारक ठोस अपशिष्टों, पदार्थों के सीमापार स्थानांतरण के नियंत्रण तथा अपशिष्ट पदार्थों के समाधान हेतु प्रावधान हैं। यह संधि विकसित देशों से विकासशील देशों व कम विकसित देशों के मध्य हानिकारक अपशिष्टों के स्थानांतरण पर प्रतिबंध लगाती है। भारत द्वारा इसे 15 मार्च, 1980 को हस्ताक्षर करके 22 सितंबर, 1992 को लागू किया गया।

लक्ष्य:

बेसल कंवेशन पर 186 देशों ने भागीदारी जताई है, लेकिन अमेरिका जैसे देश ने इस पर हस्ताक्षर तो कर दिए हैं किंतु इसे लागू नहीं किया है। बेसल संधि के तहत कुछ महत्त्वपूर्ण लक्ष्य प्राप्ति का प्रावधान है:-

- अपशिष्टों के स्थानान्तरण हेतु एक नियामक प्रणाली अपनाई जानी चाहिए।
- अपशिष्ट निपटान प्रबंधन को बढ़ावा देना तथा खतरनाक अपशिष्टों के स्थानांतरण को रोकना।
- पर्यावरण संरक्षण को बढ़ावा देना।

कुछ हानिकारक अपशिष्ट

- खान अपशिष्ट।
- कृषि कचरा।
- ई. कचरा, जहाज।
- औद्योगिक कचरा आदि।

रॉटरडम कन्वेंशन

इस संधि को 10 सितंबर, 1998 को अपनाया गया था तथा 24 फरवरी, 2004 से लागू किया गया। वर्ष 2017 तक 157 सदस्य इस कन्वेंशन में सम्मिलित हैं। यह संधि पूर्व सूचित सहमति (PIC) प्रक्रिया के क्रियान्वयन के लिए कानूनी रूप से बाध्यकारी दायित्वों को स्थापित करती है। इस प्रक्रिया को UNEP तथा FAO द्वारा शुरू किया गया तथा वर्ष 2006 में स्थापित किया गया।

इस कन्वेंशन के कुछ महत्त्वपूर्ण उद्देश्य हैं:-

- पर्यावरण को नुकसान पहुँचाने तथा मानव स्वास्थ्य को प्रभावित करने वाले हानिकारक रसायनों पर प्रतिबंध स्थापित करना।
- खतरनाक रसायनों के आयात-निर्यात पर एक राष्ट्रीय प्रक्रिया को अपनाना।

शहरी पर्यावरण प्रबंधन पर ब्रिक्स देशों का कार्यसमूह

ब्रिक्स देशों के पर्यावरण मंत्रियों ने महानगरों में पर्यावरण से जुड़ी समस्याओं के समाधान के लिए एकजुट होकर काम करने पर सहमति व्यक्त की है। ब्राजील के साओ पाउलो में आयोजित ब्रिक्स देशों के पर्यावरण मंत्रियों के 5वें सम्मेलन के दौरान इनके बारे में चर्चा की गई। यह बैठक पर्यावरण के मुद्दे पर ब्रिक्स संयुक्त कार्य समूह की दो दिवसीय बैठक के बाद आयोजित की गई।

राष्ट्र के लिए निर्धारित अपने योगदान (एनडीसी) के लक्ष्य तक पहुंचने में भारत द्वारा किए गए ऐतिहासिक कार्य के बारे में चर्चा करते हुए, केन्द्रीय पर्यावरण मंत्री श्री प्रकाश जावड़ेकर ने कहा कि प्रधानमंत्री श्री नरेन्द्र मोदी के सशक्त नेतृत्व में भारत ने राष्ट्र के निर्धारित योगदान के संदर्भ में बढ़-चढ़कर काम किया है। पर्यावरण मंत्री ने कहा, 'हमने एनर्जी इंटेंसिटी में 25 प्रतिशत कमी की है और 78 GW अक्षय ऊर्जा उत्पादन करने में सफलता प्राप्त की है। साथ ही, वनाच्छादित क्षेत्र में लगभग 15,000 वर्ग किलोमीटर वृद्धि हुई है और वन्य क्षेत्र के बाहर वृक्षों की संख्या में तेजी से वृद्धि हो रही है'।

ब्रिक्स देशों की प्रमुख भूमिका पर जोर देते हुए, श्री जावड़ेकर ने कहा कि आपसी सहयोग और विकास हेतु सभी 5 देशों के लिए ब्रिक्स एक सबसे अच्छा मंच है। पर्यावरण मंत्री ने कहा, "सभी पांच देशों का उत्थान हो रहा है और उनके पास साझा करने के लिए अनेक अनुभव हैं तथा निश्चित रूप से इन अनुभवों से जलवायु पर केंद्रित हमारे प्रयासों और पर्यावरण संरक्षण के संदर्भ में सभी देशों को मदद मिलेगी"।

श्री प्रकाश जावड़ेकर ने ब्रिक्स देशों की पहलों की सराहना की और ब्रिक्स सहयोग के लिए भारत के समर्थन की फिर से पुष्टि की। पर्यावरण मंत्री ने स्वच्छ भारत अभियान, कचरा प्रबंधन नियमावली, पेरिस समझौते के तहत राष्ट्र के लिए निर्धारित योगदान, राष्ट्रीय स्वच्छ वायु कार्यक्रम, विद्युत, वाहन, समुद्री कचरे, शहरी वनरोपण योजना, संसाधन दक्षता नीति सृजन के साथ-साथ अन्य प्रमुख पहलों के बारे में चर्चा की।

ब्रिक्स देशों ने संयुक्त राष्ट्र के कॉम्बैट डेजर्टीफिकेशन सम्मेलन के 14वें अधिवेशन के दौरान भारतीय नेतृत्व की सराहना की। श्री जावड़ेकर ने ब्रिक्स मंत्रियों के प्रतिनिधिमंडल को 2 से 13 सितंबर, 2019 के दौरान सीओपी-14 में शामिल होने और कॉम्बैट डेजर्टीफिकेशन तथा लैंड डिग्रेडेशन के प्रयासों में योगदान करने के लिए आमंत्रित किया।

BASEL CONVENTION
the world environmental agreement on wastes

❑❑❑❑❑

अध्याय
14

सतत् विकास
Sustainable Development

सतत् विकास का आशय आर्थिक विकास की एक ऐसी संकल्पना से है जिसके अंतर्गत संसाधनों का उपयोग विकास के लिए इस प्रकार से किया जाए कि प्राकृतिक संसाधनों, पर्यावरण का पूर्ण संरक्षण तथा भविष्य में आने वाली पीढ़ियों के हितों से समझौता किए बिना वर्तमान मानव जाति की आवश्यकता को पूरा किया जा सके।

"हमें विज्ञान और प्रौद्योगिकी के अनुप्रयोग के माध्यम से पानी, ऊर्जा, निवास स्थान, कचरा प्रबंधन एवं पर्यावरण के क्षेत्रों में भी पृथ्वी द्वारा झेली जाने वाली समस्याओं को दूर करने के लिए कार्य करना होगा।"

डॉ.ए.पी.जे. अब्दुल कलाम

'एजेंडा 2030 के पीछे की हमारी सोच जितनी ऊँची है हमारे लक्ष्य भी उतने ही समग्र हैं। इनमें उन समस्याओं को प्राथमिकता दी गई है जो पिछले कई दशकों से अनसुलझी हैं और इन लक्ष्यों से हमारे जीवन को निर्धारित करने वाले सामाजिक, आर्थिक और पर्यावरणीय पहलुओं से हमारी विकसित होती समझ की झलक मिलती है। मानवता के 1/6 हिस्से के सतत् विकास का विश्व और हमारी सुंदर पृथ्वी के लिए गहरा असर होगा'।

भारतीय प्रधानमंत्री नरेन्द्र मोदी

'2015 में अनुमोदित एजेंडा 2030 और उसके 17 सतत् विकास लक्ष्य इन चुनौतियों एवं इसके अंतर्संबंधों के समाधान के लिए संपूर्ण एवं सामंजस्यपूर्ण फ्रेमवर्क प्रदान करते हैं। इसके अंतर्गत सदस्य राष्ट्रों को सतत् विकास के सामाजिक, आर्थिक और पर्यावरणीय पहलुओं का समाधान संतुलित ढंग से करना होगा, इन पर अमल करते हुए समावेशन और एकीकरण तथा किसी को पीछे छूटने न देने के सिद्धांतों का पालन अनिवार्य है'।

संयुक्त राष्ट्र महासचिव एंटोनियो गुटेरेस

'पर्यावरण के ह्रास को रोकने तथा भू-मंडलीय तापन की समस्या के समाधान के लिए टिकाऊ विकास अनिवार्य है।' वर्ष 1992 के पृथ्वी शिखर सम्मेलन में सतत् विकास और उससे होने वाले सामाजिक एवं आर्थिक लाभों पर लम्बी परिचर्चा हुई। पृथ्वी शिखर सम्मेलन के कुछ प्रमुख बिन्दुओं का संक्षिप्त वर्णन निम्नलिखित है-

सतत् विकास की प्रमुख विशेषताएँ

–विकास की ऐसी क्षमता, जिससे पारितंत्र उत्पादन देता रहे तथा भविष्य के लिए स्वास्थ्य एवं टिकाऊ अवस्था में बना रहे।

–ऐसा विकास, जिससे मानव जीवन सुखी बना रहे तथा जीवन के अनुकूल परिस्थितियाँ बनी रहें।

प्राकृतिक संसाधनों का एक ऐसा सदुपयोग जिससे भविष्य की पीढ़ियों के लिए भी संसाधन उपलब्ध रहें और सबका जीवन सुखमय बना रहे। सतत् विकास वर्तमान की परम आवश्यकता है ताकि परितंत्र की उत्पादकता बनायी रखी जा सके। वास्तविकता यह है कि मानक जीवन का आधार पारितंत्र एवं पर्यावरण ही है जिसके अंतर्गत तीन प्रमुख स्तम्भ हैं:-

- सामाजिक विकास
- आर्थिक विकास
- पर्यावरण संरक्षण

मनुष्य एक सामाजिक प्राणी है। वह दूसरों के व्यवहार को प्रभावित करता है और उसके व्यवहार से प्रभावित होता है। इस परस्पर व्यवहार के व्यवस्थापन पर ही सामाजिक संबंध निर्भर करते हैं। इस परस्पर व्यवहार में रुचियों, अभिव्यक्तियों, आदतों आदि का बड़ा महत्त्व है। सामाजिक विकास में इन सभी का विकास सम्मिलित है।

देशों, क्षेत्रों या व्यक्तियों की आर्थिक समृद्धि की वृद्धि को आर्थिक विकास कहते हैं। नीति निर्माण की दृष्टि से आर्थिक विकास उन सभी प्रयत्नों को कहते हैं जो किसी जन समुदाय की आर्थिक स्थिति व जीवन स्तर के सुधार के लिए अपनाये जाते हैं। पर्यावरण

और विकास एक-दूसरे से परस्पर जुड़े हुए हैं। एक व्यक्ति पर्यावरण पर विचार किए बिना विकास के बारे में सोच भी नहीं सकता, स्वास्थ्य को ध्यान में रखते हुए, अगर पर्यावरण को नजरअंदाज कर दिया जाए तो अंत में विकास भी उससे प्रभावित होगा।

सतत् विकास की संकल्पना का उदय

सतत् विकास की संकल्पना की उत्पत्ति सन् 1962 में वैज्ञानिक आर. कारसन द्वारा लिखित पुस्तक 'द साइलेंट स्प्रिंग' से हुई। 1962 में गैर लाभकारी संस्था 'फ्रेण्ड्स ऑफ द अर्थ' बनाई गई, जिसे पर्यावरण की पतन से सुरक्षा और निर्णय प्रक्रिया में नागरिकों के भाग लेने हेतु तथा सशक्त बनाने हेतु समर्पित किया गया। वर्ष 1971 में बढ़ती पर्यावरण गतिविधियों के कारण आर्थिक सहयोग तथा विकास के लिए सम्पन्न 'प्रदूषण खर्चा दें' सिद्धांत का प्रतिपादन हुआ तथा यह निर्णय लिया गया कि प्रदूषण फैलाने वाले राष्ट्रों को उसकी कीमत अदा करनी होगी। वर्ष 1972 में स्टॉक होम में मानव पर्यावरण संयुक्त राष्ट्र सम्मेलन का आयोजन हुआ तथा निष्कर्ष दिया गया कि पर्यावरण, विकास से संबंधित एक अति महत्त्वपूर्ण मुद्दा है तथा संयुक्त राष्ट्र पर्यावरण विकास कार्यक्रम की स्थापना की गई।

वर्ष 1992 के पर्यावरण व विकास के संयुक्त राष्ट्र सम्मेलन (रियो शिखर सम्मेलन) में इस आवश्यकता के साथ यह संकल्पना की गई कि पर्यावरण के विकास को पूर्ण रूप से संरक्षण प्रदान किया जाए तथा वर्ष 2000 तक सतत् विकास की अवधारणा सभी अंतर्राष्ट्रीय संगठनों के निर्देशित सिद्धांत के रूप में स्थापित हो चुकी थी।

सतत् विकास के अंतर्गत मूल तत्व

पुनर्नवीकरणीय (Renewability)

सतत् विकास की इस अवधारणा का तात्पर्य उन नवीकरणीय ऊर्जा संसाधनों से है जिनका पहले ही अतिदोहन हो चुका है तथा उनके उपयोग को पूर्णरूप से सुरक्षित कर तभी प्रयोग में लाने की अनुमति हो जब उसकी मात्रा में पूर्ण रूप से वृद्धि हो चुकी हो।

अनुकूलन (Adaptability)

अनुकूलन में एक सम्पोषणीय से गतिशील पर्यावरण की क्षमता होती है। उसमें वर्तमान प्राकृतिक संसाधनों को बिना हानि पहुँचाए ही दबावपूर्ण परिस्थितियों का तेजी से सामना करने की उच्च प्रतिरोधक क्षमता होती है।

अन्तर्निर्भरता (Interdependence)

एक सम्पोषणीय समाज आत्मनिर्भर समाज होता है। अत: यह किसी राष्ट्र के समाज को क्षति पहुँचाकर संसाधनों के आयात अथवा निर्यात को प्रतिबंधित करता है।

प्रतिस्थापन (Substitution)

इसके अंतर्गत गैर-नवीकरणीय संसाधनों को प्रतिस्थापित करके नवीकरणीय संसाधनों को प्रयोग में लाया जा सकता है, जो सतत् विकास में सहायक सिद्ध होंगे।

संस्थागत प्रतिवद्धता (Institutional Commitment)

इसके अंतर्गत संवैधानिक प्रावधान, विधिक संरचना तथा राजनैतिक स्तर पर सम्पोषणीय विकास की आवश्यकताओं को समझने की क्षमता शामिल होती है। समाज के सभी वर्गों के लिए सम्पोषणीय विकास हेतु प्रशिक्षण देना महत्त्वपूर्ण है।

सतत् विकास की आवश्यक पारिस्थितिकी

सतत् विकास के अंतर्गत आने वाली आवश्यक दशाएं निम्नवत् हैं:-

- जनसंख्या स्तर को पर्यावरण की धारण क्षमता के स्तर तक सीमित करना।
- नवीकरणीय संसाधनों का उत्खनन धारणीय आधार पर हो ताकि पुनर्सृजन की दर, निष्कर्षण की दर से अधिक रहे।
- गैर-नवीकरणीय संसाधनों की अपक्षय दर नवीकृत प्रतिस्थापनों से अधिक नहीं होनी चाहिए।
- प्रदूषण से उत्पन्न समस्याओं का समाधान तथा अक्षमताओं में सुधार करके।
- सतत् समाज की प्राप्ति हेतु स्थानीय एवं वैश्विक दोनों स्तरों पर नीतिगत एवं संस्थागत दोनों प्रकार के परिवर्तन करने की आवश्यकता है, साथ ही दृष्टिकोण को वैश्विक सोच एवं कार्यान्वयन बनाने की आवश्यकता है।

प्रौद्योगिकी (Technology)

यह स्पष्ट है कि उन्नत प्रौद्योगिकी ने समस्त विश्व में पर्यावरण के ह्रास एवं नष्ट किए जाने में बहुत बड़ी भूमिका निभाई है। प्रौद्योगिकी समाज के लिए वरदान तो है, परन्तु इसके लिए बहुत भारी कीमत चुकानी पड़ी है। मानव के सामने अब यह चुनौती है कि वह अपनी दिशा इस प्रकार बदले कि एक तो बेहतर ऊर्जा कुशल बने, कम जोखिम हो, अधिक स्वच्छ भी हो तथा मानव हित में हो। जैसा कि हम पहले भी देख चुके हैं सतत् विकास में जो नई उपभोक्ता रणनीतियाँ रखी गई हैं वे हैं- संरक्षण अपशिष्ट सामग्री का पुनर्चक्रण, पुन: उपयोग तथा जहाँ भी सम्भव हो नवीकरणीय संसाधनों का उपयोग किया जाना।

प्रौद्योगिकी का यह लाभ भी है कि इसमें रोजगार बढ़ता है तथा लागत भी कम लगती है, यह लघु स्तर पर भी प्रभावकारी होती है और पर्यावरण के साथ सुसंगत होती है क्योंकि इसमें कम ऊर्जा चाहिए तथा प्रदूषण भी कम से कम होता है। यह उन विकासशील देशों में खास तौर से उपयोगी होती है जिनमें न तो पूँजी होती है और न ही उस प्रकार की उन्नत प्रौद्योगिकी के लिए ऊर्जा संसाधन होते हैं जो विकसित देश की परिस्थितियों के लिए अधिक उपयुक्त होती है। भारत जैसे देश में जहाँ विशाल मानव शक्ति उपलब्ध है उन्हें श्रम प्रौद्योगिकी तलाशनी चाहिए न कि पूँजी गहन प्रौद्योगिकी।

जनसंख्या

सतत् विकास की अवधारणा में जनसंख्या का मुख्य योगदान रहा है जहाँ एक तरफ विकसित देशों की बात की जाए, जनसंख्या वृद्धि 2 प्रतिशत रही है। लेकिन उपभोग स्तर पर यहाँ प्रति व्यक्ति ऊर्जा खपत स्तर काफी अधिक होता है, वहीं दूसरी तरफ विकासशील देशों की स्थिति की बात करें तो यहाँ प्रतिव्यक्ति उपभोग बहुत कम होता है, परन्तु जनसंख्या आधार बहुत अधिक होने कारण प्रौद्योगिकी का स्तर प्राय: निम्न होता है जिसके कारण पर्यावरण पर अधिक दबाव उत्पन्न होने लगता है।

महत्त्वपूर्ण तथ्य

- सतत् विकास ऐसा विकास है जो आने वाली पीढ़ियों के हितों से समझौता किए बिना वर्तमान पीढ़ी की आवश्यकताओं को पूरा करता है।
- सतत् विकास की संकल्पना 1987 में 'ब्रंटलैंड रिपोर्ट' के साथ प्रभावी हुई।
- सतत् विकास के मूलभूत विचार नवीकरणीयता, प्रतिस्थापन, अंतर्निर्भरता, संस्थागत प्रतिबद्धता और अनुकूलनशीलता हैं।
- सतत् विकास के चार मानक हैं- लैंगिक असमानता, अंतर पीढ़ीगत समता, अंतरापीढ़ीगत समता और मूलभूत विचार।
- 'द फ्यूचर वी वांट' रियो - 20 सम्मेलन से संबंधित दस्तावेज है। इसके अंतर्गत सतत् विकास लक्ष्यों (SDG) को MDG की समाप्ति के साथ लागू करने का प्रावधान है।
- 'एजेंडा-21' प्रथम पृथ्वी शिखर सम्मेलन (1992) में 21वीं शताब्दी में सतत् विकास की प्राप्ति के लिए बनाई गई कार्ययोजना है।
- सतत् पोषणीय विकास शब्दावली का प्रयोग सबसे पहले 1970 में पर्यावरण तथा विकास पर कोकोयोक घोषणा के समय किया गया था।
- रियो- 10 (जोहांसबर्ग सम्मेलन), को 'पृथ्वी सम्मेलन- 2002' के नाम से भी जाना जाता है। इसे 'सतत् विकास पर विश्व सम्मेलन' का भी नाम दिया गया है।
- न्यूयॉर्क में आयोजित (2015) 70वें संयुक्त राष्ट्र शिखर सम्मेलन में MDG के स्थान पर SDG, 2030 को लागू किया गया।

संरक्षण

सतत् विकास की परिकल्पना हेतु मानव आवश्यकताओं के पूर्ति के लिए पृथ्वी के समस्त संसाधनों का संरक्षण एवं बढ़ावा अनिवार्य है। नवीकरणीय संसाधनों का आधिकारिक इस्तेमाल पर्यावरण के संरक्षण में सहायता कर सकता है। विकास लक्ष्यों की प्राप्ति के अतिरिक्त अन्य जीवों तथा हमारी भावी पीढ़ियों के लिए प्राकृतिक संसाधनों का संरक्षण करना अति आवश्यक है।

पर्यावरण अनुकूलन प्रौद्योगिकी एवं सतत् विकास

प्रौद्योगिकी की पर्यावरण संरक्षण में एक बहुत ही महत्त्वपूर्ण भूमिका होती है। इसके बिना सतत् विकास की उपलब्धियाँ कभी भी हासिल नहीं हो सकती। अत: सतत् विकास की प्राप्ति के लिए पर्यावरण अनुकूलन (Environmental Adaption) प्रौद्योगिकी पर निवेश करने की आवश्यकता है। पर्यावरण अनुकूलन प्रौद्योगिकी ने देश के हर क्षेत्र कृषि, उद्योग तथा ऊर्जा क्षेत्रों में क्रांतिकारी परिवर्तन लाए हैं जो कि प्राकृतिक नियमों के अनुकूल हैं तथा पारिस्थितिकी को क्षति पहुँचाए बिना उत्पादकता की वृद्धि में सहायक हैं। इसके लिए ऊर्जा

को गैर-परम्परागत स्रोतों से प्रोत्साहित किया जा रहा है।

भारत में गैर-परम्परागत ऊर्जा के दो तरह के स्रोत उपस्थित हैं-

- पहला, वे ऊर्जा के स्रोत जिनके अंतर्गत सौर ऊर्जा, पवन ऊर्जा, लघु पनबिजली, बायोगैस इत्यादि सम्मिलित हैं।
- दूसरा, वे ऊर्जा के स्रोत जिनके अंतर्गत भू-तापीय ऊर्जा, हाइड्रोजन ऊर्जा, ज्वारीय ऊर्जा, तरंग ऊर्जा आदि सम्मिलित हैं।

इन ऊर्जाओं के संसाधन नवीकरणीय तथा प्रदूषण रहित हैं जो कि सतत् विकास के लक्ष्य को हासिल करने में कहीं न कहीं बहुत ही महत्त्वपूर्ण भूमिका निभाते हैं।

सतत् कृषि

सतत् कृषि के अंतर्गत फसल उत्पादन के साथ पशुपालन का भी समन्वय है जो एक मिश्रित कृषि प्रणाली है। यह पर्यावरणीय सिद्धांतों के हित में की जाती है ताकि पर्यावरणीय क्षति को निम्न स्तर पर रखा जाए। यह एक लम्बी प्रक्रिया होती है तथा मानव आवश्यकताओं के अनुकूल होती है। आवश्यकता के अनुसार ऊर्जा दक्षता का अधिकतम के साथ ही साथ निम्नतम उपयोग करेगी तथा कृषि कार्यों को आर्थिक रूप से निर्भर बनाएगी।

सतत् कृषि से होने वाले लाभ

सतत् कृषि पर्यावरण के अनुकूलनतः की जाती है, अतः इससे होने वाले लाभ निम्नवत् हैं:-

- मिट्टी की उर्वरा को बनाए रखने में सहायक होती है तथा उत्पादन शक्ति में वृद्धि होती है।
- चूँकि यह एक प्रकार की जैविक कृषि के भाँति है। अतः इसके पोषक तत्वों में संतुलन सदैव बना रहता है जिसका प्रयोग फसलों में दीर्घकालीन तक सहायक है।
- पर्यावरण के अनुकूल होने के कारण वर्षण की मात्रा में वृद्धि होती है जो भूमिगत जल स्तर को बनाए रखने में सहायक है। मृदा की जैव विविधता का संरक्षण के साथ-साथ प्रदूषण के हानिकारक प्रभावों को निम्न करने में सहायक है।

भारत एवं सतत् विकास

भारत सतत् विकास की अवधारणा पर निरंतर कार्यरत है। विशाल जनसंख्या के साथ-साथ मानवीय आवश्यकताओं के हित का निर्धारण अति महत्त्वपूर्ण कार्य है।

मैकेन्जी की एक रिपोर्ट के अनुसार, भारत शहरीकरण दावानल की दहलीज पर खड़ा है। एक अनुमानन भारतीय शहरों की कुल आबादी लगभग 340 मिलियन 2008 में थी तथा 590 मिलियन 2030 तक हो सकती है। उस स्थिति में भारत के सबसे बड़े शहर बहुत से बड़े देशों से अधिक बड़े होंगे। बढ़ती आबादी के साथ-साथ प्रत्येक मुख्य सेवा की मांग में लगभग पाँच-सात गुना वृद्धि देखी जाएगी। गरीबी उन्मूलन, खाद्य और ऊर्जा सुरक्षा, शहरी अपशिष्ट प्रबंधन और पानी की कमी मौजूदा चुनौतियों के साथ मिलकर निर्मित संसाधनों पर अधिक दबाव बनाएगी, साथ ही ऊर्जा की जरूरतों में अधिक वृद्धि होगी। लेकिन इन चुनौतियों के समाधान भी मौजूद हैं। अन्य देशों की तुलना में भारतीय आबादी युवा है। अतः मानव श्रम योगदान का लाभ हो सकता है। 2030 को मद्देनजर रखते हुए, इस बात पर ध्यान देना चाहिए कि जिन संसाधनों का आज मानव हित हेतु उपयोग किया जा रहा है उसे कम से कम उपयोग में लाया जाए तथा उसके स्थान पर नए नवीकरणीय संसाधनों का प्रयोग करें अर्थात् हम जीवाश्म ईंधन पर आधारित ऊर्जा प्रणालियों और कार्बन लॉक इन पर अत्यधिक निर्भर होने से बचें जिसका सामना आज बहुत से देश कर रहे हैं। एक सजग नीतिगत अवधारणा के साथ नए विकास संबंधी आवश्यकताओं एवं पर्यावरणीय मुद्दों को ध्यान में रखा जाए ताकि चुनौतियों को अवसरों में बदला जा सके।

भारत द्वारा सतत् विकास पर कार्य आजादी के बाद से ही जारी है। वर्तमान में भारत द्वारा सतत् विकास के प्रयास में निम्नलिखित कदम उठाए गए हैं-

जैव ईंधन पर राष्ट्रीय नीति-2018

केन्द्रीय मंत्रिमंडल द्वारा जैव ईंधन के उत्पादन एवं उपयोग को प्रोत्साहित करने के लिए जैव ईंधन राष्ट्रीय नीति- 2018 का शुभारंभ किया गया है। यह कार्बनिक पदार्थों से उत्पादित किया जाने वाला हाइड्रोकार्बन ईंधन है जो अत्यधिक कम समय में तैयार किया जाता है। जीवाश्म ईंधन को बनने में अत्यधिक समय लगता है। अतः यह जीवाश्म ईंधन से भिन्न है। यह ऊर्जा का नवीकरणीय रूप होने के साथ-साथ जीवाश्म ईंधन की तुलना में कम कार्बन-डाईऑक्साइड गैस का उत्सर्जन करता है।

- किसानों का उचित मूल्य सुनिश्चित करने तथा पेट्रोल के साथ इथेनॉल मिश्रित करने हेतु इथेनॉल के उत्पादन के लिए अधिशेष खाद्यान्न के उपयोग की अनुमति।
- गैर-खाद्य तिलहनों, खाना पकाने के लिए तेल, कम अवधि की फसलों से जैव-डीजल उत्पादन के लिए आपूर्ति शृंखला तंत्र की स्थापना करना।
- नीतिगत दस्तावेज में जैव-ईंधन के संदर्भ में सभी संबंधी मंत्रालय की भूमिकाओं और उत्तरदायित्वों को अधिगृहीत करने के प्रयासों को समन्वित करना।

प्रधानमंत्री Ji-Van योजना

प्रधानमंत्री 'जैव ईंधन वातावरण अनुकूल फसल अवशेष निवारण' योजना पेट्रोलियम और प्राकृतिक गैस मंत्रालय की पहल है। इसके अंतर्गत लिग्नोसेलुलोसिक बायोमास और अन्य नवीकरणीय फीडस्टॉक का उपयोग करने वाली एकीकृत जैव एथेनॉल परियोजना को वित्तीय सहायता प्रदान की जाएगी। बारह वाणिज्यिक पैमाने और दस प्रदर्शन पैमाने की दूसरी पीढ़ी की एथेनॉल परियोजनाओं को दो चरणों में अगले छह वर्षों के दौरान व्यवहार्यता अंतराल वित्तपोषण सहायता प्रदान की जाएगी।

विशेषताएँ:-

इस नीति के अंतर्गत विभिन्न पीढ़ी (पहली, दूसरी, तीसरी तथा चौथी) के जैव ईंधन का उचित वित्तीय और राजकोषीय प्रोत्साहनों के विस्तार को संभव बनाने हेतु वर्गीकरण किया गया है। इसके अंतर्गत दो श्रेणियों को शामिल किया गया है।

- आधारभूत जैव ईंधन, जिसके अंतर्गत पहली पीढ़ी का बायो एथेनॉल और बायो डीजल को रखा गया है।
- विकसित जैव ईंधन, जिसके अंतर्गत द्वितीय पीढ़ी का एथेनॉल, नगरपालिका ठोस अपशिष्ट से लेकर ड्रॉप-इन ईंधन, तीसरी पीढ़ी (3G) के जैव ईंधन, बायो -CNG आदि हैं।
- प्रथम पीढ़ी जैव ईंधन की तुलना में द्वितीय एथेनॉल बायो रिफाइनरियों के लिए अतिरिक्त कर प्रोत्साहन और उच्च खरीद मूल्य के साथ व्यवहार्यता अंतराल वित्त पोषण योजना।
- एथेनॉल उत्पादन के लिए कच्चे माल (गन्ने का रस, चुकंदर, मीठी ज्वार, आलू के छिल्के, मक्का आदि) के उपयोग का विस्तार।

इस योजना का उद्देश्य इस क्षेत्र में अनुसंधान और विकास को भी बढ़ावा देना है। इस योजना के लाभार्थियों द्वारा उत्पादित एथेनॉल मिश्रित पेट्रोल कार्यक्रम के अंतर्गत सम्मिश्रण के प्रतिशत में और वृद्धि करने हेतु अनिवार्य रूप से तेल कंपनियों को एथेनॉल की आपूर्ति की जाएगी।

बायोमास आधारित सह-उत्पादन परियोजनाओं हेतु कार्यक्रम

इस कार्यक्रम के अंतर्गत देश के चीनी मिलों और अन्य उद्योगों में बायोमास आधारित सह-उत्पादन की परियोजना को सहायता प्रदान की जाएगी। इसके अंतर्गत खोई कृषि आधारित औद्योगिक अवशेष, फसल अवशेष, ऊर्जा, फसल वाले बागानों से उत्पादित लकड़ी, खरपतवार, औद्योगिक परिचालन में उत्पादित काष्ठ अपशिष्ट आदि जैसे बायोमास का उपयोग करने वाली परियोजनाओं को केन्द्रीय सरकार वित्तीय सहायता प्रदान करेगी। पंजीकृत कम्पनियाँ, सहकारी समितियाँ, सार्वजनिक क्षेत्रों की कंपनियाँ, सरकारी स्वामित्व वाली फर्में आदि इसके बाद होंगी।

इस कार्यक्रम के अंतर्गत नगरपालिका ठोस अपशिष्ट को नहीं रखा गया है।

अपतटीय पवन ऊर्जा

अपतटीय पवन ऊर्जा का आशय जल क्षेत्रों सामान्यत: महासागरों में महाद्वीपीय मग्नतट पर विद्युत उत्पादन हेतु निर्मित विभिन्न कार्यों के माध्यम से पवन ऊर्जा के उपयोग से है। भारत द्वारा अभी अपतटीय ऊर्जा का उत्पादन नहीं किया जा रहा है। कुछ राज्यों; जैसे- तमिलनाडु तथा गुजरात में अध्ययन किए गये हैं कि इन राज्यों में पवन ऊर्जा की संभावनाएं काफी हैं। नवीन एवं नवीकरणीय ऊर्जा मंत्रालय ने अपतटीय पवन ऊर्जा क्षमता में वृद्धि करने के माध्यम से दीर्घकालीन लक्ष्य निर्धारित किए हैं तथा 2022 तक 5 गीगावाट और वर्ष 2030 तक 30 गीगावॉट पवन ऊर्जा क्षमता को प्राप्त करना है।

राष्ट्रीय अपतटीय पवन ऊर्जा नीति-2015

अपतटीय पवन ऊर्जा के विकास के लिए राष्ट्रीय पवन ऊर्जा संस्थान (NIWE) को नोडल एजेंसी के रूप में अधिकृत किया गया है। इसका उद्देश्य सार्वजनिक क्षेत्र में देश के अनन्य आर्थिक क्षेत्र (EEZ) में अपतटीय पवन संयंत्रों की स्थापना हेतु शोध एवं परियोजनाओं को प्रोत्साहित करना है। ऊर्जा अवसंरचना में निवेश के साथ-साथ अनुसंधान एवं विकास को बढ़ावा देना एवं अपतटीय पवन ऊर्जा प्रौद्योगिकी के स्वदेशीकरण को प्रोत्साहित करना है। इसके अंतर्गत कुशल मानव शक्ति एवं रोजगार के अवसरों का उत्थान भी शामिल है।

यह सूक्ष्म, लघु और मध्यम उद्योग मंत्रालय (MSME) के द्वारा जारी की गयी है।

नदी बेसिन प्रबंधन

राष्ट्रीय स्वच्छ गंगा मिशन

राष्ट्रीय परिषद् के अंतर्गत राष्ट्रीय स्वच्छ गंगा मिशन, गंगा नदी के संरक्षण, बचाव एवं प्रबंधन हेतु कार्यरत शाखा है। यह पंजीकरण अधिनियम, 1860 की एक संस्था है। इसका उद्देश्य व्यापक योजना और प्रबंधन के साथ-साथ क्षेत्रीय समन्वय को बढ़ावा देना है, नदी बेसिन संरक्षण के साथ-साथ गंगा नदी को प्रदूषण से बचाना आदि प्रमुख हैं।

गंगा प्रहरी

यह जल संसाधन मंत्रालय द्वारा जारी एक पहल है तथा गंगा नदी संरक्षण से जुड़े स्वयंसेवकों का एक समूह है। गंगा नदी की जैव विविधता को संरक्षित करने हेतु 'जैव विविधता संरक्षण और कायाकल्प' के तहत राष्ट्रीय स्वच्छ गंगा मिशन में शामिल पाँच राज्यों (गंगा उत्तराखंड, उ.प्र., बिहार, प. बंगाल और झारखंड से प्रवाहित होती है) के स्थानीय समुदायों ने भाग लिया है जिन्हें 'गंगा प्रहरी' नाम से जाना जाता है। ये स्वप्रेरित एवं प्रशिक्षित स्वयंसेवक दल है जो निर्मल एवं अविरल गंगा के उद्देश्य से गंगा की स्वच्छता एवं जैव-विविधता की रक्षा करते हैं।

वैश्विक सौर परिषद्

वैश्विक सौर परिषद् एक अंतर्राष्ट्रीय गैर लाभकारी संघ है। इसके अंतर्गत राष्ट्रीय, क्षेत्रीय एवं अंतर्राष्ट्रीय सौर ऊर्जा संघ एवं विश्व के कई संस्थान शामिल हैं। इसकी स्थापना पेरिस जलवायु सम्मेलन, 2015 में हुई। राष्ट्रीय सौर ऊर्जा महासंघ वैश्विक सौर परिषद् (GSC) का संस्थापक सदस्य है। यह भारत के सभी सौर ऊर्जा हितधारकों जैसे- राष्ट्रीय कंपनियों हेतु समग्र संगठन है। केन्द्र एवं राज्य सरकार के प्रयासों द्वारा 2022 तक भारत को 100GW के राष्ट्रीय सौर ऊर्जा उत्पादन के लक्ष्य की प्राप्ति करनी है।

सोलर पार्क योजना

यह सोलर एनर्जी कॉर्पोरेशन ऑफ इंडिया द्वारा लॉन्च किया गया है। इसका उद्देश्य उन सौर पार्कों का निर्माण करना है जिनकी क्षमता 500 मेगावाट और 1000 मेगावाट के मध्य विद्युत का उत्पादन है। सोलर एनर्जी कॉर्पोरेशन ऑफ इंडिया नवीन और नवीकरणीय ऊर्जा मंत्रालय के अंतर्गत कार्यरत है।

सोलर चरखा मिशन

सोलर चरखा मिशन 50 चिन्हित क्लस्टर्स में कारीगरों को नियोजित करने हेतु कार्यरत है। यह 50 समूहों के लिए आरंभिक दो वर्षों में 500 करोड़ रुपयों की सब्सिडी का प्रावधान करता है। इसके अंतर्गत प्रत्येक क्लस्टर में 400 से 2000 कारीगरों को रोजगार दिया जाएगा।

गंगा वृक्षारोपण अभियान

इस अभियान का प्रारम्भ गंगा नदी बेसिन वाले पाँच राज्यों-उत्तराखंड, उ.प्र., बिहार, झारखंड और प. बंगाल में किया गया है। यह राष्ट्रीय स्वच्छ गंगा मिशन का कार्यक्रम है। इस अभियान का उद्देश्य गंगा नदी के कायाकल्प के लिए वनीकरण के महत्त्व के संबंध में लोगों एवं अन्य हितकारों के मध्य जागरूकता को बढ़ावा देना है। इस अभियान को जन आंदोलन का रूप प्रदान करने के लिए स्कूलों, कॉलेजों और विभागों से एक पौधे को गोद लेने का अनुरोध है।

ग्रीन बॉन्ड

ये एक प्रकार के स्वैच्छिक बॉन्ड होते हैं तथा वित्तीय संस्थान, सरकार या किसी कम्पनी द्वारा धन जुटाने हेतु निश्चित अवधि

के लिए जारी किए जाते हैं। यह सामान्य बॉन्ड की तरह ऋण उपकरण है, जिससे संबंधित निवेशों को नवीकरणीय ऊर्जा परियोजनाओं अथवा पारिस्थितिकी रूप से संधारणीय सेवाओं में प्रयोग किया जाता है। पहला ग्रीन बॉन्ड यूरोपियन इन्वेस्टमेंट बैंक द्वारा वर्ष 2007 में जारी हुआ था।

इको निवास संहिता–2018

यह गृह मंत्रालय की एक पहल है, जिसे गृह इमारतों एवं निर्माण में ऊर्जा दक्षता को बढ़ावा देने हेतु जारी किया गया है। इसके अंतर्गत इको निवास संहिता–2018 नामक ऊर्जा संरक्षण इमारत कोड की शुरूआत की गई है। इस कोड का क्रियान्वयन 500 वर्ग मीटर के बराबर या उससे बड़े भूखंड क्षेत्र पर निर्मित सभी आवासीय भवनों पर होगा, जो कि ऊर्जा दक्षता ब्यूरो द्वारा निर्मित किया गया है।

परिवेश

यह सरकार की एकीकृत पर्यावरण प्रबंधन प्रणाली एप्लिकेशन है। इसे केन्द्र, राज्य और जिला स्तर के प्राधिकारियों द्वारा विभिन्न प्रकार की स्वीकृतियों के लिए (पर्यावरण, वन, वन्यजीव, तटीय क्षेत्र) आवेदन जमा करने, आवेदनों की निगरानी करने की सम्पूर्ण प्रक्रिया को ऑनलाइन बनाने हेतु विकसित किया गया है। यह पिछली पर्यावरण आंकलन रिपोर्ट तक पहुँच प्रदान करता है, जो सूचना का एक महत्त्वपूर्ण स्रोत है।

सतत् विकास लक्ष्य

जीरो ड्राफ्ट में वर्ष 2030 तक प्राप्त किए जाने वाले 17 लक्ष्य और 169 टारगेट सम्मिलित हैं। इस सूची में आठ सहस्राब्दी विकास लक्ष्यों की पुनर्रचना भी समाविष्ट है। ये वे लक्ष्य हैं जिनकी अवधि अगले वर्ष समाप्त हो जाएगी, जैसे- निर्धनता उन्मूलन और भुखमरी, शिक्षा में सुधार और लैंगिक समानता की प्राप्ति के साथ-साथ जल एवं स्वच्छता, सस्ती ऊर्जा, सुरक्षित शहरों और संधारणीय विकास से संबंधित जलवायु परिवर्तन पर नए लक्ष्य।

सॉवरेन ब्लू बॉण्ड

सेशेल्स गणराज्य द्वारा विश्व का पहला सॉवरेन ब्लू बॉन्ड जारी किया गया है। यह साऊथ इंडियन ओशन फिशरीज गवर्नेंस एवं शेयर परियोजना का भाग है। यह एक प्रकार के ऋण साधन होते हैं, जो सरकारों, विकास बैंकों इत्यादि द्वारा जारी किए जाते हैं। विश्व बैंक और वैश्विक पर्यावरण सुविधा (Global Environment Facility) के सहयोग द्वारा बॉण्ड एवं समुद्री गतिविधियों से संबंधित कार्यक्रम को विकसित किया गया है। इसे सकारात्मक पर्यावरणीय, आर्थिक तथा जलवायु लाभों वाली समुद्री एवं महासागरीय परियोजनाओं के वित्त पोषण हेतु प्रमुख निवेश से पूँजी प्राप्त हेतु जारी किया जाता है।

❑❑❑❑❑

लक्ष्य-1	संपूर्ण विश्व से निर्धनता के सभी रूपों की समाप्ति।
लक्ष्य-2	भूख की समाप्ति, खाद्य सुरक्षा और बेहतर पोषण एवं संधारणीय कृषि का प्रोन्नयन।
लक्ष्य-3	सभी आयु के लोगों में स्वास्थ्य सुरक्षा और स्वस्थ जीवन को बढ़ावा।
लक्ष्य-4	समावेशी और न्यायसंगत गुणवत्तायुक्त शिक्षा सुनिश्चित करने के साथ ही सभी को सीखने का अवसर देना।
लक्ष्य-5	लैंगिक समानता प्राप्त करने के साथ ही महिलाओं और बालिकाओं का सशक्तिकरण।
लक्ष्य-6	सभी के लिए स्वच्छता और जल की उपलब्धता और संधारणीय प्रबंधन सुनिश्चित करना।
लक्ष्य-7	सस्ती, विश्वसनीय, संधारणीय और आधुनिक ऊर्जा तक पहुंच सुनिश्चित करना।
लक्ष्य-8	सभी के लिए निरंतर समावेशी और सतत् आर्थिक विकास, पूर्ण और उत्पादक रोजगार और बेहतर कार्य को प्रोन्नत करना।
लक्ष्य-9	लचीले बुनियादी ढाँचे, समावेशी और सतत् औद्योगीकरण को बढ़ावा एवं नवोन्मेष का पोषण।
लक्ष्य-10	देशों के भीतर और उनके बीच असमानता को कम करना।
लक्ष्य-11	समावेशी, सुरक्षित लचीले और संधारणीय शहर और मानव बस्तियों का निर्माण।
लक्ष्य-12	संधारणीय उपयोग और उत्पादन पैटर्न सुनिश्चित करना।
लक्ष्य-13	जलवायु परिवर्तन और उसके प्रभावों से निपटने के लिए तत्काल कार्रवाई करना।
लक्ष्य-14	संधारणीय विकास हेतु महासागरों, समुद्रों और समुद्री संसाधनों का संरक्षण और संधारणीय उपयोग।
लक्ष्य-15	स्थलीय पारिस्थितिकीय तंत्रों का संरक्षण, पुनर्स्थापन एवं सतत् उपयोग को बढ़ावा देने, वनों का संधारणीय प्रबंधन, मरुस्थलीकरण से सुरक्षा, भू-निम्नीकरण को रोकना एवं भूमि की पुन:प्राप्ति तथा जैव-विविधता की क्षति को रोकने का प्रयास करना।
लक्ष्य-16	संधारणीय विकास के लिए शांतिपूर्ण और समावेशी समितियों को बढ़ावा देने के साथ ही सभी स्तरों पर इन्हें प्रभावी, जवाबदेह बनाना ताकि सभी के लिए न्याय सुनिश्चित हो सके।
लक्ष्य-17	संधारणीय विकास हेतु वैश्विक भागीदारी को पुनर्जीवित करने के अतिरिक्त कार्यान्वयन के साधनों को सुदृढ़ बनाना, जैसे: वित्त, प्रौद्योगिकी, क्षमता निर्माण, व्यापार, नीति और संस्थागत ससंजन, आंकड़ा निगरानी एवं लेखांकन आदि।

अध्याय 15

प्रमुख पर्यावरणविद् तथा उनका योगदान

Major Environmentalists And Their Contributions

पर्यावरण संरक्षण के क्षेत्र में अंतर्राष्ट्रीय स्तर पर बहुत-से ख्याति प्राप्त विचारक हुए हैं। इन विचारकों के अंतर्गत राल्फ इमर्सन, हेनरी थोरो, जान मुइर, चार्ल्स डार्विन, आल्दो लियोपोल्द, ई. ओ. विल्सन, राचेल कार्सन आदि का नाम प्रमुख है। इन विचारकों ने पर्यावरण को भिन्न-भिन्न दृष्टिकोण से देखा है तथा पर्यावरण के संदर्भ में अपनी योग्यता का प्रारूप रखा, जिसमें चार्ल्स डार्विन द्वारा लिखित पुस्तक 'ओरिजिन ऑफ स्पीशीज' सबसे महत्त्वपूर्ण मानी जाती है। इसके अंतर्गत जीवों की उत्पत्ति से लेकर उनके पारस्परिक संबंधों तथा आवासों पर प्रकाश डाला गया है। उद्विकास की अवधारणा को प्रस्तुत करते हुए दूसरी प्रजातियों के साथ मनुष्यों के संबंधों पर भी प्रकाश डाला गया है। अन्य दूसरे विचारकों में, एक शोध के दौरान अल्फ्रेड वैलेस ने भी इन्हीं परिणामों की व्याख्या दी। पर्यावरण पर उत्पन्न खतरों की व्याख्या को राल्फ इमर्सन ने प्रस्तुत किया। वनों के अंतर्गत सालों तक भ्रमण करने के बाद हेनरी थोरो इस नतीजे पर पहुँचे कि वनों के संरक्षण में ही पर्यावरण का संरक्षण है। जॉन मुइर को कैलिफोर्निया के विशाल और प्राचीन शंकु वनों को बचाने का श्रेय दिया जाता है। उनके द्वारा वर्ष 1890 में सियरा क्लब की स्थापना की गई जो कि यू.एस.ए. की सबसे बड़ी पर्यावरणीय गैर-सरकारी संस्था है। आल्दो लियोपोल्द, जो कि एक वन अधिकारी थे, ने 1920 के दशक में वन संरक्षण एवं वन्य जीव प्रबंधन पर आधुनिक नीतियों का निर्माण किया। राचेल कार्सन द्वारा 1960 में दुनियाभर में प्रकृति एवं मानव जाति पर कीटनाशक दवाओं के प्रभाव की चर्चा शुरू की गई तथा 'साइलेंस स्प्रिंग' नाम की प्रसिद्ध पुस्तक का स्वरूप प्रस्तुत किया। इस पुस्तक के प्रभाव से अंत:सहकारी नीतियों में बदलाव आया तथा जनता के मध्य जागरूकता की भावना उत्पन्न हुई। एक कीट वैज्ञानिक होने के साथ-साथ ओ. विल्सन ने अवधारणा प्रस्तुत की कि जैव-विविधता पृथ्वी पर मनुष्य की जीवन रक्षा की कुंजी है। उनके द्वारा लिखित पुस्तक 'डाइवर्सिटी ऑफ लाइफ' (1993) को पर्यावरण संबंधी मुद्दों पर प्रकाशित सर्वोच्च पुस्तक का पुरस्कार दिया जा चुका है। उनकी रचनाओं द्वारा मानव गतिविधियों से हुई पर्यावरण क्षति के परिणामों को मानव जाति के सामने उत्पन्न जोखिम से अवगत कराया गया जो विश्व स्तर पर प्रजातियों के विनाश के मुख्य कारण बन रहे थे।

भारत में पर्यावरण संरक्षणों एवं संतुलन के लिए सदियों से प्रयास जारी है। आदिकाल से ही मानव वृक्षों, मूर्तियों तथा ग्रह-नक्षत्रों की विडम्बना पर आश्रित रहा है एवं जीव-जंतु की पूजा-पाठ के साथ, वनस्पतियों से गहरा संबंध रहा है। सदियों से ही बुद्धिजीवियों द्वारा मानव तथा पर्यावरण का अनोखा संबंध स्थापित करता चला आ रहा है। 20वीं शताब्दी के आस पास औद्योगीकरण का विकास प्रारंभ हो गया था जिसके अंतर्गत प्राकृतिक संसाधनों का अति दोहन प्रारंभ हो गया। बढ़ती पर्यावरण प्रदूषण की समस्याओं में 'लंदन धुंध' (The Great Smog of London) के रूप में दिखाई दिया। इसका प्रभाव यह हुआ कि यह अनेक देशों के लिए चिंता का विषय बनता चला गया तथा उन्हें संयुक्त रूप से कार्य करने के लिए प्रेरित किया तथा आगामी वर्षों में पर्यावरण संरक्षण के लिए सम्मेलन की होड़ मच गई। वर्ष 1972 में प्रथम पर्यावरण सम्मेलन का आयोजन हुआ तथा पर्यावरण संबंधी समस्याओं से निपटने हेतु अंतर्राष्ट्रीय स्तर पर नियम-कानून बनाए गए। भारत द्वारा भी वन्य-जीव संरक्षण अधिनियम नामक कानून बनाया गया तथा पर्यावरण संबंधी क्रियाकलापों को कार्यान्वयन हेतु प्रावधान स्थापित किए गए। आज पर्यावरण समस्या विश्व के सामने सबसे बड़ी समस्या का रूप धारण कर चुकी है। बढ़ता भू-तापन, ग्लोबल वार्मिंग, बाढ़, सूखा, हरितग्रह गैसों के कारण मानव, जीव-जंतु तथा वनस्पतियाँ खतरे में हैं। विश्व एवं स्थानीय स्तर पर, पर्यावरण के संबंध में प्रयास जारी हैं जिसके अंतर्गत कुछ महत्त्वपूर्ण चर्चित व्यक्ति शामिल हैं-

ग्रेटा थनबर्ग

स्टॉकहोम में 3 जनवरी, 2003 को जन्मी ग्रेटा की माँ मालेना एमान एक अंतर्राष्ट्रीय ओपेरा सिंगर हैं, जबकि पिता स्वांते थनबर्ग भी अभिनय की दुनिया में एक जाना माना नाम हैं। केवल आठ वर्ष की उम्र में ग्रेटा ने जलवायु परिवर्तन के बारे में सुना और उसे इस दिशा में बरती जा रही लापरवाही को लेकर चिंता होने लगी।

दुनिया के सातवें सबसे अमीर और संपन्न देश स्वीडन में रहने वाली ग्रेटा थनबर्ग पिछले एक वर्ष से ग्लोबल वार्मिंग के खिलाफ आक्रामक अभियान पर है और उसके प्रयासों का ही नतीजा है कि इस वर्ष उसके देश में हवाई यात्रा करने वालों की संख्या में पिछले साल के मुकाबले 8 प्रतिशत की कमी आई है। वह कहने को छोटी सी लड़की है, पर दुनिया को पर्यावरण के खतरे से बचाने के लिए हर मंच पर दस्तक देती है। स्कूल से छुट्टी लेकर स्वीडन की संसद के सामने धरना प्रदर्शन करने से शुरुआत करने वाली ग्रेटा संयुक्त

राष्ट्र मंच से दुनियाभर के बड़े नेताओं को पर्यावरण को बर्बाद करने के लिए फटकार लगाती है और फिर अगले ही पल उन्हें आने वाले खतरे से आगाह करते हुए कुछ ठोस कदम उठाने की गुहार लगाती है।

11 वर्ष की उम्र तक आते-आते ग्रेटा को अवसाद और मनोरोग ने घेर लिया, लेकिन नन्ही बच्ची ने बड़ी हिम्मत के साथ एस्परजर सिंड्रोम का मुकाबला किया और इसकी वजह से आने वाली दिक्कतों के सामने घुटने टेकने की बजाय वह अपनी हिम्मत बनाकर नये हौसले के साथ पर्यावरण संरक्षण की अपनी मुहिम में जुट गई।

ग्रेटा ने शुरुआत अपने घर में ही की और अपने माता-पिता को मांसाहार का त्याग करने और विमान से यात्रा न करने के लिए तैयार किया। मालेना को अपने संगीत कार्यक्रमों के लिए अक्सर दूसरे देशों में जाना होता था और परिवहन के किसी अन्य साधन से पहुंचना संभव नहीं था, लिहाजा उन्होंने दुनिया को बचाने निकली अपनी बेटी के लिए ओपेरा सिंगर के अपने अंतर्राष्ट्रीय करियर का बलिदान कर दिया। पर्यावरण को बेहतर बनाने की दिशा में ग्रेटा की इस पहल से उसका यह विश्वास पक्का हो गया कि अगर सही दिशा में प्रयास किया जाए तो बदलाव लाया जा सकता है। 2018 में 15 वर्ष की उम्र में ग्रेटा ने स्कूल से छुट्टी ली और स्वीडन की संसद के सामने प्रदर्शन किया। उसके हाथ में एक बड़ी सी तख्ती थी, जिस पर बड़े अक्षरों में 'स्कूल स्ट्राइक फॉर क्लाइमेट' लिखा था।

देखते ही देखते उसके अभियान ने रफ्तार पकड़ ली और बहुत से स्कूलों के बच्चे पर्यावरण संरक्षण की इस मुहिम में ग्रेटा के हमकदम बन गए। उसके बोलने का लहजा और शब्दों के चयन ने उसे देखते ही देखते एक अंतर्राष्ट्रीय पर्यावरण कार्यकर्त्ता बना दिया। इस काम में सोशल मीडिया ने उसकी खासी मदद की। अन्तर्राष्ट्रीय मंचों पर उसे तकरीर के लिए बुलाया जाने लगा। मई, 2019 में उसके भाषणों का संग्रह प्रकाशित हुआ, जिसे हाथोंहाथ लिया गया। इन दिनों वह स्कूल से एक साल की छुट्टी पर है। पिता को बेटी की पढ़ाई का हर्जा होने का दुःख तो है, लेकिन इस बात की उम्मीद है कि उनकी पीढ़ी ने पर्यावरण को बर्बाद करने की जो गलती की है, उनकी बेटी की रहनुमाई में आने वाली पीढ़ी उसे सुधारने की कोशिश कर सकती है।

महात्मा गाँधी

भारत में पर्यावरण संबंधी आंदोलन का श्रेय कहीं न कहीं गाँधीवादी विचारधारा से प्रभावित रहा है, जिसकी वजह से अनेक पर्यावरण आंदोलन का शुभारंभ हुआ। चंडीप्रसाद एवं सुंदरलाल बहुगुणा द्वारा चिपको आंदोलन चलाया गया तथा वनों की कटाई हेतु प्रतिबंध स्थापित किया गया। नर्मदा बचाओ आंदोलन जैसी प्राकृतिक संरक्षक आंदोलन का उद्गार हुआ जिसका एक बड़ा प्रभाव सामने आया। आज देश में कई बड़ी गैर-सरकारी एजेंसियाँ भी पर्यावरण एवं सामाजिक सरोकारों से जुड़ चुकी हैं तथा पर्यावरण संरक्षण को बढ़ावा दे रही है। जैसे- "सुलभ इंटरनेशनल"। अन्य की बात की जाए, तो "स्वच्छ भारत अभियान" जैसे प्रमुख पर्यावरणीय आंदोलन निरंतर जारी हैं।

विभिन्न देशों के औद्योगीकरण विकास को लेकर पर्यावरण पर पड़ने वाले नकारात्मक प्रभावों पर गाँधी जी ने चिंता व्यक्त करते हुए कहा है, "प्रकृति हमारी जरूरतों को पूरा कर सकती है किन्तु हमारे लालच नहीं।" वे पर्यावरण एवं मानव को परस्पर एक-दूसरे का पूरक मानते थे तथा पृथ्वी पर जीवन का अस्तित्व बनाए रखने के लिए मानव-पर्यावरण संबंधों को बेहतर बनाने हेतु लोगों को प्रेरित करते थे, जिसकी वजह से उन्होंने मितव्ययी जीवन जीने पर जोर दिया।

इंदिरा गाँधी

पर्यावरण संरक्षण में पूर्व प्रधानमंत्री इंदिरा गाँधी का विशेष योगदान रहा है। अपने प्रधानमंत्रित्व काल में उन्होंने भारतीय वन्य जीव अधिनियम पारित कर उसे विशेष सक्रियता प्रदान की तथा CITES और अन्य अंतर्राष्ट्रीय पर्यावरण संधियों को बढ़ावा दिया। इंदिरा गाँधी के प्रधानमंत्रित्व शासन में भारत में संरक्षित क्षेत्रों की संख्या में काफी वृद्धि हुई तथा ये 65 से बढ़कर 298 हो गई।

राजेन्द्र सिंह

राजेन्द्र सिंह को 'भारत का जलपुरुष' के रूप में जाना जाता है। उन्होंने जल संरक्षण के संदर्भ में अनेक प्रयास किए। उनके प्रयासों से प्रभावित होकर विश्व की अनेक संस्थाओं ने उन्हें पुरस्कृत किया, जिसके अंतर्गत 'रेमन मैग्सेसे' एवं 'स्टॉकहोम वाटर प्राइज' प्रमुख हैं। इसके अलावा पद्मभूषण तथा 2013 में गाँधी शांति पुरस्कार से भी सम्मानित किया गया।

सुनीता नारायण

सुनीता नारायण एक प्रसिद्ध पर्यावरणविद् हैं। ये दशकों से पर्यावरण एवं समाज की मूलभूत

समस्याओं की जागरूकता के लिए कार्य कर रही हैं। सुनीता नारायण का जन्म 1961 में हुआ तथा 1982 से वे भारत में स्थित विज्ञान एवं पर्यावरण केन्द्र से जुड़ी रही हैं। वे पर्यावरण संचार समाज की निर्देशक भी रही हैं। वर्तमान में वे विज्ञान एवं पर्यावरण केन्द्र (CSE) की महानिदेशक के रूप में कार्य कर रही हैं। पर्यावरण पर केन्द्रित पाक्षिक पत्रिका 'डाउन टू अर्थ' इनके ही द्वारा संपादित है। पर्यावरण और राजनीतिक कार्यकर्त्ता के साथ-साथ समाज के हरित विकास (Green Development) की समर्थक भी हैं। इनके कार्यों से प्रभावित होकर सरकार ने वर्ष 2005 में इन्हें पद्मश्री से अलंकृत किया तथा इनके नेतृत्व में 2005 में CSE को 'स्टॉकहोम वाटर प्राइज' पुरस्कार मिला। वर्ष 2005 और 2008 में ब्रिटिश मैगजीन 'प्रॉस्पेक्ट' और अमेरिकन मैगजीन 'फॉरेन पॉलिसी' ने इन्हें दुनियाभर में मौजूद सर्वश्रेष्ट 100 बुद्धिजीवियों की श्रेणी में शामिल किया।

अनुपम मिश्र

अनुपम मिश्र एक लेखक एवं संपादक होने के साथ ही गाँधीवादी विचारधारा से प्रभावित थे। उन्होंने पर्यावरण और जल संरक्षण के क्षेत्र में विशेष योगदान दिया। अलवरी (राजस्थान) नदी के उत्थान में अनुपम मिश्र जी ने विशेष योगदान दिया। साथ ही, महाराष्ट्र, उत्तर प्रदेश, उत्तराखण्ड, मध्यप्रदेश आदि जैसे राज्यों में इन्होंने परंपरागत जल स्रोतों द्वारा तकनीकी के माध्यम से राजस्थान जैसे कई सूखे इलाकों में जल की आपूर्ति की।

डॉ. वंदना शिवा

उत्तराखण्ड में जन्मी वंदना शिवा का पर्यावरण के प्रति विशेष लगाव रहा है। उन्होंने राष्ट्रीय तथा अंतर्राष्ट्रीय स्तर पर पर्यावरण को संरक्षित करने की भूमिका निभाई। उनके द्वारा 'नवादान्य' नामक एक गैर-सरकारी संगठन का शुभारंभ भी किया, जिसने स्थानीय समुदायों के साथ मिलकर जैव कृषि को बढ़ावा दिया। वे 1970 के चिपको आंदोलन से भी जुड़ी रही तथा वर्ष 1982 में विज्ञान एवं प्रौद्योगिकी और पारिस्थितिक के लिए देहरादून में अनुसंधान संस्थान की स्थापना की। पर्यावरण के क्षेत्र में अपना विशिष्ट प्रभाव छोड़ते हुए तथा उत्कृष्ट कार्य करते हुए उन्हें 'राइट लिवलीहुड' एवं 'ग्लोबल 500' जैसे पुरस्कारों से पुरस्कृत किया जा चुका है।

चंडीप्रसाद भट्ट

चंडीप्रसाद भट्ट को आधुनिक भारत का प्रथम पर्यावरण विद्वान माना जाता है। पर्यावरण एवं सामाजिक कार्यकर्त्ता चंडीप्रसाद भट्ट गाँधीवादी विचारधारा से प्रभावित व्यक्ति रहे हैं। वर्ष 1964 में गोपेश्वर में दशोली ग्राम स्वराज्य संघ की स्थापना की, जो बाद में चलकर चिपको आंदोलन का संगठन बन गया। ये चिपको आंदोलन के कार्यकर्त्ता भी रहे हैं जिसके लिए इन्हें 1982 में समुदाय का नेतृत्व करने के लिए 'रेमन मैग्सेसे' (Raman Magsasay) पुरस्कार भी मिला। वर्ष 2005 में परंपरागत जलस्रोतों के पुनर्जीवन में दिशात्मक योगदान दिया। 'राजस्थान की रजत बूंदे' एवं 'आज भी खरे हैं तालाब' इनकी प्रमुख किताबें हैं। वर्ष 1966 में इन्हें 'इंदिरा गाँधी पर्यावरण पुरस्कार' द्वारा सम्मानित किया गया। 19 दिसम्बर, 2016 को इनका निधन हो गया।

बिली अर्जन सिंह

युवावस्था में शिकार के प्रति विशेष लगाव रखने वाले बिली अर्जन सिंह बदलाव के कारण जीव-जंतु संरक्षणकर्त्ता बन गए। इनके द्वारा बाघों एवं तेन्दुओं को संरक्षित कर उन्हें उनके आवासों में छोड़ने की सलाह दी गई। उन्होंने प्राणिजगत जगत पर कई किताबें भी लिखी। इनके कार्यों से प्रभावित होकर वर्ष 1996 में इन्हें 'वर्ल्ड वाइल्ड लाइफ फंड' द्वारा गोल्ड मेडल प्रदान किया गया तथा 1995 में पद्मश्री एवं 2000 में पद्मभूषण से सम्मानित किया गया।

सलीम अली

सलीम अली का नाम भारत में पक्षी एवं नेचुरल हिस्ट्री सोसायटी का पर्याय है। उन्होंने मशहूर पुस्तक "बुक ऑफ इंडियन बर्ड्स" के साथ कई पुस्तकों की रचना की। उनकी प्रसिद्ध आत्मकथा "द कॉल ऑफ अ स्पैरो" अति महत्त्वपूर्ण पर्यावरणीय आधारित पुस्तक है। इन्हें भारत का बर्डमैन भी कहा जाता है। इन्हीं के प्रयासों से 'केवलादेव नेशनल पार्क' (राजस्थान) का निर्माण किया गया। इन्हें वर्ष 1976 में 'पद्मविभूषण' पुरस्कार से सम्मानित किया गया।

माइक पांडे

माइक पांडे ने अपने कैरियर की शुरूआत वन्य जीवों पर आधारित फिल्मों से की। वे एक निर्देशक के साथ 'अर्थ मैटर' फाउंडेशन के चेयरमैन भी हैं। व्हेल आधारित फिल्म 'सोर्स ऑफ साइलेंस' इन्हीं के द्वारा निर्मित है। वे सरकार पर अपनी फिल्म के माध्यम से सतत् विकास के साथ समृद्ध जीव-जंतुओं के संरक्षण हेतु दबाव डालते हैं। वन्य-जीवों पर निर्मित कई फिल्मों के कारण इन्हें लगभग 300 से

भी अधिक अवार्ड मिल चुके हैं। वर्ष 2009 में टाइम्स मैगजीन के माध्यम से मालदीव के राष्ट्रपति मोहम्मद नशीद, केमरून डियाज के साथ 'हीरो ऑफ एन्वायरमेंट' घोषित किया गया। वर्ष 1994 में इन्हें 'ग्रीन ऑस्कर' पुरस्कार दिया गया।

सोनम वांगचुक

चेवांग नोरफेल से प्रेरित सोनम वांगचुक एक सिविल इंजीनियर हैं। इनका प्रमुख क्षेत्र शिक्षा में वैज्ञानिक एवं नवाचार संबंधित सुधारों से रहा है। इसके अतिरिक्त पर्यावरण इनका प्रमुख क्षेत्र रहा है। वे अल्पसंख्यक वर्ग हेतु शिक्षा, शिक्षा में भाषा समस्या आदि के लिए भी कार्यरत हैं। अभियांत्रिक तकनीक के माध्यम से झीलों का संरक्षण एवं लद्दाख जैसे क्षेत्रों में कृत्रिम ग्लेशियर का निर्माण किया। इन्हें 'रोलेक्स अवार्ड' के लिए भी चुना गया है (यह अवार्ड विश्व के 140 लोगों को प्रदान किया जाने वाला पुरस्कार है। इससे पहले यह अवार्ड भारत के कृष्णमूर्ति को मिल चुका है। इन्होंने कई संगठनों की स्थापना की है, उनमें से एक 'एजुकेशन एण्ड कल्चरल मूवमेंट ऑफ लद्दाख' प्रसिद्ध है। हाल ही में उन्हें वर्ष 2018 का रेमन मैग्सेसे पुरस्कार से भी सम्मानित किया गया।

मधु भटनागर

'जूनियर टाइगर टास्क फोर्स' की शुरूआत करने वाली मधु भटनागर पेशे से एक शिक्षिका हैं। पर्यावरण के प्रति विशेष लगाव होने तथा जागरूकता को बढ़ावा देने हेतु 'पर्यावरण शिक्षा नीति' कार्यक्रम की शुरूआत की। वर्ष 1999 में इन्होंने अपने कॉलेज में 'वाटर हार्वेस्टिंग' की शुरूआत की थी। वे मानती हैं कि "हम दुनिया को बदल नहीं सकते लेकिन बच्चों को पर्यावरण के प्रति जागरूक करके विश्व पर्यावरण में एक स्वस्थ परिवर्तन ला सकते हैं।" वर्तमान में ये दिल्ली के श्रीराम स्कूल, बसंत विहार में उप-प्रधानाचार्य हैं।

सुंदरलाल बहुगुणा

सुंदरलाल बहुगुणा भारत के एक प्रसिद्ध पर्यावरण संरक्षक के रूप में जाने जाते हैं। मूलतः ये उत्तराखण्ड के रहने वाले हैं। ये महात्मा गाँधी के सत्याग्रह व अहिंसा के सिद्धांतों से प्रभावित थे। उत्तराखण्ड में वृक्षों की कटाई के विरूद्ध उन्होंने चिपको आन्दोलन का नेतृत्व किया। उन्हीं के प्रयासों से हिमालयी क्षेत्र में वनों के संरक्षण से संबंधित कानून पारित किया गया। चिपको आंदोलन की सफलता के कारण इन्हें 'वृक्षमित्र' के नाम से जाना गया। 1980 के दशक में बहुगुणा द्वारा टिहरी बांध के विरूद्ध आंदोलन चलाया गया। भारत सरकार द्वारा 2009 में उन्हें पद्म विभूषण से सम्मानित किया गया।

नरेन्द्र मोदी

प्रधानमंत्री नरेंद्र मोदी पर्यावरण तथा नवीकरणीय ऊर्जा (विशेषकर सोलर एनर्जी) के क्षेत्र में विकास हेतु काफी संवेदनशील हैं। हाल ही में प्रधानमंत्री नरेंद्र मोदी को संयुक्त राष्ट्र के सबसे बड़े पर्यावरण सम्मान 'चैंपियंस ऑफ द अर्थ' से नवाजा गया है। यह सम्मान उन्हें पॉलिसी लीडरशिप कैटेगरी में दिया गया है। पीएम मोदी के अलावा यह सम्मान फ्रांस के राष्ट्रपति इमैनुअल मैक्रों को भी मिला है। दोनों को यह सम्मान इंटरनेशनल सोलर अलायंस और पर्यावरण के मोर्चे पर कई महत्वपूर्ण कार्यों के लिए दिया गया है।

पर्यावरण के सबसे बड़े सम्मान के रूप में दिए जाने वाले इस पुरस्कार को साल 2005 में लॉन्च किया गया था। यह पुरस्कार पर्यावरण के क्षेत्र में असाधारण उपलब्धियों के लिए व्यक्ति और संगठनों को दिया जाता है। वैश्विक पर्यावरण की दृष्टि से लोगों को प्रेरित करने के लिए जो व्यक्ति राजनीतिक नेतृत्व के तहत काम करते हैं, जमीनी कार्रवाई करते हैं या फिर वैज्ञानिक नवाचार के माध्यम से काम करते हैं, वे इस सम्मान को पाने के हकदार होते हैं।

पर्यावरण नैतिकता

पर्यावरण नैतिकता का आशय पर्यावरण और मानव के नैतिक संबंधों से है। पृथ्वी पर जीवन के अस्तित्व को तभी संभव बनाया जा सकता है, जब पर्यावरण का अस्तित्व संभव हो। मानव एवं अन्य जातियों की उत्तरजीविता एवं संवृद्धि, पर्यावरण के कारण ही संभव है। जनसंख्या वृद्धि, आर्थिक विकास एवं औद्योगीकरण के कारण पर्यावरण पर आज दबाव अधिक बढ़ गया है जिसकी वजह से पर्यावरण पारितंत्र नष्ट होने के कगार पर है। बढ़ती पर्यावरण समस्याओं को देखते हुए कई पर्यावरण विद्वानों ने पर्यावरण नैतिकता की अवधारणा प्रकट की। उनके अनुसार, "पृथ्वी पर सजीवों के अस्तित्व को बनाए रखने के लिए मानव जीव-जंतु एवं वनस्पतियों के मध्य संतुलन की स्थिति बनानी होगी।" पर्यावरण नैतिकता के विकास का समय 1960 के दशक में शुरू हो गया था तथा पर्यावरण संतुलन के प्रति लोगों की जागरूकता में वृद्धि हुई। पर्यावरण नैतिकता का तात्पर्य पर्यावरण की रक्षा एवं पृथ्वी पर सभी प्रजातियों की आजीविका को सुनिश्चित करने के साथ-साथ पर्यावरणीय शिक्षा को भी बढ़ावा देना है। मनुष्यों को वनों के कटाव के साथ-साथ वनीकरण पर भी ध्यान देने की आवश्यकता है क्योंकि वन के कटाव से पृथ्वी की कई प्रजातियों का विलोपन हो जाता है। जिससे पर्यावरण असंतुलन की स्थिति उत्पन्न होने लगती है।

मानव को किसी प्रजाति को नष्ट करने का अधिकार नहीं है। यदि वह अपनी महत्त्वाकांक्षाओं की पूर्ति के लिए नैतिक मूल्यों का समर्थन नहीं करता है तो उसे भविष्य में अनेक जटिल समस्याओं से गुजरना पड़ सकता है। वैश्विक स्तर पर पर्यावरण नैतिकता को बढ़ावा देना चाहिए तथा इसे सुनिश्चित करने के लिए वैश्विक स्तर पर कई पर्यावरण सम्मेलन आयोजित करने चाहिए जिसमें मानव एवं पर्यावरण के संबंधों को स्वरूप देने के लिए नैतिकता को बढ़ावा देना चाहिए। आज विकास के साथ पर्यावरण के नैतिक मूल्यों को बनाए रखने की भी आवश्यकता है।

पर्यावरण नैतिकता को शामिल करने के कारण

आज पृथ्वी पर प्राकृतिक संसाधन तेजी से घट रहे हैं तथा मानव क्रियाकलापों के कारण पर्यावरण का अपघटन होता चला जा रहा है। अत: पर्यावरण ह्रास की रोकथाम हमारे जीवन का अंग होना चाहिए। हम जानते हैं कि पर्यावरण (प्रकृति) विभिन्न जैविक-अजैविक संसाधनों से संगठित है लेकिन मानव गतिविधियों ने इसे खत्म होने की राह पर लाकर खड़ा कर दिया है। यह केवल जन-जागरूकता द्वारा ही संभव है। समाचार-पत्रों, रेडियो और टेलीविजनों जैसे जनसंचार माध्यम जनमत पर प्रभाव डालते हैं। यदि हम में से हर कोई पर्यावरण के बारे में संवेदनशील रहे, तो प्रेस और संचार के माध्यम से हमारे प्रयासों को और धारदार बनाया जा सकता है।

पर्यावरण नैतिकता के दृष्टिकोण

- **मानव केन्द्रित दृष्टिकोण:-** इस मत के अनुसार, पृथ्वी पर मनुष्य सबसे महत्त्वपूर्ण प्राणियों में से एक है। वह अपनी आवश्यकताओं की पूर्ति हेतु पृथ्वी के समस्त संसाधनों का उपयोग करता है। वस्तुत: इस दृष्टिकोण से प्रकृति को साधन और मानव हितों को साध्य बनाता है। अत: इसे मानव केन्द्रित दृष्टिकोण कहते हैं।
- **जीवन केन्द्रित दृष्टिकोण:-** नैतिकता के इस दृष्टिकोण से मानव जीव-जगत के जीवों के प्रति जिम्मेदार बनता है तथा वह प्रकृति की रक्षा करने वाला सबसे महत्त्वपूर्ण प्रबंधक माना जाता है जो भावी पीढ़ियों के लिए पृथ्वी को अच्छी दशा में बनाए रखने की प्रेरणा देता है।
- **पारितांत्रिक दृष्टिकोण:-** नैतिकता के इस दृष्टिकोण को पर्यावरण का समग्र दृष्टिकोण माना जाता है। इसके अंतर्गत एक विशेष जाति के बजाय सम्पूर्ण पारितंत्र को शामिल किया जाता है। यह दृष्टिकोण सम्पूर्ण जगत के जीव-जंतु एवं पर्यावरण के प्रति नैतिक जिम्मेदारी की सद्भावना रखता है, साथ ही साथ दूसरे जीवों के प्रति नैतिक जिम्मेदारी की बात करता है। यह सम्पूर्ण पृथ्वी को महत्व देता है।
- **भारत में पर्यावरण संरक्षण के लिए दिए जाने वाले पुरस्कार:-** भारत सरकार द्वारा पर्यावरण एवं वन्यजीव संरक्षण के क्षेत्र में कार्यरत लोगों को पहचान एवं प्रोत्साहन प्रदान करने हेतु पर्यावरण पुरस्कार कार्यक्रम चलाया गया है। इस पुरस्कार को पर्यावरण क्षेत्र में किए गए विशिष्ट कार्यों के लिए प्रदान किया जाता है। अत: यह पर्यावरण क्षेत्र से जुड़े कुछ विशिष्ट लोगों के नाम पर दिया जाता है, जो निम्नलिखित हैं-

  (i) **इंदिरा गाँधी पर्यावरण पुरस्कार:-** इस पुरस्कार को पर्यावरण, वन एवं जलवायु मंत्रालय द्वारा प्रदान किया जाता है। पूर्व प्रधानमंत्री श्रीमती इंदिरा गाँधी की याद में वर्ष 1987 से यह पुरस्कार पर्यावरण के क्षेत्र में प्रदान किया जाता है। शुरूआत में इस पुरस्कार की राशि 1 लाख रखी गई थी लेकिन वर्तमान में इस पुरस्कार में कई श्रेणियाँ शामिल की गई हैं। वर्तमान समय में दो श्रेणियों में पुरस्कार प्रदान किया जाता है। संगठन श्रेणी के अंतर्गत 5 लाख रुपये के दो पुरस्कार तथा दूसरी, व्यक्तिगत श्रेणी के अंतर्गत 5 लाख रुपये, 3 लाख रुपये और 2 लाख रुपये के तीन पुरस्कार शामिल हैं। इसके अंतर्गत नकद पुरस्कार के साथ-साथ, रजत ट्रॉफी तथा प्रशस्ति-पत्र भी प्रदान किया जाता है। यह पुरस्कार प्रत्येक वर्ष दिया जाता है।

  (ii) **राजीव गाँधी वन्यजीव संरक्षण पुरस्कार:-** यह पुरस्कार वन्यजीव संरक्षण के क्षेत्र में विशेष योगदान दिए जाने पर प्रदान किया जाता है। यह शैक्षणिक एवं शोध संस्थाओं, संगठनों, वन एवं वन्यजीव अधिकारियों, शोध कार्य में संलग्न लोगों तथा वन्यजीव संरक्षणविदों को प्रदान किया जाता है। इस पुरस्कार के अंतर्गत आवंटित राशि 1 लाख रूपये है तथा यह दो श्रेणियों में प्रदान किया जाता है। यह पुरस्कार प्रत्येक वर्ष प्रदान किया जाता है।

  (iii) **मरूभूमि पारिस्थितिकी फैलोशिप:-** इस पुरस्कार की स्थापना सितम्बर, 1992 में पर्यावरण और वन मंत्रालय के अंतर्गत की गई थी। प्राकृतिक संरक्षण के प्रति विश्नोई समुदाय के योगदान को मान्यता देने और इस क्षेत्र में अध्ययनों को प्रोत्साहित करने के लिए विश्वविद्यालय में मरूस्थल पारिस्थितिकी फैलोशिप की स्थापना हेतु एक समय बंदोबस्ती के रूप में 6 लाख रुपये प्रदान किये थे। फैलोशिप में 3500 रूपये प्रतिमाह की वृत्ति और 1000 रूपये प्रतिमाह मासिक का आकस्मिक अनुदान प्रदान किया जाता है।

  (iv) **इंदिरा प्रियदर्शिनी वृक्षमित्र पुरस्कार:-** इंदिरा प्रियदर्शिनी वृक्षमित्र पुरस्कार ऐसे व्यक्तियों एवं संस्थाओं को प्रदान

किया जाता है जिन्होंने वनीकरण एवं बंजर भूमि विकास में विशेष योगदान दिया है। इस पुरस्कार को चार श्रेणियों में प्रदान किया जाता है जिसके अंतर्गत 2 लाख रुपये से 50 हजार रुपये तक का प्रावधान है।

(v) **मोदिनी पुरस्कार योजना:-** इस पुरस्कार को चार श्रेणियों में प्रदान किया जाता है। यह पुरस्कार पर्यावरण एवं उससे संबंधित विषयों, जिसके अंतर्गत वन्यजीव, जल संसाधन, संरक्षण आदि हैं, के कार्यों को प्रोत्साहन करने हेतु भारतीय लेखकों को प्रदान किया जाता है। यह पुरस्कार प्रतिवर्ष प्रदान किया जाता है।

(vi) **अमृता देवी विश्नोई वन्यजीव सुरक्षा पुरस्कार:-** इस पुरस्कार की आवंटित राशि 1 लाख रुपये की गई है। इस पुरस्कार को वन्यजीव सुरक्षा में शामिल व्यक्तियों या संस्थाओं को प्रदान किया जाता है।

(vii) **प्रदूषण निवारण के लिए राष्ट्रीय पुरस्कार:-** इस पुरस्कार के अंतर्गत एक प्रशस्ति, एक ट्रॉफी के साथ 1 लाख रुपये की राशि प्रदान की जाती है। इस पुरस्कार को पर्यावरण सुधार एवं प्रदूषण निवारक के लक्ष्यों की प्राप्ति तथा महत्त्वपूर्ण सतत् लक्ष्यों के साथ 18 बड़ी औद्योगिक इकाईयों तथा 5 लघु औद्योगिक इकाईयों को दिया जाता है। वर्ष 1992 में इस पुरस्कार की स्थापना की गई थी तथा यह प्रतिवर्ष जारी किया जाता है।

(viii) **डॉ. सलीम अली राष्ट्रीय वन्यजीव फेलोशिप पुरस्कार:-** यह पुरस्कार पर्यावरण और वन मंत्रालय के अंतर्गत जारी किया जाता है। इस पुरस्कार को देश की समृद्ध वन्यजीव धरोहर के विकास एवं संरक्षण पर लक्षित अनुसंधान परियोजनाओं पर कार्य करने हेतु वन्यजीव प्रबंधकों एवं वैज्ञानिकों को प्रदान किया जाता है। 1995-1996 में डॉ० सलीम अली राष्ट्रीय वन्यजीव फेलोशिप पुरस्कार शुरू किया गया है। डॉ. सलीम अली को 'बर्ड मैन ऑफ इंडिया' के नाम से जाना जाता है।

(ix) **स्वच्छ प्रौद्योगिकी हेतु राजीव गाँधी पर्यावरण पुरस्कार:-** इस पुरस्कार को पर्यावरण प्रदूषण कम करने हेतु कार्यरत नई औद्योगिक इकाईयों को प्रदान किया जाता है। इसके अंतर्गत ट्रॉफी, प्रशस्ति-पत्र के साथ 2 लाख रुपये तक की राशि शामिल है।

'किरिबाती' – एक डूबता देश

हाल ही में, किरिबाती द्वीप चर्चा का विषय रहा है। बढ़ते जलवायु परिवर्तन तथा समुद्र स्तर में वृद्धि के कारण यह द्वीप डूबने की कगार पर खड़ा है।

स्थिति

मध्य प्रशांत महासागर में भूमध्य रेखा तथा अंतर्राष्ट्रीय तिथि रेखा के क्रॉस बिन्दु पर स्थित एक द्वीप है जो 33 एटॉल और रीफ द्वीपों से मिलकर बना है जिसमें से 22 द्वीपों पर मानव रहते हैं।

द्वीप का इतिहास

किरिबाती लम्बे समय तक इंग्लैण्ड का उपनिवेश था जो वर्ष 1979 में आजाद हुआ। भारत और किरिबाती के राजनीतिक संबंध वर्ष 1985 से हैं। भारत सरकार ने वैश्विक मंच पर हमेशा किरिबाती का सहयोग किया है, वहीं अंतर्राष्ट्रीय मंच पर किरिबाती ने भी हमेशा भारत का साथ दिया है।

वर्तमान स्थिति

किरिबाती की 90 प्रतिशत जनसंख्या गिल्बर्ट द्वीप पर रहती है। संयुक्त राष्ट्र द्वारा किरिबाती द्वीप की अगले 30-40 वर्षों में डूबने की आशंका व्यक्त की गई है। लगातार बढ़ते भू-तापन के कारण समुद्र जलस्तर में वृद्धि होती जा रही है। इस स्थिति में किरिबाती जैसे छोटे द्वीपों के समक्ष अपने देश की जनसंख्या को विस्थापित करने का विकल्प ही बचा है। किरिबाती की सरकार अपने देश के लोगों को ऑस्ट्रेलिया और न्यूजीलैण्ड में विस्थापन करने हेतु मदद की माँग कर रही है। इस मामले में दोनों देशों की सरकारें किरिबाती की मदद भी कर रही हैं।

महत्त्व

क्रिसमस द्वीप के नाम से मशहूर किरिबाती द्वीप विश्व के मानचित्र में खोता जा रहा है। साथ ही, इसके भीतर पेरिस, इंग्लैण्ड, पोलैण्ड जैसे नाम का विलोपन भी हो रहा है। दरअसल, किरिबाती ने इन देशों से आये व्यक्तियों के सम्मान में अपने द्वीपों के नाम रखे हैं। एक द्वीप जिसने अन्य देशों के सम्मान में अपने देशों और द्वीपों का नाम रखा है आज वह उन्हीं देशों की गलतियों का हर्जाना भर रहा है।

पारिस्थितिकीय पदचिन्ह (Ecological Footprint)

यह एक वर्ष में पृथ्वी के भूमंडल एवं जलमंडल के जैविक उत्पादों द्वारा मनुष्य के किसी विशेष जीवन स्तर का पोषण करने की माप की गणना है। यह लगभग 200 देशों के लिए की जाती है। पारिस्थितिकीय पदचिन्ह की अवधारणा 1970 के दशक में की गई थी। यही कार्बन पदचिन्ह की संकल्पना का मुख्य आधार है।

वर्ष 2017 में 'अर्थ ओवर शूट डे' 1 अगस्त को था जबकि 2018 में यह 2 अगस्त को था। इसका अर्थ यह है कि मानव ने साल भर के प्राकृतिक संसाधनों को 8 महीनों में ही समाप्त कर दिया था अर्थात् हम 'अर्थ ओवर शूट डे' तक पहुँच गए हैं। इसका मतलब यह है कि हम संसाधनों का अधिक शोषण कर रहे हैं जो मानव हित में नहीं है।

Global Footprints विशेषज्ञों के अनुसार, वर्तमान माँग को पूरा करने के लिए हमें पृथ्वी के समान तीन अतिरिक्त ग्रहों की आवश्यकता है।

ग्रीन बिजली (Green Electricity)

ग्रीन बिजली से तात्पर्य ऐसी बिजली से है जिससे पर्यावरण को क्षति न के बराबर हो। पवन को सर्वप्रथम ग्रीन बिजली के रूप में प्रयोग किया गया है। इस तरह की बिजली नवीकरणीय संसाधनों से उत्पन्न की जाती है। उदाहरण-

- महासागरीय तापीय ऊर्जा।
- जल विद्युत।
- जलमग्न भूमि से उत्पन्न गैस।
- तरंग-ऊर्जा।
- सौर ऊर्जा।
- अपशिष्ट पदार्थ को जलाना।
- बायोमास।
- पवन ऊर्जा।
- भू-तापीय ऊर्जा।
- ज्वारीय ऊर्जा।

इस प्रकार की ऊर्जा से जैव ईंधन पर निर्भरता कम होती है। अत: इसमें पर्यावरण को क्षति की संभावना बहुत कम होती है।

IEA (International Energy Agency) के अनुसार, आने वाले 50 वर्षों में विश्व की बिजली का एक बड़ा भाग सौर ऊर्जा से प्राप्त होगा। अतिरिक्त गणना के अनुसार, विश्व के कुल विद्युत उत्पादन में 20 प्रतिशत नवीकरणीय संसाधनों से प्राप्त की जाती है। आने वाले वर्ष 2030 तक ऊर्जा का एक-तिहाई हिस्सा नवीकरणीय स्रोतों से प्राप्त होने की उम्मीद है।

तुवालू

तुवालू प्रशांत महासागर में हवाई द्वीप और ऑस्ट्रेलिया के बीच स्थित एक पोलिनेशियाई द्वीपीय देश है। इसके निकटम देशों में किरिबाती, समोआ और फिजी हैं। यह देश चार द्वीप एवं पाँच एटाल से मिलकर बना हुआ है। लगभग 12,500 लोगों के साथ यह विश्व का तीसरा कम जनसंख्या वाला देश है। इससे कम आबादी वाले देश 'वेटिकन' सिटी और 'नौरु' हैं। क्षेत्रफल की दृष्टि से लगभग 26 वर्ग कि.मी. के साथ दुनिया का चौथा सबसे छोटा देश है। केवल वेटिकन सिटी (0.44 वर्ग कि.मी.), मोनाको (1.95 वर्ग कि.मी.), और नौरू (21 वर्ग. कि.मी.) इससे छोटे हैं।

जलवायु परिवर्तन के चलते दुनिया का तीसरा सबसे छोटा देश तुवालू डूब रहा है। बढ़ते समुद्री जलस्तर के कारण यहाँ के लोगों का जीवन संकट में पड़ गया है। अत: इस देश ने मदद के लिए यूरोपियन देशों को गुहार लगाई है। समुद्री जल स्तर से सिर्फ 4 मीटर ऊपर एनेल ने कहा है कि दुनिया को बचाने के लिए हमें तुवालू को बचाना होगा।

यू.पी.एस.सी. मेन्स के विगत वर्षों में पूछे गए प्रश्न

1. पर्यावरणीय नैतिकता से क्या तात्पर्य है? इसका अध्ययन क्यों महत्त्वपूर्ण है? पर्यावरणीय नैतिकता के दृष्टिकोण से किसी एक पर्यावरणीय मसले पर चर्चा कीजिए। (IAS-2015)

अध्याय 16

महत्त्वपूर्ण पर्यावरणीय शब्दावलियाँ
Important Environmental Terminology

अजैव घटक या दशाएँ

एक पारितंत्र के निर्जीव घटक या परिस्थितियाँ जैसे कि प्राकृतिक संसाधन और वायुमंडलीय दशाएँ।

अनुकूलन

वास्तविक या अपेक्षित जलवायु उत्प्रेरकों या उनके प्रभावों की अनुक्रिया में प्राकृतिक या मानवीय तंत्रों के साथ सामंजस्य, ताकि हानि को कम किया जा सके या लाभकारी अवसरों का दोहन किया जा सके।

एजेंट ऑरेन्ज

सभी प्रकार की वनस्पतियों को समाप्त करने के लिए अमेरिकी सेना द्वारा वियतनाम युद्ध में प्रयुक्त किया गया एक शाकनाशक यौगिक।

कृषि वानिकी

भूमि के प्रयोग की एक प्रणाली जो उगने वाली फसलों को वृक्षों के साथ संयोजित करती है।

शैवाल ब्लूम

कुछ वर्णक समुद्री शैवालों का एक जनसंख्या विस्फोट जिसे महासागर पर रंग के एक नारंगी, लाल या भूरे आवरण के रूप में देखा जा सकता है।

विस्थानिक प्रजातिकरण

एक प्रजाति के दो बनने की प्रक्रिया जो कि भूमि पृथक्करण, पर्वत निर्माण, अप्रवासन, प्रवासन या मानवीय हस्तक्षेप जैसी भौगोलिक बाधाओं के निर्माण के कारण घटित होती हैं।

जलीय जीवन क्षेत्र

जैवमंडल का गैर-स्थलीय भाग जिसमें वेटलैंड, झीलें, नदियाँ, ज्वारनदमुख अंतर्ज्वारीय क्षेत्र, तटीय महासागर और खुला महासागर शामिल हैं।

एक्विफर

चट्टान या रेत की एक भूमिगत परत जिसमें पानी निहित होता है।

एस्बेस्टस

एक तंतु युक्त सिलीकेट खनिज जिसका प्रयोग निर्माण सामग्री और रोधन के रूप में किया जाता है। जब तंतुओं को श्वसन के द्वारा शरीर में ग्रहण किया जाता है तो यह स्वास्थ्य के लिए बहुत ही खतरनाक होता है।

स्वपोषी

हरे पादप या उत्पादक जो कि अपना भोजन खुद बनाते हैं।

पृष्ठभूमि विलोपन

प्राकृतिक या निम्नस्तरीय विलोपन की प्रक्रिया जो कि पर्यावरणीय दशाओं में होने वाले परिवर्तनों के कारण निरन्तर चलती रहती है।

बैरल

पेट्रोलियम के लिए संयुक्त राज्य अमेरिका में प्रयुक्त होने वाली मापन इकाई।

नितल क्षेत्र

महासागर की 200 मी. से लेकर 1500 मी. के बीच की गहराई में मौजूद मध्यस्तरीय क्षेत्र जहाँ धुंधला प्रकाश रहता है।

बेंथोस या नितल जीवसमूह

आधार तल पर रहने वाले जीव जो कि एक जल निकाय के तल पर रहने के लिए अनुकूलन स्थापित कर चुके हैं।

जैव-गहन कृषि

गहरे खुदे हुए संस्तरों का प्रयोग करके की जाने वाली गहन उद्यान खेती।

जैव अपक्षीणनीय कचरा

कोई भी ऐसा कचरा पदार्थ जो कि प्रकृति के कच्चे माल में विखंडित हो जाता है और एक नियत अवधि में पर्यावरण का भाग बन जाता है।

जैव-गतिक खेती

जैविक खेती का एक प्रकार जो कि रुडॉल्फ स्टीनर के विचारों के आधार पर जैविक और सौर आवर्तनों का दोहन करता है।

जैव ऊर्जा

बायोमास से निष्कर्षित की जाने वाली ऊर्जा।

जैव-उर्वरक

पादपों के लिए पोषक तत्वों की उपलब्धता और खुराक को बढ़ाने के लिए मृदा के सूक्ष्म जीवों का उपयोग।

जैव सुदृढ़ीकरण

वह प्रक्रिया जिसके द्वारा कृषिक पद्धतियों, परंपरागत पादप प्रजनन या आधुनिक जैव तकनीक का प्रयोग करके खाद्य फसलों की पोषणात्मक गुणवत्ता में सुधार किया जाता है।

जैव ईंधन

बायोमास को तरल ईंधन में परिवर्तित करके प्राप्त किया जाने वाला ईंधन।

बायोगैस

गाय के गोबर और वनस्पति अपशिष्ट जैसे जैविक पदार्थ के अवायवीय पाचन की प्रक्रिया से उत्पादित की जाने वाली गैस।

जैव-भूरासायनिक चक्र

जैविक, भू-गर्भिक और रासायनिक अंतर्क्रियाओं का एक चक्र जिसके द्वारा पदार्थ सामग्री पारितंत्रों में संचरण करती है। इस चक्र को प्रत्यक्ष या अप्रत्यक्ष रूप से सौर ऊर्जा द्वारा शक्ति प्राप्त होती है।

जैव सूचना विज्ञान

जैविक सूचनाओं के प्रबंधन हेतु सूचना तकनीक का अनुप्रयोग।

जैविक क्षमता

वर्तमान प्रबंधन योजनाओं और निष्कर्षण तकनीकों के अधीन मानवों द्वारा उत्पन्न अपशिष्ट सामग्री को अवशोषित करने तथा मानवों के द्वारा प्रयुक्त जैविक सामग्री को उत्पादित करने की पारितंत्रों की क्षमता।

बायोलॉजिकल ऑक्सीजन डिमांड (बीओडी)

जैविक कचरे को अपक्षयित करने के लिए सूक्ष्म जीवों द्वारा प्रयुक्त की जाने वाली ऑक्सीजन का मापन।

जैविक कीट नियंत्रण

कीटों पर नियंत्रण के लिए परभक्षियों, बीमारियों या परजीवियों का सोचा-समझा अनुप्रयोग।

जैव विवर्द्धन

खाद्य श्रृंखला में ऊपर बढ़ने के साथ-साथ जीवों में प्रदूषकों का बढ़ता हुआ संकेन्द्रण।

बायोमास गैसीयकरण

बायोमास का अपूर्ण दहन, जिसके परिणामस्वरूप दहनशील गैसें उत्पन्न होती हैं।

बायोम

एक विशिष्ट जलवायु तथा पादपों, जंतुओं व अन्य जीवों के विशिष्ट समुदाय वाला एक भू-प्रादेशिक और क्षेत्रीय पारितंत्र।

जैव-चिकित्सीय कचरा

मुख्यत: अस्पतालों और क्लीनिकों से उत्पन्न होने वाला कचरा जिसमें रक्त, बीमार अंग, जहरीली दवाएँ इत्यादि शामिल होती हैं।

जैव कीटनाशक

जंतुओं, पादपों, जीवाणुओं और सुनिश्चित खनिजों से प्राप्त किये जाने वाले कीटनाशक।

बायोपाइरेसी

बाहरी व्यक्तियों द्वारा जैवविविधता के परंपरागत ज्ञान का उपयोग करना जिसमें लाभ के लिए जैविक संसाधनों का धोखाधड़ी पूर्ण पेटेंट कराना शामिल है।

जैव उपचार

कचरे और विषैले प्रदूषक तत्वों को साफ करने के लिए जैव तकनीक का प्रयोग।

जैवमंडल आरक्षित क्षेत्र

पारितंत्र के संरक्षण और परिरक्षण को समर्थन देने के लिए विधि द्वारा संरक्षित भू या जल क्षेत्र।

जैवमंडल

पृथ्वी का वह भाग जहाँ जीवन का अस्तित्व है।

बायोटा

एक पारितंत्र का सजीव घटक जिसे जैविक समुदाय भी कहा जाता है। जैविक समुदाय में पौधे, जंतु और सूक्ष्म जीव शामिल होते हैं।

जैव तकनीक

एक उत्पाद या एक प्रभाव को निर्मित करने के लिए जीवों या कोशिकाओं का हस्तप्रबंधन करने की तकनीक।

जैविक घटक

एक पारितंत्र के सजीव घटक।

बॉटम ट्रॉलिंग

सागर तल पर जाल बिछाकर मछलियाँ पकड़ने का एक तरीका।

ब्रेंट क्रूड

मीठा और हल्का कच्चा तेल जो कि विश्वव्यापी स्तर पर तेल की खरीद के लिए प्रमुख निर्धारण मूल्य के रूप में कार्य करता है।

बंकर फ्यूल

अंतर्राष्ट्रीय समुद्री और वायु परिवहन के लिए खपत किया जाने वाला ईंधन।

कैनोपी

संलग्न वृक्षों के सिरों द्वारा सामूहिक रूप से निर्मित शाखाओं और पर्णिकाओं का एक छोटा या बड़ा सतत् आवरण।

कार्बन अधिग्रहण

वायुमंडल से कार्बन को हटाने तथा एक जलाशय में उसे निक्षेपित करने की प्रक्रिया।

वहन क्षमता

एक प्रजाति के सदस्यों की वह अधिकतम संख्या जो कि एक क्षेत्र के संसाधनों को अनिश्चित काल तक बनाये रखने के लिए जरूरी होती है और उन संसाधनों का महत्त्वपूर्ण रूप से रिक्तिकरण या अपक्षीणन नहीं होता है।

कोशिका श्वसन

वह प्रक्रिया जिसमें ग्लूकोज के अणु पानी और ऑक्सीजन के साथ मिलकर ऊर्जा निर्मुक्त करते हैं और कार्बन डाईऑक्साइड एवं पानी का निर्माण करते हैं।

चरम पारितंत्र

ऐसा पारितंत्र जो एक स्थिर दशा तक पहुँच चुका है।

सहभोजिता

दो प्रजातियों के बीच एक सहजीवी संबंध जिसमें एक प्रजाति संबंध से लाभ उठाती है और दूसरी प्रजाति न तो लाभान्वित होती है और न ही नुकसान उठाती है।

कॉमन ईफ्लूएंट ट्रीटमेंट प्लांट (सीईटीपी)

एक साझा संयंत्र जहाँ एक औद्योगिक क्षेत्र की कई सारी इकाईयों का कचरा एकत्र किया जाता है और उसे सुरक्षित रूप से उपचारित किया जाता है।

समुदाय

एक दिये गये समय में, एक दिये गये क्षेत्र में रहने वाली और परस्पर अंतर्क्रिया करने वाली अलग-अलग प्रजातियों (पादप, जंतु और सूक्ष्म जीव) की जनसंख्याएँ।

सम्मिश्रण या कम्पोस्टिंग

जैविक कचरे को उर्वरक में बदलने की प्रक्रिया।

शंकुवृक्ष

ऐसे वृक्ष जहाँ बीज एक शंकु में उत्पन्न होते हैं।

शंकुधारी वन

वन का एक ऐसा प्रकार जहाँ कर, पाइन, हेमलॉक, स्प्रूस जैसे शंकुधारी वृक्षों की प्रचुरता होती है।

महाद्वीपीय शेल्फ

तटीय क्षेत्र के छोर पर महाद्वीप का जलमग्न भाग जहाँ जल की गहराई में एक तीक्ष्ण वृद्धि होती है।

कोरल रीफ

पॉलिप्स नामक सूक्ष्म जीवों के उपनिवेशों द्वारा निर्मित चूना-पत्थर की रंगीन सुरक्षात्मक पपटी।

गंभीर रूप से संकटग्रस्त प्रजातियाँ

एक ऐसी संकटग्रस्त प्रजाति जो कि वन्य जीवन में विलुप्ति के अत्यधिक उच्च जोखिम का सामना कर रही है।

क्रूड जन्मदर

एक दिये गये वर्ष में एक जनसंख्या में प्रति 1000 लोगों पर जीवित जन्मों की संख्या।

क्रूड मृत्युदर

एक दिये गये वर्ष में एक जनसंख्या में प्रति 1000 लोगों पर मौतों की संख्या।

डीडीटी (डाइक्लोरो-डाइफेनॉल-ट्राइक्लोरोएथीन)

एक विषैला कीटनाशक जो कि कीटों से फसलों और इंसानों की सुरक्षा करता है।

डेसीबल (डीबी)

ध्वनि की तीव्रता को मापने का एक लघुगणकीय पैमाना।

पर्णपाती वृक्ष

ऐसे वृक्ष जिनकी सारी पत्तियां शीतकाल के दौरान झड़ जाती हैं।

अपघटक

एक जीव जो कि मृत जीवों तथा जीवों के अपशिष्ट को विखंडित करता है और उनका पाचन करता है।

जनसांख्यिकीय विभाजन

एक देश की जनसंख्या की आयु संरचना में होने वाले बदलावों के परिणामस्वरूप होने वाली तीव्र आर्थिक वृद्धि।

डाईऑक्सिन

एक अति विषैला रासायनिक यौगिक जो कि कई औद्योगिक प्रक्रियाओं और उत्पादों में संदूषक के रूप में उत्पन्न होता है। यह कचरे, प्लास्टिक, कोयला या सिगरेट को जलाने पर भी निर्मित होता है।

ईको-लेबल

इस लेबल का प्रयोग एक उपभोक्ता उत्पाद को चिन्हित करने के लिए किया जाता है और इसके द्वारा यह संकेत दिया जाता है कि वह उत्पाद अपने विनिर्माण और प्रयोग के संबंध में पर्यावरणीय रूप से अनुकूल है।

ईको-मार्क

पर्यावरण अनुकूल उत्पादों की सुगम पहचान के लिए भारत सरकार द्वारा स्थापित ईको-लेबल।

पर्यावरण-संवेदी क्षेत्र (ईएसजेड)

एक संरक्षित के चारों ओर फैला परिधीय क्षेत्र जिसे पारिस्थितिकीय रूप से नाजुक माना जाता है और यहाँ कुछ मानवीय गतिविधियों को विनियमित करना अनिवार्य माना जाता है।

पारिस्थितिकीय वास्तुशिल्प

ऐसा वास्तुशिल्प जिसमें घर, इमारत या परिसर के पारिस्थितिकीय फुटप्रिंट को न्यूनतम रखने पर जोर दिया जाता है।

पारिस्थितिकीय संतुलन

एक पारितंत्र के जीव समुदाय और अजैविक परिस्थितियों के बीच का सूक्ष्म संतुलन, जिसके कारण वह पारितंत्र स्थिर बना रहता है और अपने सारे जीवों को उत्तरजीविता के साधन और समृद्धि प्रदान करता है।

पारिस्थितिकीय विलोपन

एक प्रजाति की वह दशा जब उसके इतने कम सदस्य बचे रह पाते हैं कि वह प्रजाति समुदाय में अपनी सामान्य पारिस्थितिकीय भूमिका को निभाने में असमर्थ हो जाती है।

पारिस्थितिकीय फुटप्रिंट

एक जीव सत्ता के पारिस्थितिकीय प्रभाव का मापन जो कि उस सत्ता के पूर्ण संवहन हेतु जरूरी भूमि के विस्तार के रूप में व्यक्त किया जाता है।

पारिस्थितिकीय आला

वे सभी भौतिक, रासायनिक और जैविक कारक जो कि एक प्रजाति को जीवित रखने और उसके पुनर्जनन हेतु जरूरी होते हैं।

पारिस्थितिकीय पिरामिड

परिवर्तन का एक आरेखीय निदर्शन जो कि एक खाद्य श्रृंखला में एक पोषी स्तर से अगले पोषी स्तर तक बढ़ने में दिखाई देता है।

पारिस्थितिकीय स्वच्छता (ईकोसैन)

एक संवहनीय बन्द लूप सफाई प्रणाली जिसमें शुष्क कम्पोस्टिंग टॉयलेट का प्रयोग होता है।

पारिस्थितिकीय उत्तराधिकार

एक दिये गये क्षेत्र में एक जीव समुदाय के दूसरे जीव समुदाय में संक्रमण करने की क्रमिक प्रक्रिया।

पारिस्थितिकीय विज्ञानी या ईकोलॉजिस्ट

पारिस्थितिकी के क्षेत्र में कार्य करने वाला एक वैज्ञानिक।

पारिस्थितिकी

जीवों और उनके पर्यावरण के बीच अन्तर्क्रियाओं और संबंधों का अध्ययन।

पारितंत्र

एक परिभाषित क्षेत्र जिसमें एक समुदाय (प्रजातियों की अपनी जनसंख्याओं के साथ) का अस्तित्व होता है, जो कि जीवों तथा उनके समुदायों एवं उनके अजीव भौतिक पर्यावरण के बीच अन्तर्क्रियाओं द्वारा प्रकट होता है।

पारितंत्रीय सेवा

एक पारितंत्र के द्वारा उपलब्ध करायी जाने वाली पारिस्थितिकी सेवा जैसे कि जैव भू-रासायनिक चक्रों को बनाये रखना, जलवायु का संशोधन, कचरा निपटान और विषहरण तथा कीटों व बीमारियों का नियंत्रण इत्यादि।

ईकोटोन

निकटस्थ पारितंत्रों के बीच का संक्रमण क्षेत्र।

छोर प्रभाव

एक ईकोटोन में पायी जाने वाली समृद्ध और अद्वितीय जैव विविधता की मौजूदगी।

संकटग्रस्त प्रजातियाँ

वन्य जीवन में विलोपन के अति-उच्च जोखिम का सामना कर रही संकटापन्न प्रजातियाँ।

स्थनज प्रजातियाँ

एक ऐसी प्रजाति जो कि केवल एक विशिष्ट भौगोलिक स्थान पर ही पायी जाती है और जो अन्य कहीं भी नहीं पायी जाती है।

एंडोसल्फान

एक अति विषैला कीटनाशक, जिसका प्रयोग कीटों के आक्रमण से कई फसलों की सुरक्षा हेतु किया जाता है।

पर्यावरणीय अपक्षीणन

मानवीय गतिविधियों और अन्य कारणों से प्राकृतिक पर्यावरण को होने वाले नुकसान के लिए यह शब्द प्रयुक्त किया जाता है।

पर्यावरणीय शिक्षा

एक ऐसा विषय जो कि सारे पर्यावरणीय मुद्दों से सरोकार रखता है जिसमें सामाजिक पहलू भी शामिल हैं।

पर्यावरणीय नीतिगत आचार

ऐसे नैतिक सिद्धान्त जो कि पर्यावरण के प्रति हमारी जिम्मेदारी को परिभाषित करने का प्रयास करते हैं।

पर्यावरणीय स्वास्थ्य

मानवीय स्वास्थ्य के वे पहलू जो कि पर्यावरण में मौजूद भौतिक, रासायनिक, जैविक, सामाजिक और मनोवैज्ञानिक कारकों के द्वारा निर्धारित होते हैं।

पर्यावरणीय प्रभाव मूल्यांकन (ईआईए)

प्राकृतिक और सामाजिक पर्यावरण पर एक नयी परियोजना के संभावित दीर्घकालिक और अल्पकालिक प्रभाव का अध्ययन।

पर्यावरणीय शरणार्थी

एक ऐसा व्यक्ति जो कि पर्यावरण के अपक्षीणन या एक विकास परियोजना के कारण विस्थापित किया गया है।

पर्यावरण विज्ञान

हमारे पर्यावरण और इसमें हमारी भूमिका का व्यवस्थित और वैज्ञानिक अध्ययन।

पर्यावरणीय स्थिरता

संतुलन की एक अवस्था में प्राकृतिक प्रक्रियाओं को बनाये रखना। वनों के द्वारा पर्यावरणीय स्थिरता में योगदान दिया जाता है।

पर्यावरणीय अध्ययन

अध्ययन की वह शाखा जो कि पर्यावरणीय मुद्दों तथा पर्यावरण के सामाजिक पहलुओं से सरोकार रखती है।

पर्यावरणवादी

एक व्यक्ति जो कि पर्यावरण के संरक्षण में सहायता करता है।

एपीफाइट

एक ऐसा पौधा जो कि अपनी नमी और पोषकतत्वों को हवा और वर्षा से प्राप्त करता है और सामान्यत: किसी दूसरे पौधे पर उगता है।

यूफोटिक क्षेत्र

खुले महासागर का ऊपरी भाग जहाँ पादप प्लवकों के लिए पर्याप्त प्रकाश उपलब्ध होता है जिसके कारण वे प्रकाश-संश्लेषण की क्रिया को संपन्न करते हैं।

यूट्रोफिकेशन

नाइट्रोजन या फॉस्फेरस जैसे रासायनिक पोषक तत्वों का मृदा या किसी ठहरे हुए जल निकाय में अत्यधिक मिश्रित होना जिसके कारण कुछ प्रजातियों की अत्यधिक वृद्धि को प्रोत्साहन मिलता है और कई अन्य प्रजातियाँ नष्ट हो जाती हैं।

सदाबहार वृक्ष

ऐसा पेड़ जो कि अपनी पत्तियों को पूरे वर्ष और वर्षों तक धारण किए रहता है।

ई-कचरा

निष्प्रयोज्य विद्युत और इलेक्ट्रॉनिक उपकरणों से इकट्ठा होने वाला कचरा।

एक्स-सीटू संरक्षण

इसके अंतर्गत एक प्रजाति को उसके प्राकृतिक वास से दूर स्थित एक स्थान पर परिरक्षित और संरक्षित करने का प्रयास किया जाता है।

विदेशज प्रजातियां

एक वृक्ष प्रजाति जो कि एक अलग स्थान से लाकर रोपित की जाती है।

चर-घातांकी वृद्धि

एक परिमाण में समय के साथ एक ऐसे तरीके से होने वाली वृद्धि, जो शुरूआत में वक्र को सापेक्षिक रूप से सपाट दर्शाती है किंतु समय के साथ-साथ वक्र गहरा होता चला जाता है।

विलुप्त प्रजातियां

एक ज्ञात प्रजाति जिसका कोई भी सदस्य पृथ्वी पर कहीं नहीं पाया जाता है।

निष्कर्षित आरक्षित क्षेत्र

ऐसे संरक्षित वन जिनमें स्थानीय समुदायों को उन तरीकों से गैर-इमारती उत्पादों का दोहन करने की अनुमति दी जाती है, जिनसे वन को हानि न पहुँचे।

फौना

वे सभी जन्तु जो कि एक समयावधि या पर्यावरण के भीतर एक विशिष्ट क्षेत्र में रहते हैं।

फ्लोरा

एक विशिष्ट क्षेत्र, समयावधि या पर्यावरण में रहने वाले सभी पादप।

फ्लूरोसिस

फ्लूराइड की अत्यधिक खुराक से पैदा होने वाली एक बीमारी।

खाद्य श्रृंखला

प्रजातियों का एक अनुक्रम जिसमें प्रत्येक प्रजाति श्रृंखला में मौजूद अगली प्रजाति के लिए भोजन होती है।

खाद्य जाल

खाद्य श्रृंखलाओं का एक अंतर्संयोजी समुच्चय।

वन प्रमाणीकरण

वनों को प्रमाणित करने की एक प्रणाली जो कि संवहनीय प्रबंधन तरीकों को अंगीकार करती है।

जीवाश्म ईंधन

उन जीवों के अवशेष जो कि 200-500 मिलियन वर्ष पहले रहते थे और जिन्हें ऊष्मा और दाब के द्वारा कोयला, तेल और प्राकृतिक गैस में बदल दिया गया था।

ईंधन सेल

एक विद्युत रासायनिक यूनिट जो कि हाइड्रोजन और ऑक्सीजन से बिजली पैदा करती है।

जीन अभियांत्रिकी

एक जीव की लाक्षणिक विशेषताओं को बदलने के लिए उसके जीनों में किया जाने वाला हस्तक्षेपकारी परिवर्तन। उदाहरण के लिए, एक जीव के अनुकूल जीन को किसी दूसरे जीव में डालना।

आनुवांशिक संशोधन (जीएम)

जीव के जीन समूह में बाहरी जीनों को प्रविष्ट करके एक जीव की आनुवांशिक संरचना का प्रत्यक्ष संशोधन करना।

आनुवांशिक रूप से संशोधित खाद्य (जीएम फूड)

आनुवांशिक रूप से संशोधित जीवों से भोजन प्राप्त करना। इन जीवों के डीएनए में आनुवांशिक अभियांत्रिकी के द्वारा विशिष्ट बदलाव किये जाते हैं।

जीनोमिक्स

आनुवांशिकी का एक अनुशासन जिसमें जैव तकनीक का अनुप्रयोग जीनोम की संरचना और कार्य को क्रमबद्ध, समूहबद्ध और विश्लेषित करने के लिए किया जाता है।

हरित आजीविका

प्राकृतिक संसाधनों पर आधारित उत्पादक और सहनीय आजीविकाएँ।

हरित क्रांति

कृषि की एक पद्धति जो कि नयी बीज किस्मों, रासायनिक उर्वरकों की भारी मात्रा, कीटनाशकों और पानी का प्रयोग करके फसल उत्पादन में अत्यधिक वृद्धि लाती है।

सकल विश्व उत्पाद

विश्व में निर्मित उत्पादों और प्रस्तुत की जाने वाली सेवाओं का कुल मूल्य।

पर्यावास विखंडन

एक ऐसी प्रक्रिया जिसके द्वारा मानवीय प्रभाव के कारण प्रजाति पर्यावासों का विस्तार कम होता है या पृथक खंडों के रूप में पर्यावास विभाजित हो जाते हैं।

पर्यावास

एक ऐसा क्षेत्र जहाँ एक प्रजाति जीवित रहने के लिए जीव वैज्ञानिक रूप से अनुकूलन स्थापित कर लेती है।

हरीकेन

उग्र तूफान जो कि अति शक्तिशाली पवनों के द्वारा पश्चिमी अटलांटिक महासागर को मुख्य रूप से प्रभावित करता है।

प्रगति का विचार

यह विश्वास कि मानव जाति आर्थिक और औद्योगिक विकास के माध्यम से प्राकृतिक संसाधनों का दोहन करते हुए एक बेहतर जीवन और बेहतर भौतिक परिस्थितियों की दिशा में एक अबाधित मार्ग पर आगे बढ़ेगी।

इन-सीटू संरक्षा

इसके अंतर्गत एक प्रजाति को उसके प्राकृतिक पर्यावास के भीतर ही संरक्षित करने का प्रयास किया जाता है।

संकेतक प्रजाति

एक प्रजाति जिसकी उपस्थिति, अनुपस्थिति और प्रचुरता एक विशिष्ट पर्यावरणीय दशा को प्रतिबिम्बित करती है।

अन्तर्ज्वारीय क्षेत्र

उच्च और निम्न ज्वारों के बीच तट रेखा का क्षेत्र। यह स्थल और महासागर के बीच का संक्रमण क्षेत्र होता है।

आक्रामक प्रजाति

कोई भी ऐसी पादप, कवक या जन्तु प्रजाति जो कि अपने मूल स्थान से भिन्न किसी दूसरे स्थान में प्रवेश या अतिक्रमण करती है।

स्थानीय विलोपन

एक प्रजाति की वह अवस्था जब यह प्रजाति अपने स्थानीय प्राकृतिक वास में नहीं पायी जाती है। हालांकि यह विश्व में किसी और स्थान पर मौजूद होती है।

मैंग्रोव

एक अद्वितीय लवण सहनशील वृक्ष जिसकी आपस में गुथी हुई जड़ें छिछले समुद्री अवसादों में उगती हैं।

समुद्री संरक्षित क्षेत्र (एमपीए)

एक समुद्री पारितंत्र और उसकी प्राकृतिक प्रक्रियाओं, पर्यावासों और प्रजातियों को संरक्षित करने के लिए एक देश द्वारा गठित क्षेत्र।

समुद्री उपरि-प्रवाह

महासागर में जल के प्रतिस्थापन की एक प्रक्रिया जिसमें शक्तिशाली पवनें पानी को हटा देती हैं जिससे नीचे का ठंडा पानी सतह पर आ जाता है जो कि पोषक तत्वों से समृद्ध होता है।

मिथाइल आइसोसाइनेट (एमआईसी)

कीटनाशकों के विनिर्माण में प्रयुक्त होने वाला अति विषैला रसायन।

मॉंटेन

पर्वतीय क्षेत्रों में पायी जाने वाली या उगायी जाने वाली वनस्पति।

नेक्टन

महासागर के मजबूत तैराक जिनमें व्हेल, मछली और कछुए जैसे सभी बड़े जीव शामिल हैं।

शुद्ध ऊर्जा प्राप्ति

उच्च गुणवत्ता वाली ऊर्जा की वह प्रयोज्य मात्रा जो कि एक ऊर्जा स्रोत से निष्कर्षित की जा सकती है।

निम्बी (नॉट इन माई बैक यार्ड) सिंड्रोम

किसी ऐसी चीज पर आपत्ति उठाने की प्रवृत्ति जो किसी एक व्यक्ति को ही प्रभावित करेगी या एक ही व्यक्ति की स्थानीयता में सीमित रहेगी। हालांकि इससे कई दूसरे लोग भी लाभान्वित होते हों।

गैर-नवीकरणीय ऊर्जा स्रोत

एक ऊर्जा स्रोत जो कि आपूर्ति में सीमित होता है और उपयोग करने पर खाली हो जाता है।

ओवरशूट

एक पारितंत्र का उसकी नवीकरण क्षमता से अधिक दोहन करने का परिणाम।

ओजोन रिक्तिकरण संभावना (ओडीपी)

एक पदार्थ के द्वारा किये जाने वाले ओजोन परत के रिक्तीकरण की मात्रा।

परजीविता

दो प्रजातियों के बीच का सहजीवी संबंध जिसमें एक परजीवी प्रजाति दूसरी मेजबान प्रजाति की कीमत पर लाभान्वित होती है।

पीसीबी (पॉलीक्लोरीनेटेड बाईफिनाइल)

ऐसे विषैले गसायनिक यौगिकों का समूह जो कि बहुत ही स्थिर होते हैं, अच्छे रोधक होने के कारण अग्निरोधक के रूप में आते हैं और जिनकी विद्युत चालकता निम्न होती है।

पीक ऑयल

किसी विचाराधीन क्षेत्र में तेल के उत्पादन की अधिकतम दर जो इस बात को मान्यता देती है कि यह एक सीमित प्राकृतिक संसाधन है जो कि लगातार खाली होता है।

पर्माकल्चर

जानबूझकर डिजाइन की गयी स्थलाकृतियाँ जो कि प्रकृति में पाये जाने वाले प्रतिरूपों और संबंधों की नकल करती हैं और इनके द्वारा स्थानीय जरूरतों के लिए प्रचुर मात्रा में भोजन, फाइबर और ऊर्जा प्राप्त की जाती है।

सतत् जैविक प्रदूषक (पीओपी)

सतत् विषैले रसायनों का एक समूह जो कि एक जीव में संचित हो सकता है और जो उनके स्रोत से अलग स्थित दूरवर्ती स्थलों को भी प्रदूषित कर सकता है।

प्रकाश-रासायनिक धुंध

सूर्य प्रकाश, बिना जले हुए हाइड्रोकार्बन, ओजोन और अन्य प्रदूषकों के बीच की रासायनिक अभिक्रियाओं द्वारा निर्मित होने वाले बाहरी वायु प्रदूषण का एक रूप।

प्रकाश संश्लेषण

वह प्रक्रिया जिसमें हरित पादप वायुमंडल से कार्बन-डाईऑक्साइड, मिट्टी से पानी और सूर्य से ऊर्जा लेकर अपना भोजन बनाते हैं।

फोटोवोल्टाइक (पीवी) सेल

एक डिवाइस जो सौर ऊर्जा को प्रत्यक्ष रूप से विद्युत में बदल देती है।

पादप प्लवक

प्रकाश-संश्लेषी उत्पादक जो कि महासागर के खाद्य जाल का आधार निर्मित करते हैं।

अग्रवर्ती प्रजातियाँ

ऐसी कठोर प्रजातियाँ जो पहले से बाधित या क्षतिग्रस्त पारितंत्र को पहली बार उपनिवेशित करती हैं।

ग्रहीय सीमाएं

कुछ सुनिश्चित प्रक्रियाओं के लिए तय सीमाएं जो पार्थिवतंत्र की स्थिरता और समोत्थान क्षमता को नियमित करती हैं।

प्लवक

मुक्त रूप से उत्प्लावित सूक्ष्म जीव जो कि आसानी से तैर नहीं सकते हैं और तरंगों एवं धाराओं के द्वारा इधर से उधर धकेले जाते हैं।

पॉलिप

सूक्ष्म जीव जो प्रवाल का निर्माण करते हैं।

प्राथमिक वायु प्रदूषक

ऐसे हानिकारक रसायन जो कि एक स्रोत से सीधे वायुमंडल में निर्मुक्त किये जाते हैं।

प्राथमिक वन या पुरावृद्धि वन

मूलभूत वृक्ष प्रजातियों का वन जहाँ मानवीय गतिविधियों का कोई प्रभाव नहीं पड़ा है और पारिस्थितिकीय संतुलन अबाधित रहा है।

संरक्षित क्षेत्र

वह क्षेत्र जिसमें जैवविविधता और वन्य जीवन को मानवीय दोहन से संबंधित किया जाता है। उदाहरण- राष्ट्रीय उद्यान, अभ्यारण्य और जैवमंडल आरक्षित क्षेत्र।

बायोमास के पिरामिड

एक पोषी स्तर से अगले पोषी स्तर की ओर बढ़ने पर जीवों के बायोमास में होने वाले घटाव को दर्शाने वाला एक आरेख।

गोचर भूमि

वह भूमि जो कि फसल उत्पादन के लिए उपयुक्त नहीं होती है और इसका प्रयोग पशुओं द्वारा चारण के लिए किया जाता है।

नवीकरणीय ऊर्जा स्रोत

एक ऊर्जा स्रोत जो कि प्राकृतिक प्रक्रिया के द्वारा पुन: संभरित होता है और इसलिए इसका प्रयोग असीमित काल तक किया जा सकता है।

रिक्टर पैमाना

भूकम्प की तीव्रता को मापने का एक पैमाना। यह निर्मुक्त ऊर्जा की मात्रा को मापता है और एक सीस्मोग्राफ में स्पंदनों के द्वारा इसे संकेतित किया जाता है।